॥ मंगलमूरति सुखसदन, ऋद्धिसिद्धिदातार । द्विजज्वालाप्रसाद पर, रीझहु नंदकुमार ॥१॥

श्रीगणेशायनमः ॥ ॥ श्रीमद्वेङ्कटेशायनमः ॥ ॥ नारायणंनमस्कृत्यनरंचैवनरोत्तमम् ॥ देवींसरस्वतींव्या
संततोजयमुदीरयेत् ॥ १ ॥ ॥ ऋषयऊचुः ॥ ॥ सूतसूतमहाभागत्वयालोकहितैषिणा ॥ कथितंकार्तिका
ख्यानंभुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥ २ ॥ अधुनामाघमाहात्म्यंवदनोलोमहर्षणे ॥ श्रुतेनयेनलोकानांसंशयःक्षीय
तेमहान् ॥ ३ ॥ पुराकेनमहाभागलोकेस्मिन्संप्रकाशितम् ॥ माघस्नानस्य माहात्म्यंसेतिहासंतदादिश ॥४॥
॥ सूतउवाच ॥ ॥ साधुसाधुमुनिश्रेष्ठायूयंकृष्णपरायणाः ॥ यत्पृच्छथमुदायुक्ताभक्त्याकृष्णकथामुहुः ॥५॥
कथयिष्यामिमाघस्यमाहात्म्यंपुण्यवर्धनम् ॥ पापघ्नंशृण्वतांपुंसांस्नातानांचारुणोदये ॥ ६ ॥ एकदापार्वती
विप्राःशंकरंलोकशंकरम् ॥ पप्रच्छविनयोपेतास्पृष्ट्वातच्चरणांबुजम् ॥ ७ ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॥ नारायण नरोत्तम नर देवी सरस्वती और व्यासजीको प्रणाम कर जयनामक ग्रंथका उच्चारण करना चाहिये ॥ १ ॥ ऋषि बोले हे महाभाग सूतजी ! आपने लोकोंके मंगलके निमित्त भुक्ति मुक्तिका देनेवाला कार्तिकाख्यान वर्णन किया ॥ २ ॥ हे लोमहर्षण ! अब आप हमसे माघस्नानका माहात्म्य वर्णन कीजिये, जिसके सुननेसे लोकोंका महान् संदेह दूर होता है ॥ ३ ॥ हे महाभाग ! लोकमें प्रथम किसने इसको प्रकाशित किया, इतिहास सहित माघस्नानका माहात्म्य कहो ॥ ४ ॥ सूतजी बोले हे मुनियों ! तुम धन्य और कृष्णपरायण हो, जो प्रेमभक्तिसे तुम वारंवार कृष्णकी कथा पूँछते हो ॥ ५ ॥ पुण्यका बढानेवाला माघस्नानमाहात्म्य कहताहूं, जो श्रवण करनेसे अरुणोदयमें स्नान करनेवाले पुरुषोंका पाप दूर करता है ॥ ६ ॥ हे ब्राह्मण ! एक समय लोकके आनंद करनेवाले शंकरके

चरणोंको स्पर्शकर विनययुक्त हो पार्वती पूंछने लगी ॥ ७ ॥ पार्वती बोली हे देवदेव महादेव भक्तोंको अभय देनेवाले स्वामिन् विश्वपति प्रसन्न हूजिये, जो मैं पूंछती हूँ सो कहियें ॥ ८ ॥ हे प्रभो ! पूर्वमें मैंने आपसे अनेक धर्म सुने हैं, अब माघके स्नानका माहात्म्य सुननेकी इच्छा करतीहूं सो आप मुझसे कहिये ॥ ९ ॥ यह पहले किसने किया, इसकी विधि और देवता क्या है, वह सब विस्तारसे कहो कारण कि तुम भक्तवत्सल हो ॥ १० ॥ शंकर बोले यज्ञान्त अवभृथ स्नानकर ऋषियोंसे मंगलाचारको प्राप्त

॥ पार्वत्युवाच ॥ ॥ देवदेवमहादेवभक्तानामभयप्रद ॥ प्रसीदनाथविश्वेशयत्पृच्छेतद्वदाधुना ॥८॥ श्रुतानाना विधाधर्मास्त्वत्तः पूर्वमयाविभो ॥ अधुनाश्रोतुमिच्छामिमाहात्म्यंमाघजंवद ॥ ९ ॥ तत्तुकेनपुराचीर्णंकोविधिःकाचदेवता ॥ तत्सर्वंविस्तराद्ब्रूहियतस्त्वंभक्तवत्सलः ॥ १० ॥ ॥ महेशउवाच ॥ ॥ अध्वराऽवभृथस्नातऋषिभिःकृतमंगलः ॥ पूजितोनागरैःसर्वैःस्वपुरान्निर्गतो बहिः ॥ ११ ॥ दिलीपोभूभृतांश्रेष्ठोमृगयारसिकोनृपः ॥ कौतूहलसमाविष्टआखेटव्यूहसंवृतः ॥ १२ ॥ उपानद्गूढपादस्तुनीलोष्णीपउरच्छदी ॥ बद्धगोधांगुलित्राणोधनुष्पाणिःसरीसृपः ॥ १३ ॥ बद्धक्षुद्रासिधानुष्कैस्तथाभूतैश्चपत्तिभिः ॥ गांधारेषुसुरम्येषुवनेषुविपुलेषुच ॥ १४ ॥

हो अपने नगरवासियोंसे पूजित हो नगरके बाहर निकल ॥ ११ ॥ राजोंमें श्रेष्ठ मृगया खेलनेमें रसिक राजा दिलीप, कौतूहलको प्राप्त हो सिकारकी सामग्री लिये ॥ १२ ॥ चरणोंमें जूता पहरे नील पगडी बांधे बख्तर धारे अंगुलीमें गोधाचर्म बांधे, धनुष धारण कर चलता हुआ ॥ १३ ॥ क्षुद्र तलवार धनुषधारी प्यादोंको साथ लिये मनोहर वन उपवनमें विचरते ॥ १४ ॥

१ कांतारेषु–इ० पा० ।

सिंहकी समान विक्रमी अनेक नदीसरोवरोंको उल्लंघन करते कुंजोंमें मृगोंको ढूंढते उनके साथ क्रीडा करते थे॥ १५॥ मारो मारो यह मृग भागा जाताहै ऐसा २ अपने भृत्योंके कहने पर यह स्वयं जाकर उसको मारता ॥ १६॥ फिर इधर उधर जाते तभी वनस्थलीको देखता कहीं पेडों पर उड उडकर मोरोंको बैठता हुआ देखता ॥ १७ ॥ कहीं हरिणी जनोंके समूहसे वित्रस्त होते हैं हरिणोंके बचे दिशाओंमें धावमान होते हैं कहीं गीदडोंकी फेत्कार और ऊंचेस्वरसे भयंकर शब्द करना ॥ १८ ॥ कहीं खड्गजातिवाले मृगोंके

उल्लंघितमहास्रोताग्युवापंचास्यविक्रमः ॥ मुदाक्रीडतितैःसार्द्धंकुंजेषुमृगयन्मृगान्॥ १५॥ हन्यतांहन्यतामेष
मृगोवैपपलायते ॥ इतिजल्पन्स्वभृत्येषुस्वयमुत्पत्यहंतिच ॥ १६ ॥ इतस्ततः पुनर्यातिक्वचित्पश्यन्वनस्थ
लीम् ॥ विटपोड्डीनसंत्रस्तलीनकेकिकुलाकुलाम् ॥ १७ ॥ हरिणीगणवित्रस्तांधावच्छावकादिङ्मुखाम् ॥
क्वचित्फेरवफेत्कारताराराववि‌भीषणाम् ॥ १८॥ खड्गयूथैः क्वचिल्लक्ष्मीं दधानामिवदंतिनाम् ॥ क्वचित्को
टरसंदष्टोलूकनादविनादिनीम् ॥ १९ ॥ मृगारिपदमुद्राभिर्मुद्रितांचक्वचित्क्वचित् ॥ शार्दूलनखनिर्भिन्नरो
हिद्रक्तारुणांक्वचित् ॥ २० ॥ पीवरस्तनभारार्तसुस्निग्धमहिषीगणैः ॥ अवरोधाजिरक्षोणीं सूचयंतींमनः
क्वचित् ॥ २१ ॥ क्वचिद्वृक्षघनच्छन्नांवन्यपुष्पसुगंधिनीम् ॥ क्वचिल्लतागृहद्वारांभृंगशब्दसुशोभनाम् ॥२२ ॥

समूह हाथियोंकी शोभा धारण किये थे, कहीं कोटरमें बैठेहुए उलूकगण अपना शब्द करतेथे ॥ १९ ॥ कहीं सिंहके चरणोंके शब्द दिखाई देतेथे, कहीं शार्दूलके नखमे भिन्न रोहितमृगका रुधिर पडाथा, उससे पृथ्वी लाल थी ॥ २० ॥ कहीं पीवर ऐनके भारसे व्याप्त भैंसे फिरतीं थीं जो रणवासके आंगनकी भूमिकी समान मनको विदित होती थीं ॥ २१ ॥ कहीं वृक्षोंकी घनी

१ क्वचिल्लतागृहद्वारं भृंगधारेणतोरणम् इ० पा० । २ फालवेग-इत्यपिपाठान्तरम् । ३ क्वचिल्लतागृहद्वारं भृंगघोरणतोरणाम्--इ०पा० ।

सुगंधिसे वन व्याप्त था, कहीं लतागृहों पर भौरे गुंजार कर रहेथे ॥ २२ ॥ कहीं सर्पोंकी कैंचली बिलसे आधी निकल रही थी, बिलोंमें अजगर लीन थे बाहर उनकी कैंचली पड़ी थी ॥ २३ ॥ कहीं दावानल लगी हुई है शिलाओं पर उसकी ज्योति पडती है कहीं मृग व्याघ्रोंका फूत्कार शब्द हो रहा है ॥ २४ ॥ कहीं खरगोशों पर कुत्तोंका समूह छोडा है कहीं छोटे सरोवरोंपर विश्राम करके दूसरे वनमें जाते ॥ २५ ॥ इस प्रकार व्याधवर्गोंके कहने और राजाके वनमें फिरनेसे कोलाहल कर्ता

अर्धनिःसृतनिर्मोकनागभीमबृहद्विलाम् ॥ विलेपुलीनाजगरैर्भीमांनिर्मोकसर्पिणीम् ॥ २३ ॥ क्वचिद्दा वानलज्वालांशिलाज्योतिःसुशोभनाम्॥ फूत्कारशब्दसंपूर्णांमृगव्याघ्रसमाकुलाम् ॥ २४ ॥ प्रविमुंचञ्छुनां यूथंशशकेपुक्वचित्क्वचित् ॥ पल्वलेपुचविश्रम्यपुनर्यातिवनान्तरम् ॥ २५ ॥ एवंव्रजतिराजेन्द्रेव्याधवर्गेचव ल्गति ॥ कुर्वन्कोलाहलंतत्रसारंगोनिर्गतोवनात् ॥ २६ ॥ स्फालवेगक्रमाक्रांतदुर्गमार्गमहीतलः ॥ कदाचि द्गगनारूढःकदाचिद्भूमिगोचरः ॥ २७ ॥ वक्रस्रोतोतिगंभीरंकण्टकद्रुमसंकुलम् ॥ प्रविष्टोविपमारण्यंराजासौ तत्पदानुगः ॥ २८ ॥ दूराद्दूरतरंगत्वादेशाद्देशंचनिर्जनम् ॥ मृगादर्शनसंरम्भसंशुष्कगलकन्धरः ॥२९॥

हुआ एक सारंग मृग वनसे निकला ॥ २६ ॥ अपनी तीक्ष्ण चौंकडीसे पृथ्वीको आक्रमण करताहुआ कभी आकाश और कभी भूमिपर दीखताथा ॥ २७ ॥ टेढे गंभीर सोते और कंटीले वृक्षवाले महावनमें प्रवेश करगया और राजा भी उसके पीछे चला ॥२८॥ वह एक देशसे दूसरे देश और वनसे दूसरे निर्जन वनको गया, मृगके न देखनेसे संभ्रम और प्यासके कारण राजाका गला सूख

१ फालवेग–इत्यपिपाठान्तरम्।

गया ॥२९॥ लाल तालू होगया, मुखपर पसीना आगया, प्यादे थकगये, घोडोंकी गति रुकी, राजा बडा मार्ग अतिक्रमण करनेके
कारण मध्याह्न समयमें बडा प्यासा हुआ ॥ ३० ॥ आगे जलकी इच्छा करते करते देखा जो कि घने वृक्षोंके नीचे
एक सरोवर था ॥३१॥ जिसमें विशाल कमल खिले हुए भौंरे गुंजार रहे, कमलिनीसे व्याप्त मानों मरकत मणिसे
व्याप्त है ॥३२॥ स्वच्छंदतासे मछली जिसमें कूद रहीं जिसका जल साधुओंके मनकी समान निर्मल चलायमान जलचर और

ताम्रतालुमुखःस्विन्नःश्रांतपत्तिःस्खलद्धनिः ॥ अतीत्यदीर्घमार्गान्सनृपार्तोमध्यगेरवौ ॥ ३० ॥ ददर्शाग्रे
तुकासारंस्पर्धयंतमपांपतिम् ॥ घनपादपतीरस्थंसुतीर्थंविमलंशुभम् ॥ ३१ ॥ विशालंविकचांभोजंमधुम
त्तमधुव्रतम् ॥ पद्मिनीपत्रपालाशच्छन्नंमरकतैरिव ॥ ३२ ॥ स्वच्छंदमुच्छलन्मत्स्यंस्वच्छंसाधुमनोयथा ॥
चलज्जलचरोर्मिश्रंवीचिराजिविराजितम् ॥ ३३ ॥ अंतर्ग्राहगणक्रूरंखलानामिवमानसम् ॥ क्वचिच्छैवा
लदुर्गम्यंकृपणस्येवमंदिरम् ॥ ३४ ॥ नानाविहङ्गसर्वार्तिशमयंतंदिवानिशम् ॥ दातारमिवसर्वस्वैशपन्नार्तिप्र
णाशनम् ॥ ३५ ॥ तर्पयंतंनिजांभोभिःश्वापदान्स्वपितॄनिव ॥ हरंतंसर्वसंतापंहिमांशुमिवचाह्निकम् ॥ ३६ ॥

जलकी लहरोंसे युक्त॥३३॥भीतर क्रूर ग्राहोंसे आकीर्ण जैसे खलोंका मन, कहीं कृपणके घरकी समान शैवालसे व्याप्त॥३४॥
रात दिन सब प्रकारके पक्षियोंका सब प्रकारका ताप दूर करनेवाला, मानो शरणमें आयेहुओंको दाता लोग सर्वस्व प्रदान करते
हों ॥ ३५ ॥ अपने जलोंसे हिंसक जन्तुओंको पितरोंकी समान तृप्त करताहुआ चन्द्रमाकी समान दिनका सब संताप दूर करने

वाला ॥ ३६ ॥ उसको देखतेही राजाका श्रम इस प्रकार दूर हुआ जैसे मेघको देख चातककी ग्लानि मिटती है, वहां जलपानकर राजाने मध्याह्न संध्या की ॥३७॥ अपनी सहाय सहित मृग मांसादि खाकर उस सरोवरहीके तटपर चित्र विचित्र कथा कहते स्थित हुआ ॥ ३८ ॥ धनुषपर वाण चढाय रात्रिको तरुके नीचे स्थित रहे व्याधे लोग संधानको प्राप्त हो दिशाओंका मार्ग रोकते हुए ॥ ३९ ॥ इस प्रकार वनमें जाल विस्तारकर वीरोंके वनमें स्थित होनेमें अर्ध रात्रिको शूकरोंका यूथ तटतटसे निकला॥४०॥

तंदृष्ट्वाभूद्गतग्लानिश्चातकोजलदंयथा ॥ तत्रपीतजलोराजाकृतमाध्याह्निकक्रियः ॥ ३७ ॥ भुक्त्वाखेटकमांसानिसहायैःसहितोनृपः ॥ उवाससरसस्तीरेसुरम्यांकथयन्कथाम् ॥ ३८ ॥ ततःशरासनेवाणंकृत्वारात्रौस्थितस्तरौ॥व्याधाःसंधानमास्थायरुरुधुःककुभांपथः॥३९॥ एवंस्थितेषुवीरेषुवनेविस्तार्यवागुराम् ॥ निशार्धेनिर्गतंयूथंसूकराणांतटेतटे ॥ ४० ॥ चरित्वासरसीकंदान्पपातव्याधसंकुले ॥ राज्ञाविद्धाश्चतेक्रोडाव्याधैश्चबहवोहताः ॥ ४१ ॥ क्षणेनैववराहास्तेविद्धाःपेतुर्महीतले ॥ तान्दृष्ट्वातुमुलंनादंव्याधाश्चक्रुःसुदर्पिताः ॥ ४२ ॥ धावंतःप्रमुदायुक्तामिलितायत्रभूपतिः ॥ तानादायभटैर्भूयोनिःसृतःसरसीतटात् ॥ ४३ ॥ स्वपुरंगंतुकामोसोदृष्टवान्पथितापसम् ॥ ब्राह्मणंवृद्धहारीतंशंखचक्रसुशोभितम् ॥ ४४ ॥

कमलके कंद खानेपर बहुतोंको राजाने और बहुतोंको व्याधोंने मार डाला ॥ ४१ ॥ क्षणमात्रमें वे सब शूकर विद्धहो पृथ्वीमें गिरे, उनको देख दर्पित हो व्याध बड़ा शब्द करने लगे ॥ ४२ ॥ प्रमोदसे दौडतेहुए राजासे मिले उन योद्धाओंको लेकर राजा सरोवर के तटसे चला ॥ ४३ ॥ और अपने पुरको जानेकी इच्छा करने लगा, मार्गमें एक तपस्वी देखा यह ब्राह्मण वृद्ध हारीत

१ खेटकसंपन्नम्-इ० पा० । २ स्थितस्तटे-इ० पा० । ३ वैखानसमतेस्थितम् इति पा० ।

वैखानसके मतमें स्थित थे, हाथकी उंगलियोंमें शंखचक्रसे शोभित ॥ ४४ ॥ दुष्कर और उग्र नियमोंसे जिनका शरीर कृश हो
रहा, अस्थि मात्र शेष बडे चतुर कर्कश शरीर ॥ ४५ ॥ हरिणका चर्म धारण किये मृदुवल्कल वस्त्र पहरे, नख लोम जटाधारे
निगमजप करते ॥ ४६ ॥ वनके आश्रमीको देखकर राजाने उनको मार्ग दिया, प्रणाम कर हाथ जोड सन्मुख स्थित हुआ॥४७॥

नियमैर्दुष्करैरुग्रैःपरिक्षीणकलेवरम् ॥ अस्थिशेषंमहद्दांतंविस्फुरत्कर्कशत्वचम् ॥ ४५ ॥ दधानंहारिणं
चर्मवसानंमृदुवल्कलम् ॥ कुर्वाणंनैगमंजाप्यंनखलोमजटाधरम् ॥ ४६ ॥ तंवनाश्रमिणंदृष्ट्वामार्गंदत्त्वाससं-
भ्रमः ॥ प्रणम्यशिरसाराजाकृतपद्मांजलिः स्थितः ॥ ४७ ॥ अथचैनमलंकारैर्द्विजोनिश्चित्यभूमिपम् ॥
उवाचश्रेयसेहेतोःपरोपकृतिवाञ्छया ॥४८॥ किमर्थंगम्यतेराजन्कालेपुण्यतमेशुभे ॥ माघमासेविहायैवप्रातः
स्नानंसरोवरे ॥ ४९ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमासमाहात्म्येदिलीपमृगयागमोनामप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥
॥ सूतउवाच ॥ प्रत्युवाचततोराजानाहंजानेद्विजोत्तम ॥ माघस्नानफलंकीदृक्तन्मेकथयविस्तरात् ॥ १ ॥

तब ब्राह्मणने वेपसे इसको राजा जानकर परोपकारकी वांच्छासे कल्याणके निमित्त कहा ॥ ४८ ॥ हे राजन् ! इस पुण्य पवित्र
कालमें कहां जाते हो, माघ महीनेमें प्रातः सरोवरका स्नान कैसे छोडते हो ॥ ४९ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे माघमाहात्म्ये
पं०—ज्वालाप्रसादमिश्रकृतभाषाटीकायां,प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ सूतजी बोले, तब राजाने कहा हे द्विजश्रेष्ठ ! यह तो मैं नहीं जानता

१ तपसाकृशदेहंतं विस्फुरत्-इ० पा० । २ विधायैव–इ० पा० ।

माघस्नानका फल किस प्रकार है सो विस्तारसे कहिये ॥ १ ॥ इस प्रकार राजाके वचन सुनकर वे वैखानस मुनि बोले कि, शीघ्रही भगवान् सूर्य अब उदय हुआ चाहते हैं ॥ २ ॥ सो यह हमारे स्नानका समय है कथाका अवसर नहीं है तुम स्नान कर जाओ और अपने कुलगुरु वसिष्ठजीसे प्रश्न करना ॥ ३ ॥ ऐसा कह वे मौनी तपस्वी प्रातःस्नान करनेको गये दिलीपभी पीछेको लौटे और यथाविधि स्नान करके ॥ ४ ॥ फिर प्रसन्न हो अपनी नगरीको चले गये और उन वानप्रस्थ ऋषिकी कथा अन्तःपुर (रनवास)में

इतिभूपवचः श्रुत्वाप्राहवैखानसोमुनिः ॥ भगवान्द्युमणिः शीघ्रमभ्युदेतितमोपहा ॥ २ ॥ स्नानकालोयमस्माकंनकथावसरोनृप ॥ स्नात्वागच्छवसिष्ठंतंपृच्छस्वस्वकुलप्रभुम् ॥ ३ ॥ इत्युक्त्वातापसोमौनीप्रातःस्नानायनिर्गतः ॥ प्रत्यावृत्यदिलीपोपितत्रस्नात्वा यथाविधि ॥ ४ ॥ पुनः स्वनगरींवीरोगतोसौहर्षपूरितः॥ अन्तःपुरेनिवेद्याथवानप्रस्थकथांपुनः ॥ ५ ॥ श्वेताश्वरथमारुह्यसुश्वेतच्छत्रचामरः ॥ सालंकारः सुवासाश्च संवृत्तोमंत्रिभिः सह ॥ ६ ॥ जयशब्दान्पुनः शृण्वन्स्तुतोमागधबंदिभिः ॥ वसिष्ठस्याश्रमं यातऋषिवाक्यमनुस्मरन् ॥ ७ ॥ तत्रैवनत्वाब्रह्मर्षिंविनयाचारपूर्वकम् ॥ दत्तासनोगृहीतार्घ्यआशीर्भिः समलंकृतः ॥ ८ ॥ सानंदंमुनिनापृष्टः कुशलंभूपतिर्यदा ॥ तदाब्रवीद्वचोराजाहर्षयन्मुनिमानसम् ॥ ९ ॥

कही ॥ ५ ॥ श्वेत घोडोंके रथमें बैठकर श्वेतही छत्रसे शोभायमान श्वेत चंवर अलंकार सुवस्त्र धारण किये मंत्रियोंसे संयुक्त ॥ ६ ॥ जय शब्द सुना हुआ मागध बंदियोंसे स्तुतियोंको प्राप्त ऋषिके वाक्य स्मरण करते वसिष्ठके आश्रममें आये ॥ ७ ॥ विनय आचार पूर्वक ब्रह्मर्षिको प्रणाम कर आसन पर अर्घ आशीर्वादको स्वीकार कर बैठे ॥ ८ ॥ तब मुनिने आनंदपूर्वक राजासे कुशल पूंछी, तब

राजा मुनिराजका मन प्रसन्न करते हुए बोले ॥ ९ ॥ और वह भी वैखानसके वचनको मधुर स्वरसे पूंछने लगे, दिलीप बोले भगवन् आपके प्रसादसे मैंने विस्तारसे सुना ॥ १० ॥ आचार धर्म नीति और राजधर्म सुने, चार वर्णाचार आश्रमकी क्रिया ॥ ११ ॥ दान उनके विधान और यज्ञ आपके कथन किये व्रत विष्णु भगवान्‌का आराधन सुना है ॥ १२ ॥ अब वह सुननेकी इच्छा है जो फल माघस्नान करनेसे होता है, किस विधानसे करना चाहिये हे मुनिराज ! सो कथन कीजिये ॥ १३ ॥ वसिष्ठजी

सोपिवैखानसेनोक्तंपप्रच्छमधुराकृतिः ॥ ॥ दिलीपउवाच ॥ ॥ भगवंस्त्वत्प्रसादेनश्रुताविस्तरतो मया ॥ १० ॥ आचारोदंडनीतिश्चराजधर्माश्चयेपरे ॥ चतुर्णामपिवर्णानामाश्रमाणांचयाःक्रियाः ॥ ११ ॥ दानानितद्विधानानियज्ञाश्चविधयस्तथा ॥ व्रतानितत्प्रदिष्टानिविष्णोराराधनंतथा ॥ १२ ॥ अधुनाश्रोतुमिच्छामिमाघस्नानेचयत्फलम् ॥ विधेयंयद्विधानेनतन्मेब्रह्मन्मुनेवद ॥ १३ ॥ ॥ वसिष्ठउवाच ॥ ॥ सम्यगुक्तंपरंश्रेयोलोकत्रयहितावहम् ॥ निर्मलीकरणंतेनमुनिनावनवासिना ॥ १४ ॥ कटाक्षैःकामिनीनांते प्रत्यासन्नमखंडिताः॥ कामयंतेमृगाकेंतेस्नातसिस्नातुमेवच ॥ १५ ॥ विनावह्निविनायज्ञमिष्टापूर्तंविनाप्रिये ॥ वांछतिसद्गतिंस्नातुंप्रातर्माघेवहिर्जले ॥ १६ ॥

बोले बहुत अच्छा पूछा इसमें त्रिलोकीका हित होता है, और उस वनवासीने निर्मल करनेहीके निमित्त तुमसे ऐसा कहा है ॥ १४ ॥ धीरे रहकर भी जो स्त्रियोंके नेत्रोंके कटाक्षसे खंडित नहीं हुए हैं वह मकरमासमें स्नान करनेकी इच्छा करते हैं ॥ १५ ॥ विना अग्नि विना यज्ञ विना बावडी कूप बनवाये वह सद्गतिकी इच्छासे माघमें बाहर जलमें स्नानकी इच्छा करते हैं॥ १६॥

१ व्रतानि तत्प्रतिष्ठाश्च-इ० पा० । २ निर्मलीकरणं लोके मुनीनां वनवासिनाम् इ० पा० ।

जो भूमि सुवर्ण माणिक्य जो धेनु आदि हैं, विना दान किये जो इनका फल चाहते हैं हे राजन् ! वे माघ स्नान करैं ॥ ॥ १७ ॥ त्रिसप्ताह व्रत कृच्छ्र व्रत पराक व्रतों द्वारा अपना शरीर विना शुष्क किये जो फलकी इच्छा करते हैं, हेराजन् ! वे माघस्नान करैं ॥ १८ ॥ वैशाखमें हरिकी पूजा, कार्तिकमें तप और पूजा है और तप होम तथा दान यह तीनवस्तु माघमें करनी श्रेष्ठ हैं ॥ १९ ॥ निरन्तर ऐसा करनेसे वह पुरुष भूमिपति होताहै, वह मुक्तिकी उत्पन्न करनेवाली बुद्धि प्रगट करता है, जिससे

गोभूंहिरण्यमाणिक्यस्वर्णधेन्वादिकानिये ॥ अदत्त्वेच्छंतितैःकार्यमाघस्नानंनराधिप ॥ १७ ॥ त्रिःसप्ताह व्रतैःकृच्छ्रैःपराकैश्चनिजांतनुम् ॥ अशोष्येच्छंतियेस्वर्गंतपासिस्नान्तुतेसदा ॥ १८ ॥ हरेःपूजाचवैशाखेतपः पूजाचकार्तिके ॥ तपोहोमस्तथादानंत्रयंमाघेविशिष्यते ॥ १९ ॥ सानुबंधोतिपर्याप्तोधराधीशोभवेद्ध्रुवम् ॥ कैवल्योत्पादिकाबुद्धिर्ययावानभवेत्पुनः॥ २० ॥ पदध्यावरिवस्यासाविहितादिव्यलोचनैः ॥ तदनन्तंतपोदा नंमाघेमासिनृपोत्तम ॥ २१ ॥ सकामोवाप्रजायैवाहरयेतद्विनापिवा ॥ कायशुद्धिर्व्रतीभूत्वाचतुर्द्धास्नानजं फलम् ॥ २२ ॥ निरन्नाअदितिःसस्नौमाघेद्वादशवत्सरे ॥ पुत्रांश्चद्वादशादित्याँल्लेभेत्रैलोक्यदीपकान्॥२३॥

फिर जन्म नहीं लेता ॥ २० ॥ दिव्य दृष्टिवालोंने यह कहाहै कि माघमासमें तप या दान करनेसे अनन्त फल होताहै ॥ २१ ॥ सकाम हो चाहे प्रजाकी इच्छावाला हो नारायणके निमित्त वा अन्य प्रकार कायशुद्ध कर जो व्रती हो उसको चार प्रकारसे स्नानका फल मिलताहै ॥ २२ ॥ माघको वारह वर्ष अदितिने विना अन्नके स्नान किया, उसके फलसे त्रिलोकीके दीपक वारह

१ गोभूमितिलवासांसि स्वर्णधान्यानिकानिच ।-अदत्त्वेच्छंति येनार्कंनेमाघे स्नातुमुद्यताः । इ० पाठान्तरम् ।

पुत्रोंको प्राप्त किया ॥ २३ ॥ माघ स्नानसेही रोहिणी सुभगा और अरुंधती दानशीला है और सत महलेस्थानमें इसी स्नानसे शची रूपसम्पन्न है ॥ २४ ॥ जो शोभासे भरपूर निर्मल जिसके आंगनमें नृत्य करानेवालियोंसे शोभा हो रही है जहां अनेक दीपक बल रहे रूपवान् स्त्रियोंसे संकुल ॥ २५ ॥ गीत बाजोंके शब्दसे युक्त मंगलाचारसे शोभित, वेदध्वनिमें तत्पर ब्राह्मणोंसे युक्त ॥ २६ ॥ देवाचर्नमें तत्पर मनोहर सदा अतिथियोंसे शोभित स्थानमें मकररविमें स्नान करनेवाले प्राप्त होतेहैं ॥ २७ ॥

सुभगारोहिणीमाघाद्दानशीलात्वरुंधती ॥ शचीचरूपसंपन्नाप्रासादेसप्तभूमिके ॥ २४ ॥ विमलीकृतशोभाढ्ये नर्तकीललिताजिरे ॥ द्वीपवर्णसमुच्छिन्नेरूपवत्स्त्रीजनाकुले ॥ २५ ॥ गीतवादित्रनिर्घोषेमंगलाचारशोभिते॥ वेदध्वनिपवित्रेचविद्वद्भिरेरलंकृते ॥ २६ ॥ सुरार्चनरतेरम्येसदातिथिनिषेविते ॥ मुदितास्तेवसंतीहयैःस्नातंम करेरवौ ॥ २७॥ यैर्दत्तंबहुमाघेचमुरारिश्चार्चितःस्तुतः॥ इष्टवस्तुपरित्यागान्नियमस्यतुपालनात् ॥२८॥ धर्मे सूतिःसदामाघःपापमूलंनिकृंतति ॥ काममूलःफलद्वारानिष्कामोज्ञानदःसदा ॥ २९ ॥ येलोकाज्ञानशीला नांयेलोकाविपिनौकसाम् ॥ येलोकाविष्णुभक्तानांतेमाघस्नायिनांसदा ॥ ३० ॥ देवलोकान्निवर्ततेपुण्यै रन्यैःपरंतप ॥ कदाचिन्ननिवर्ततेमाघस्नानरतानराः ॥ ३१ ॥

जिसने माघमासमें बहुत दान दिया, तथा भगवान्की पूजा कीहै स्तुति कीहै. इष्ट वस्तुका दान और व्रत नियमका पालन कियाहै वह श्रेष्ठ है ॥ २८ ॥ माघ मास सदा धर्मका प्रसव करनेवाला और पापका नाशक है, फल देनेसे काममूल और निष्काम होनेसे ज्ञान देनेवाला है ॥ २९ ॥ जो लोक ज्ञानी और वनमें रहकर तप करनेवालोंको मिलते हैं, जो लोक विष्णुभक्तोंको मिलते हैं वह लोक सदा माघस्नान करनेवालोंको मिलतेहैं ॥ ३० ॥ और पुण्योंके क्षीण होनेसे देवलोकसे

यहां आना होताहै परन्तु माघ स्नान करनेवाले वैकुण्ठसे फिर नहीं आते ॥ ३१ ॥ माघ स्नान कर जो मनुष्य दुधारी गाय किसीको देता है, हे राजन् ! उसके शरीरमें जितने रोम हैं ॥३२॥ उतनेही सहस्र वर्षतक वह स्वर्गलोकमें स्थित होताहै, माघ स्नान करके जो गुड तिल दान करताहै ॥ ३३ ॥ उसके पाप दूर होकर वह मनुष्य निर्मल हो जाताहै, सब धानों में तिल विशेष कर पापके नाश करने वाले हैं ॥ ३४ ॥ इस कारण यत्नपूर्वक माघ मासमें तिल दान करे माघ स्नान करके ब्राह्मणोंको भोजन

माघेस्नात्वातुयोधेनुंदद्यान्मर्त्यःपयस्विनीम् ॥ तस्याथावंतिरोमाणिसर्वांगेचनृपोत्तम ॥ ३२ ॥ तावद्वर्षसहस्राणिस्वर्गलोकेमहीयते॥ माघस्नानंप्रकुर्वाणोयोदद्यात्सगुडांस्तिलान्॥३३॥पातकंतस्यप्रक्षाल्यनिर्मलोभातिवैनरः ॥ सर्वेषांधान्यराशीनांतिलाःपापप्रणाशनाः ॥ ३४ ॥ तस्मान्माघेप्रयत्नेनतिलादेयानृपोत्तम ॥ माघस्नानंप्रकुर्वाणोदद्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥ ३५ ॥ पितॄन्संतर्प्यशुद्धात्मायातिविष्णोःपरंपदम् ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेनमाघेदानेननीयते ॥ ३६ ॥ अदानंनक्षिपेन्माघंसर्वदानृपसत्तम ॥ वित्तानुसारंज्ञात्वावैमाघेदानंसमाददेत् ॥ ३७ ॥ माघस्नानंतुयःकुर्यादुपानहकमंडलून् ॥ ददातिब्राह्मणेभ्यश्चसस्वर्गेतिष्ठतिध्रुवम् ॥ ३८ ॥ माघस्नानमयंराजन्कुर्वाणस्तपउत्तमम् ॥ दानंविनाक्षिपेन्नैवदानात्स्वर्गमवाप्यते ॥ ३९ ॥

करावे ॥ ३५ ॥ तो वह अपने पितरोंको तृप्तकर शुद्ध हो विष्णुलोकको जाताहै इस कारण सब प्रयत्नसे माघ मासमें दान करे ॥३६॥ हे राजन् ! किसी प्रकार भी दान के विना माघ स्नान को न जानेदे वित्तके अनुसार जान कर सदा माघ में दान करना चाहिये ॥३७॥ जो माघ स्नान करके उपानह कमंडलु ब्राह्मणों को देताहै उसकी अवश्य स्वर्गमें प्रतिष्ठा होतीहै ॥३८॥हे राजन्! जो माघ मास में स्नानमय तप करते हैं और दानके विना नहीं विताते उनको इस दान के करने से स्वर्गकी प्राप्ति होतीहै ॥३९॥

दान से पाप और महापातक दूर होतेहैं ॥ ४० ॥ विना दानके तपकी शोभा नहीं
दान से स्वर्ग और दान सेही सुख प्राप्त होताहै दान से पाप और महापातक दूर होतेहैं ॥ ४१ ॥ इससे
होती जैसें सूर्यके विना आकाश अथवा जैसे संतान के विना कुल और आचार के विना गृह शोभा नहीं पाता ॥ ४१ ॥ इति श्रीपाद्मेमहापुराणे
अधिक कोई पवित्र और पाप नाशक नहींहै यह बात भृगुजीने मणिपर्वत पर विद्याधरों से कहीहै ॥४२॥ इति श्रीपाद्मेमहापुराणे
पण्डितज्वालाप्रसादमिश्रकृतभाषाटीकायां माघमाहात्म्ये दिलीपवसिष्ठसंवादो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ ॥ राजा बोले हे

अदानंनतपोभातिह्य दानेनप्राप्यतेस्वर्गोदानेनप्राप्यतेसुखम् ॥ दानेनहीयतेपापंमहापातकमप्यहो ॥ ४० ॥ अदानंनतपोभातिह्य
दानेनप्राप्यतेस्वर्गोदानेनप्राप्यतेसुखम् ॥ दानेनहीयतेपापंमहापातकमप्यहो ॥ ४० ॥ अदानंनतपोभातिह्य

ब्रह्मन् ! भृगुजीने किस समय महीधर से ज्ञान उपदेश किया था सो आप कुतूहलपूर्वक मुझसे कहिये ॥ १ ॥ वसिष्ठजी बोले हे
राजन्! बारह वर्ष तक एक समय मेघ नहीं वर्षा, उससे प्रजा उद्विग्न हो सब दशोंदिशामें क्षीण होगई॥२॥हे राजन्!मध्यदेश हिमा
लय और विन्ध्याचलके खिन्न होने में तथा स्वाहा स्वधा वषट्कार और वेदाध्ययनसे वर्जित होनेसे ॥ ३ ॥ लोकके उपद्रव ग्रस्त

होनेमें तथा धर्मके लुप्त और प्रभाहीन होनेमें फल मूल पानी से महीमण्डल के शून्य होनेमें ॥ ४ ॥ विन्ध्य पर्वत रेवाके तटवर्ती होने से वृक्षों से आच्छादित था तब भृगु शिष्यों सहित वहां से चलकर हिमालय को गये ॥ ५ ॥ कैलास गिरिके पश्चिम ओर मणिकूट नाम एक हेम तथा सुवर्णका पर्वत है ॥ ६ ॥ नीचे नीचे श्वेत स्फटिक और मध्यमें नील शिलाओं से युक्त है, विभूति से सब ओर से शुक्ल नीलकंठकी समान शोभित हुआ ॥ ७ ॥ सब ओर नीलशिलावाला कहीं कहीं सुवर्णकी रेखासे युक्त कृष्णमेघमें

विन्ध्यपादतरुच्छन्नरम्यरेवातटाश्रमात् ॥ सहशिष्यैश्चनिर्गम्यहिमाद्रिंसगतोभृगुः ॥ ५॥ तत्रतिष्ठतिकैलासगिरेःपश्चिमतोगिरिः ॥ मणिकूटइतिख्यातोहेमरत्नशिलोच्चयः ॥ ६ ॥ अधोधःस्फटिकश्वेतोमध्येनीलशिलोगिरिः॥ [1]भूतिभिःसर्वतःशुक्लोनीलकंठइवाबभौ॥ ७॥ सर्वत्रासौनीलशिलोहेमरेखांतरांतरः॥स्फुरद्विद्युल्लतःकृष्णोजीमूतइवराजते ॥ ८ ॥ मूर्ध्निनीलशिलःशैलअधःकांचनमेखलः ॥ नारायणइवाभातिपरिवीतइवांबरः ॥ ९ ॥ अमेखलासुनीलाभोमध्येमध्येसितोपलः ॥ सतारकमिवव्योमशुशुभेसमहीधरः ॥ १० ॥ लब्ध्वात्मनस्तनुंशुभ्रांदीप्तदिव्यौषधीधरः ॥ [2]बहुद्योतकरोभातिद्वितीयइवचंद्रमाः ॥ ११ ॥

स्फुरायमान विजली की रेखाकी समान शोभित होता है ॥ ८ ॥ शिखर पर नील शिलाका पर्वत नीचे सुवर्णकी मेखलावाला पीतवस्त्र पहरे नारायणकी समान शोभित होता है ॥ ९ ॥ मेखलाको त्यागकर नीलवर्ण मध्यमध्यमें श्वेतपत्थरोंसे युक्त तारे सहित आकाशकी समान उस पहाड़की शोभा हो रही ॥ १० ॥ अपने शरीरसे शोभायमान दिव्यौषधीसे दीप्त दूसरे चन्द्रमाकी समान

१ सर्वनीलशिलाढ्यश्च । २ बहुदीप्तिवृतोद्द्योतविवस्वानिवभातिसः ।

बहुत प्रकाशमान ॥ ११ ॥ अधित्यकाओंमें किन्नर कीचक गान करते हैं रंभापत्र और पताकाओंसे वह पर्वत सदा शोभित होता है
॥ १२ ॥ हरितवर्णके उपल वैडूर्य मणी मभ्रराग श्वेतप्रस्तर श्वेतकिरण मण्डलमें इन्द्रधनुषकी समान शोभायमान ॥ १३ ॥
सम्पूर्ण धातु युक्त सुवर्ण और अनेक प्रकारके रत्नोंसे शोभायमान, अग्निज्वालावाले ऊंचे शृंगोंसे सब ओरसे शोभित और वेष्टित
॥ १४ ॥ उसके प्रान्त भाग और तृणयुक्त शिलाओंमें कामसे पीडित होकर विद्याधरी शयन करती हैं ॥ १५ ॥ अन्तर वायुके

अधित्यकासुसंगीतैःकिन्नरीणांसकीचकैः ॥ रंभापत्रपताकाभिःशोभतेससदाऽचलः ॥ १२ ॥ हरितोपलवैडूर्य
पद्मरागसिताश्मनाम् ॥ रुग्रश्मिमंडलैः सोगइंद्रचापैरिवावृतः ॥ १३ ॥ सर्वधातुमयैर्हैमैर्नानारत्नैःप्रशो
भितः॥सोग्निज्वालैरिवात्युच्चैःशृंगैःसर्वत्रवेष्टितः ॥ १४ ॥ तस्यागत्यनितंबेपुसतृणासुशिलासुच ॥ विद्याधर्यः
प्रसेवंतेस्वपतीन्कामविक्लवाः ॥ १५ ॥ निरुद्धांतर्मरुन्मार्गाजितक्लेशाविरागिणः ॥ ध्यायंत्यहर्निशंब्रह्मरम्य
सानुगुहासुच ॥ १६ ॥ साक्षसूत्रकराः सिद्धाअर्धोन्मीलितलोचनाः ॥ आराधयंतिभूतेशंसुंदरीषुदरीषुच
॥ १७ ॥ मंदारकुसुमामोदसुरभीकृतदिङ्मुखः ॥ एपनिर्झरिणीवारिझंकारमुखरः सदा ॥ १८ ॥ उपत्य
कासुखेलद्भिर्वनस्थैःकलभैर्गजैः ॥ कस्तूरीमृगयूथैश्चचारुचित्रमृगैस्तथा ॥ १९ ॥

रोकनेवाले क्लेश जीतनेवाले विरागी उसकी गुहाओंमें निरन्तर ब्रह्मका ध्यान करते हैं ॥ १६ ॥ हाथमें रुद्राक्ष लिये सिद्ध अर्धनेत्र
मींचे हुए सुन्दर गुहाओंमें शिवजीका ध्यान करते हैं ॥ १७ ॥ मंदारके फूलोंकी सुगंधिसे दिशा सुवासित हो रहीं झरनोंके पानी
झरने से जहां शब्द हो रहा, वनमें स्थित हाथियोंके बच्चे और हाथी ॥ १८ ॥ उपत्यकाओंमें खेल रहे कस्तूरीवाले मृगयूथ तथा

१ साग्निज्वालैरिवोच्चैः स इति पाठः । २ विद्याधरादि सेवंते स्वपत्नीः कामविह्वलाः इ० पा० ।

सुंदर चित्र रंगवाले मृगोंके यूथ ॥ १९ ॥ चंवरी गाय फिरती हुई विचित्र श्वापदोंसे युक्त पारावत और चकोर कोकिलके शब्दोंसे व्याप्त ॥ २० ॥ राजहंस और मोरोंसे सदा रमणीय सदा देवता गुह्यक और अप्सराओंसे व्याप्त तथा ॥ २१ ॥ राजा बोले यह पर्वत अनेक आश्चर्योंसे युक्त सब सिद्धोंका आश्रयवाला है हे भगवन् ! वह कितना लम्बा और कितना चौडा है ॥ २२ ॥ ऋषी बोले ३६ योजन का ऊंचा मस्तकमें दशयोजनवाला चौडा व विस्तारमें मूलमें सोलह योजनवाला है ॥ २३ ॥ हरिचंदन मंदार

विलसच्चामरीवृंदैर्विचित्रैः श्वापदैस्तथा ॥ नदत्पारावतैश्चैवचकोरैश्चापिकोकिलैः ॥ २० ॥ राजहंसमयूरैश्चसदारम्यः सपर्वतः ॥ सेव्यमानः सदादेवैर्गुह्यकैरप्सरोगणैः ॥ २१ ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ बह्वाश्चर्यमयःशैलः सर्वसिद्धिसमाश्रयः ॥ भगवन्कियदुच्छ्रायः कियदायामविस्तरः ॥ २२ ॥ ॥ ऋषिरुवाच ॥ षट्त्रिंशद्योजनोच्छ्रायोमस्तकेदशयोजनः ॥ आयामविस्तराभ्यांसमूलेषोडशयोजनः ॥ २३ ॥ हरिचंदनमंदारचूतराजिविराजितः ॥ देवदारुद्रुमाकीर्णःसरलार्जुनशोभितः ॥ २४ ॥ कालागरुलवंगैश्चनिकुंजैश्चलतागृहैः ॥ विराजतेगिरिश्रेष्ठः सदापुष्पफलप्रदः ॥ २५ ॥ तंदृष्ट्वापर्वतंरम्यंतदादुर्भिक्षपीडितः ॥ भृगुश्चकारतत्रैववसतिंहृष्टमानसः ॥ २६ ॥ तस्मिन्मनोहरेशैलेकंदरेषुवनेषुच ॥ चिरकालंतपस्तेपेतपःसुनिरतोभृगुः ॥ २७ ॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमासमाहात्म्येमणिशैलवर्णनंनामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ ॥ छ ॥

और आमके वृक्षोंसे शोभित देवदारु सरल अर्जुनके सरलके वृक्षोंसे युक्त ॥ २४ ॥ काल अगरु लवंग निकुंजलतागृहोंसे विराजित सदा पुष्प फलोंसे शोभायमान है ॥ २५ ॥ इस मनोहर पर्वतको देखकर दुर्भिक्ष पीडित भृगुही निवास करनेकी इच्छा करने लगे ॥ २६ ॥ उस मनोहर पर्वत की कंदरा और वनोंमें भृगुजी बहुत कालतक तप करते रहे ॥ २७ ॥ ॥ इति श्रीपाद्मे माघमासमाहात्म्ये भाषाटीकायां मणिशैलवर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

उसपर्वतसे दो विद्याधर (स्त्रीपुरुष) उतर कर गये ॥ १ ॥

ऋषि बोले हे राजन् ! इस प्रकार आश्रमवासी ब्राह्मणोंके स्थित होनेमें उसपर्वतसे दो विद्याधर (स्त्रीपुरुष) उतर कर गये ॥ १ ॥
और आकर मुनिको नमस्कार कर दुःखी हो स्थित हुए इस प्रकार उनको देख ब्राह्मण कोमलवाणीसे बोले ॥२॥ हे विद्याधर ! प्रसन्न
होकर कहो तुम अति दुःखी क्यों हो उन मुनिके वाक्य सुनकर विद्याधर ब्राह्मणसे बोले ॥३॥ हे तापस श्रेष्ठ ! आप हमारे दुःखका
कारण सुनो,पुण्यका फल प्राप्तहोनेसे मुझको स्वर्ग मिलाहै ॥४॥ देवता देहभी प्राप्त होकर व्याघ्रकी समान हमारा मुख हो रहाहै नहीं

॥ ऋषिरुवाच ॥ ॥ एवंतिष्ठतिराजेंद्रद्विजेस्वाश्रमवासिनि ॥ अवतीर्यागतौशैलाद्द्वौविद्याधरदंपती ॥ १ ॥
समागम्यमुनिंनत्वास्थितौतावतिदुःखितौ ॥ तथाविधौचतौदृष्ट्वामंजुवाक्यंद्विजोब्रवीत् ॥ २ ॥ वदविद्याधर
प्रीत्यायुवांकिमतिदुःखितौ ॥ श्रुत्वातस्यमुनेर्वाक्यंप्राहविद्याधरोद्विजम् ॥ ३ ॥ श्रूयतांतापसश्रेष्ठममदुःख
स्यकारणम् ॥ सुकृतस्यफलंप्राप्यप्राप्तोस्मित्रिदशालयम् ॥ ४ ॥ लब्ध्वाऽपिदेवतादेहंमुखंव्याघ्रस्यमेभवत् ॥
नजानेकर्मणःकस्यविपाकोयमुपस्थितः ॥ ५ ॥ इतिसंस्मृत्यसंस्मृत्यनलेभेशर्ममेमनः ॥ अन्यच्चश्रूयतां
विप्रयेनमेह्याकुलंमनः ॥ ६ ॥ जायेयंममकल्याणीमधुवाणीसुरूपिणी ॥ नृत्यगीतकलाभिज्ञासर्वसद्गुणशा
लिनी ॥ ७ ॥ यस्मिन्कालेकुमारीयंतदाचाऽमलयानया ॥ विपंचींपरिवादिन्यातंत्रीभिःसप्तभिर्भृशम् ॥८॥

जानते हमको यह किस कर्मका फल मिलाहै ॥५॥ इस प्रकार वारंवार विचार करके मेरे मनमें शान्ति नहीं होती, हे ब्राह्मण !
और भी सुनो जिस कारण मेरा मन व्याकुलहै ॥ ६ ॥ यह मेरी स्त्री मधुर वाणी बोलनेवाली स्वरूपवान् है ॥७॥ नृत्यगीत कलाकी
ज्ञाता सम्पूर्ण सद्गुणसे युक्त है,जिस समय यह कुमारी थी उस समय इस निर्मल मनवालीने सात स्वर युक्त वीणाको बजाकर॥८॥

वीणा वादन करे सज्ञाता नारद मुनिको सन्तुष्ट किया मुग्ध भाव से भी मनोहर कंठ से गाती हुई इसने ॥ ९ ॥ विचित्र स्वर और नादके ज्ञाता नारद मुनिको संतुष्ट किया तथा इस कौतुक से भिन्नांगवालीने वीणावजाते हुए ॥ १० ॥ अनेक प्रकारकी वक्र गति से स्निग्ध उसकी पंचम धुनि को सुनकर रोम खडे हो जाने से शिवजी प्रसन्न होगये ॥ ११ ॥ शील

वीणावादरसाभिज्ञस्तोपितोनारदोमुनिः ॥ मुग्धभावेपिगायंत्यात्वनयारक्तकंठया ॥ ९ ॥ विचित्रस्वरनादज्ञो देवराजेपितोपितः ॥ अस्याःकौतुकभिन्नांग्यावादयंत्याविपंचिकाम् ॥ १० ॥ नानावक्रगतिस्निग्धंश्रुत्वातंपंचमध्वनिम् ॥ ततोपोद्भिन्नरोमांचोधुन्वन्मौलिंमहेश्वरः ॥ ११ ॥ शीलौदार्यगुणग्रामरूपयौवनसंपदा ॥ नानयासदृशीनाकेकाचिदस्तिनितंविनी ॥ १२ ॥ क्वेयंदेवमुखीरामाक्वाहंव्याघ्रमुखःपुमान् ॥ इतिब्रह्मन्सदाचिंत्यदह्यामिहृदिसर्वदा ॥ १३ ॥ इतिविद्याधरप्रोक्तंश्रुत्वाचेक्ष्वाकुनंदन ॥ त्रिकालज्ञोभृगुःप्राहप्रहसन्दिव्यलोचनः ॥१४॥ शृणुविद्याधरश्रेष्ठविचित्रंकर्मणांफलम् ॥ प्राप्यप्राज्ञानमुह्यंतिमुह्यंत्यज्ञानचेतसः ॥ १५ ॥

उदारता गुणोंके समूहमे युक्त रूप[1] यौवनकी संपदावाली इसकी समान अन्य कोई स्त्री नहीं है॥ १२॥कहां तो यह देव मुखी ओर कहां मैं व्याघ्र मुखवाला हूं इस प्रकार से सदा मैं हृदयमें विचार करताहूं ॥ १३ ॥ इस प्रकार विद्याधरों के वचनको श्रवणकर त्रिकालज्ञ भृगुजी हँसकर बोले ॥ १४ ॥ हे श्रेष्ठ विद्याधर ! सुनो कर्मके विचित्र फल हैं उसको प्राप्त हो बुद्धिमान् मोहित नहीं

१ गुणग्राम इ० पा० ।

होते अज्ञानी मोहित होजाते हैं ॥ १५ ॥ मक्खीके चरणमात्र भी जैसे विषम विष है इसी प्रकार कर्मका दारुण फल है॥ १६॥ तैंने माघमास में एकादशीका व्रत करके तेल शरीरमें लगाया था और द्वादशी तबतक प्राप्त नहीं हुईथी इस कारण तुम्हारा व्याघ्र मुख हुआ ॥ १७ ॥ एकादशीके दिन व्रत रह कर और द्वादशीको तेल लगानेसे प्रथम पुरूरवाको कुरूपकी प्राप्ति हुई थी॥ १८॥ तब वह अपनी कुकाया देख कर उस दुःखसे दुःखी हुआ; वह सरोवरके तट गिरिराजके समीप प्राप्त होकर ॥ १९ ॥ स्नान कर

मक्षिकापदमात्रंतुयथाहिविषमंविषम् ॥ क्रियात्वविहिताल्पापिविपाकेदारुणातथा ॥ १६ ॥ उपोष्यैकादशीं माघेतैलाभ्यंगःकृतस्त्वया ॥ द्वादश्यांप्रागभन्देहेतेनव्याघ्रमुखोभवान् ॥ १७ ॥ उपोष्यैकादशींपुण्यांद्वाद श्यांतैलसेवनात् ॥ कुरूपंप्राप्तवान्देहंपुराह्येवंपुरूरवाः ॥१८॥ दृष्ट्वात्मनःकुकायंसंतेनदुःखेनदुःखितः ॥ गिरि राजंसमागम्यदेवतासरसस्तटे ॥ १९ ॥ स्थित्वाचपरमप्रीत्याशुचिःस्नातःकुशासने ॥ नवनीलघनश्यामंन लिनायतलोचनम् ॥ २० ॥ शंखचक्रगदापद्मधरंपीतांबरावृतम् ॥ कौस्तुभेनविराजंतंवनमालाधरंहरिम् ॥ २१ ॥ चिंतयन्हृदयेराजानिगृहीताखिलेंद्रियः ॥ मासत्रयंनिराहारस्तपस्तेपेसुदारुणम् ॥ २२ ॥ अल्पे नतपसातुष्टःसप्तजन्मकृतार्चनः ॥ संस्मरंस्तस्यभूपस्यतदाप्रादुरभूत्स्वयम् ॥ २३ ॥

परमप्रीतिसे पवित्र हो कुशासन पर बैठे नवीन नील मेघकी समान घनश्याम कमललोचन ॥ २० ॥ शंख चक्र गदा पद्म लिये पीताम्बरधारी कौस्तुभधारे वनमाला पहरे हरिको ॥ २१ ॥ राजाने सम्पूर्ण इन्द्रियसमूहको वश कर मनमें विचार करते हुये तीन महीने निराहार रहकर दारुण तप किया॥ २२॥ सात जन्मके पूर्व अर्चन होनेसे थोडेही समय में भगवान् उनसे प्रसन्न होगये

उस राजाकी प्रीति विचारकर प्रगट हुए॥२३॥ माघके शुक्ल पक्ष द्वादशी मकरके सूर्यमें भगवान्‌ने अपने शंखसे राजाका अभिषेक किया ॥ २४ ॥ और उसके तेल लगानेकी चेष्टाको स्मरण कराते भगवानने उसको सुन्दर रूप दिया ॥२५ ॥ जिसको देख उर्वशी अप्सरा ने उसकी इच्छा की इस प्रकार वर पाय कृतकृत्य हो राजा अपने पुर को गया ॥ २६ ॥ हे किन्नर इस प्रकार कर्मकी गति जानकर क्यों खेद करते हो, जो तुम यह दानवकी रूपता हरण की इच्छा करते हो ॥ २७ ॥ तो शीघ्र

मावस्यशुक्लपक्षेतुद्वादश्यांमकरेरवौ ॥ शंखाद्भिरभिषिच्याशुमुदातंचक्रवर्तिनम् ॥ २४ ॥ वासुदेवोददौतस्मै स्मारयंस्तैलचेष्टितम् ॥ अतीवसुंदरंरूपंकमनीयंमनोहरम् ॥ २५ ॥ येनतंचकमेदेवीउर्वशीदेवनायिका ॥ इत्थंलब्धवरोराजाकृतकृत्यःपुरंगतः ॥ २६ ॥ इतिकर्मगतिंज्ञात्वाकिंविद्याधरखिद्यते ॥ भवान्परिजिहीर्षुश्चे द्दानवस्यविरूपताम् ॥ २७ ॥ शीघ्रंमद्वचनादेवप्राचीनाघविनाशनम् ॥ माघमासेकुरुस्नानंमणिकूटनदी जले ॥ २८ ॥ मुनिसिद्धसुरैर्जुष्टेकथयिष्यामितद्विधिम् ॥ तवभाग्यवशान्माघोनिकटःपंचमेहनि ॥ २९ ॥ पौषस्यैकादशींशुक्लामारभ्यस्थंडिलेशयः ॥ मासमेकंनिराहारस्त्रिकालंस्नानमाचर ॥ ३० ॥ त्रिकालमर्चय न्विष्णुंत्यक्तभोगोजितेंद्रियः ॥ माघस्यैकादशींशुक्लायावद्विद्याधरोत्तम ॥ ३१ ॥

मेरे वचन से प्राचीन पापके नाशक मणिकूटनदी के जलमें माघमासमें स्नान करो ॥ २८ ॥ जो मुनि सिद्ध देव समूहसे व्याप्त है मैं इस विधान को कहूंगा, तेरे भाग्यवश से पांचवेंही दिन माघ प्रारंभ होगा ॥ २९ ॥ पौषकी शुक्ल एकादशीसे आरंभ कर भूमिपर शयनकर एक महीने निराहार रहकर त्रिकाल स्नानकर ॥ ३० ॥ भोग त्यागनकर तीन काल विष्णु भगवान् का पूजनकर

हे विद्याधर ! जबतक माघ शुक्र एकाशी आवे॥ ३१ ॥ तब तू पाप रहित होकर पवित्रहो शुक्र द्वादशीके दिन मंगल के अर्थ पवित्र जलोंसे स्नानकर ॥ ३२॥ हम तुम्हारा मुख कामदेव की समान कर देंगे हे विद्याधरश्रेष्ठ ! तुम देवता के मुख होकर ॥ ३३॥ इस वरवर्णिनिके साथ सुख पूर्वक क्रीडा करो, माघके प्रभाव को जानकर सदा माघस्नान करो ॥ ३४ ॥ जिस प्रकार तुम्हारी सदा मनोरथ की प्राप्ति होगी, इस प्रकार महात्मा सर्वज्ञ भृगुजीने ॥ ३५ ॥ हे राजन् ! विद्याधर के निमित्त फिर गाथा कही कि माघ

ततोनिर्दग्धपापंत्वांद्वादश्यांपुण्यवासरे ॥ अभिषिच्यशिवैस्तोयैर्मंत्रपूतैरहंसुर ॥ ३२ ॥ कामवक्त्रोपमंवक्त्रं कारिष्यामितवानघ ॥ देवतावदनोभूत्वात्वंविद्याधरसत्तम ॥ ३३ ॥ अनयावरवर्णिन्यासार्द्धंक्रीडयथासु खम् ॥ ज्ञातमाघप्रभावस्त्वंमाघस्नानंसदाकुरु ॥ ३४ ॥ यथामनोरथावाप्तिर्जायतेतवसर्वदा ॥ इत्युक्तंभृगुणा तस्मैसर्वज्ञेनमहात्मना ॥ ३५ ॥ विद्याधरायराजेंद्रपुनर्गाथाउदाहृता ॥ माघस्नानैर्विपन्नाशोमाघस्नानैरघ क्षयः ॥ ३६ ॥ सर्वयज्ञाधिकोमाघःसर्वदानफलप्रदः ॥ माघोगर्जतियज्ञेभ्योमाघोयोगाच्चगर्जति ॥ ३७ ॥ तीव्राच्चतपसोमाघोभोविद्याधरगर्जति ॥ पुष्करेचकुरुक्षेत्रेब्रह्मावर्तेपृथूदके ॥ ३८ ॥ अविमुक्तेप्रयागेचगंगासा गरसंगमे ॥ यत्फलंदशभिर्वर्षैः प्राप्यतेनियमैर्नरैः ॥ ३९ ॥

स्नानसे विपत्ति का नाश और माघ स्नानसे पापका क्षय होताहै ॥ ३६ ॥ माघ सम्पूर्ण यज्ञों में अधिक और सब दान के फल का देनेवाला है माघ यज्ञों से गर्जताहै माग यज्ञसे अधिकता में गर्जता है ॥ ३७ ॥ हे विद्याधर ! माघ अधिकाई में तीव्र तपसे भी गर्जताहै पुष्कर कुरुक्षेत्र ब्रह्मावर्त पृथूदक ॥ ३८ ॥ काशी प्रयाग गंगासागरका संगम यहां दशवर्ष

नियम करनेसे जो फल मिलता है ॥ ३९ ॥ वह फल माघमें तीन दिन स्नान करनेसे प्राप्त होता है, इसमें सन्देह नहीं जिनके मनमें बहुतकाल तक स्वर्गमें रहनेकी इच्छा है ॥ ४० ॥ उनको कहीं जलमें मकरके सूर्यमें स्नान करना चाहिये इससे आयु आरोग्य सम्पत्ति रूप सौभाग्यतादि गुणोंकी प्राप्ति होती है ॥ ४१ ॥ जिनके ऐसे मनोरथ हैं उनको माघस्नान कभी त्यागना न चाहिये, जो नरक और दारिद्रसे डरते हैं ॥ ४२ ॥ वह सदा प्रयत्नपूर्वक माघस्नान करें, दारिद्र पाप दुर्भाग्यरूपी कीच धोनेको माघस्नानकी

तत्फलंप्राप्यतेमाघेत्र्यहस्नानान्नसंशयः ॥ स्वर्गलोकेचिरंरागोयेषांमनासिवर्तते ॥ ४० ॥ यत्रक्वापिजलेतैस्तुस्नातव्यंमकरेरवौ ॥ आयुरारोग्यसंपत्तिरूपसौभाग्यतागुणाः ॥ ४१ ॥ येषांमनोरथस्तैस्तुनत्याज्यंमाघमज्जनम् ॥ येचबिभ्यतिनरकाद्येदरिद्राच्चसंचितान् ॥ ४२ ॥ सर्वथातैःप्रयत्नेनमाघेकार्यंनिमज्जनम् ॥ दारिद्र्यपापदौर्भाग्यपंकप्रक्षालनायच ॥ ४३ ॥ माघस्नानान्नचान्योस्तिउपायोराजसत्तम ॥ श्रद्धाहीनानिकर्माणितथात्यल्पफलानिवै ॥ ४४ ॥ फलंददातिसंपूर्णंमाघस्नानंयथातथा ॥ अकामोवासकामोवायत्रक्वापिबहिर्जले ॥ ४५ ॥ इहामुत्रचदुःखानिमाघस्नायीनविंदति ॥ पक्षद्वयेयथाचंद्रोवर्द्धतेक्षयितेतथा ॥ ४६ ॥ पातकंक्षीयतेमाघेपुण्यराशिश्चवर्धते ॥ यथाचखन्याजायंतेरत्नानिविविधानिच ॥ ४७ ॥

समान अन्य कोई उपाय नहीं है, श्रद्धाहीन कर्म अल्प फलवाले हैं ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ परन्तु चाहे जैसे माघस्नान करे पूर्ण फल प्राप्त होता है, अकाम हो या सकाम कहीं बाहर जलमें ॥ ४५ ॥ माघस्नान करनेवाला दोनों लोकमें दुःख नहीं पाता, जिस प्रकार दोनों पक्षमें चन्द्रमा घटता बढता है ॥ ४६ ॥ इस प्रकार माघमें स्नान करनेसे पाप नष्ट होता और पुण्य बढता है जैसे खानोंसे

॥ ४७ ॥ इसी प्रकार माघस्नानसे विविध प्रकारके पुण्य होते हैं, आयु वित्त कलत्र सम्पत्ति
अनेक प्रकारके रत्न प्रगट होते हैं ॥ ४७ ॥ इसी प्रकार माघस्नानसे विविध प्रकारके पुण्य होते हैं, आयु वित्त कलत्र सम्पत्ति होती है ॥४८॥ जैसे कामधेनु कामना, चिन्तामणी मन चिन्तित फल देती है इसी प्रकार माघस्नान सब मनोरथ देता है ॥४९॥
सत्युगमें तप पर ज्ञान त्रेतामें यज्ञ पर ज्ञान द्वापरकलिमें माघस्नान तो पर ज्ञान है यह तो सब युगोंमें है॥५०॥ हे राजन् ! सब वर्ण और आश्रमोंको माघस्नान मनोरथकी धाराओंसे वर्षा करता है ॥ ५१ ॥ वशिष्ठजी बोले यह वाक्य भृगुजीके सुनकर वह

स्नानात्पुण्यानिजायंतेनराणांमाघतस्तथा ॥ आयुर्वित्तंकलत्रादिसंपदःप्रभवंतिच ॥ ४८ ॥ कामधेनुर्यथा कामंचिंतामणिस्तुचिंतितम् ॥ माघस्नानंददातीहतद्वत्सर्वान्मनोरथान् ॥ ४९ ॥ कृतेतपःपरंज्ञानंत्रेतायां यजनंतथा ॥ द्वापरेतुकलौज्ञानंमाघःसर्वयुगेषुच ॥ ५० ॥ सर्वेषामेववर्णानामाश्रमाणांच भूपते ॥ माघस्नानं तुधर्मस्यधाराभिरभिवर्षति ॥ ५१ ॥ ॥ वसिष्ठउवाच ॥ ॥ इतिवाक्यंभृगोःश्रुत्वातस्मिन्नेवाश्रमेसुरः ॥ सहैवभृगुणामाघेगिरौ निर्झरिणीतटे ॥ ५२ ॥ यथोक्तविधिनास्नानमकरोद्भार्ययासह ॥ भृगोरनुग्रहात्सोथसं प्राप्यमनसेप्सितम् ॥ ५३ ॥ देवतावदनोभूत्वामुमुदेमणिपर्वते ॥ आजगामभृगुर्विंध्यंतमनुग्राह्यहर्षितः ॥५४॥ मणिमयगिरिराजेस्नानमात्रेणमाघेमदनवदनरूपस्तत्र विद्याधरोऽभूत् ॥ क्षपितनियमदेहोविंध्यपादावतीर्णो भृगुरपिसहशिष्यैराजगामाथरेवाम् ॥ ५५ ॥

भार्याके साथ यथोक्त विधिसे स्नान करता हुआ भृगुके अनुग्रहसे उसको विद्याधर माघमासमें भृगुके साथही पर्वतके झरनेमें॥५२॥भार्याके साथ यथोक्त विधिसे स्नान करता हुआ भृगुके अनुग्रहसे उसको मनोरथकी प्राप्तिहुई ॥ ५३ ॥ देवमुख होकर मणिपर्वत पर आनंद करने लगा, और उसपर अनुग्रह कर प्रसन्न भृगुजी विन्ध्य पर्वत पर आये ॥ ५४ ॥ मणिमय गिरिराजमें माघमें स्नानमात्रसे ही विद्याधर काम रूप हो गया, और नियमादिसे निश्चित हो

नियम करनेसे जो फल मिलता है ॥ ३९ ॥ वह फल माघमें तीन दिन स्नान करनेसे प्राप्त होता है, इसमें सन्देह नहीं जिनके
मनमें बहुतकाल तक स्वर्गमें रहनेकी इच्छा है ॥ ४० ॥ उनको कहीं जलमें मकरके सूर्यमें स्नान करना चाहिये इससे आयु आरो
ग्य सम्पत्ति रूप सौभाग्यतादि गुणोंकी प्राप्ति होती है ॥ ४१ ॥ जिनके ऐसे मनोरथ हैं उनको माघस्नान कभी त्यागना न चाहिये,
जो नरक और दारिद्रसे डरते हैं ॥ ४२ ॥ वह सदा प्रयत्नपूर्वक माघस्नान करें, दारिद्र पाप दुर्भाग्यरूपी कीच धोनेको माघस्नानकी

तत्फलंप्राप्यतेमाघेत्र्यहस्नानान्नसंशयः ॥ स्वर्गलोकेचिरंवासोयेषांमनसिवर्तते ॥ ४० ॥ यत्रक्वापिजलेतै
स्तुस्नातव्यंमकरेरवौ ॥ आयुरारोग्यसंपत्तिरूपसौभाग्यतागुणाः ॥ ४१ ॥ येषांमनोरथस्तैस्तुनत्याज्यंमाघम
ज्जनम् ॥ येचबिभ्यतिनरकाद्येदारिद्र्याच्चसंचितात् ॥ ४२ ॥ सर्वथातैःप्रयत्नेनमाघेकार्यंनिमज्जनम् ॥ दारि
द्र्यपापदौर्भाग्यपंकप्रक्षालनायच ॥ ४३ ॥ माघस्नानान्नचान्योस्तिउपायोराजसत्तम ॥ श्रद्धाहीनानिकर्मा
णितथात्यल्पफलानिवै ॥ ४४ ॥ फलंददातिसंपूर्णंमाघस्नानंयथातथा ॥ अकामोवासकामोवायत्रक्वा
पिवहिर्जले ॥ ४५ ॥ इहामुत्रचदुःखानिमाघस्नायीनविंदति ॥ पक्षद्वयेयथाचंद्रोवर्द्धतेक्षयितेतथा ॥ ४६ ॥
पातकंक्षीयतेमाघेपुण्यराशिश्चवर्धते ॥ यथाचखन्याजायंतेरत्नानिविविधानिच ॥ ४७ ॥

समान अन्य कोई उपाय नहीं है, श्रद्धाहीन कर्म अल्प फलवाले हैं ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ परन्तु चाहे जैसे माघस्नान करे पूर्ण फल
प्राप्त होता है, अकाम हो या सकाम कहीं बाहर जलमें ॥ ४५ ॥ माघस्नान करनेवाला दोनों लोकमें दुःख नहीं पाता, जिस प्रकार
दोनों पक्षमें चन्द्रमा घटता बढता है ॥ ४६ ॥ इस प्रकार माघमें स्नान करनेसे पाप नष्ट होता और पुण्य बढता है जैसे खानोंसे

अनेक प्रकारके रत्न प्रगट होते हैं ॥ ४७ ॥ इसी प्रकार माघस्नानसे विविध प्रकारके पुण्य होते हैं, आयु वित्त कलत्र सम्पत्ति होती है ॥४८॥ जैसे कामधेनु कामना, चिन्तामणी मन चिन्तित फल देती है इसी प्रकार माघस्नान सब मनोरथ देता है ॥४९॥ सत्युगमें तप पर ज्ञान त्रेतामें यज्ञ पर ज्ञान द्वापरकलिमें माघस्नान तो पर ज्ञानहै यह तो सब युगोंमें है॥५०॥ हे राजन् ! सब वर्ण और आश्रमोंको माघस्नान मनोरथकी धाराओंसे वर्षा करता है ॥ ५१ ॥ वशिष्ठजी बोले यह वाक्य भृगुजीके सुनकर वह

स्नानात्पुण्यानिजायंतेनराणांमाघतस्तथा ॥ आयुर्वित्तंकलत्रादिसंपदःप्रभवंतिच ॥ ४८ ॥ कामधेनुर्यथा कामंचिंतामणिस्तुचिंतितम् ॥ माघस्नानंददातीहतद्वत्सर्वान्मनोरथान् ॥ ४९ ॥ कृतेतपःपरंज्ञानंत्रेतायां यजनंतथा ॥ द्वापरेतुकलौस्नानंमाघःसर्वयुगेषुच ॥ ५० ॥ सर्वेषामेववर्णानामाश्रमाणांच भूपते ॥ माघस्नानं तुधर्मस्यधाराभिरभिवर्षति ॥ ५१ ॥ ॥ वसिष्ठउवाच ॥ ॥ इतिवाक्यंभृगोःश्रुत्वातस्मिन्नेवाश्रमेसुरः ॥ सहैवभृगुणामाघेगिरौ निर्झरिणीतटे ॥ ५२ ॥ यथोक्तविधिनास्नानमकरोद्भार्ययासह ॥ भृगोरनुग्रहात्सोथसंप्राप्यमनसेप्सितम् ॥५३॥ देवतावदनोभूत्वामुमुदेमणिपर्वते ॥ आजगामभृगुर्विंध्यंतमनुग्राह्यहर्पितः ॥५४॥ मणिमयगिरिराजेस्नानमात्रेणमाघेमदनवदनरूपस्तत्र विद्याधरोऽभूत् ॥ क्षपितनियमदेहोविंध्यपादावतीर्णो भृगुरपिसहशिष्यैराजगामाथरेवाम् ॥ ५५ ॥

विद्याधर माघमासमें भृगुके साथही पर्वतके झरनेमें॥५२॥भार्याके साथ यथोक्त विधिसे स्नान करता हुआ भृगुके अनुग्रहसे उसको मनोरथकी प्राप्तिहुई ॥ ५३ ॥ देवमुख होकर मणिपर्वत पर आनंद करने लगा, और उसपर अनुग्रह कर प्रसन्न भृगुजी विन्ध्य पर्वत पर आये ॥ ५४ ॥ मणिमय गिरिराजमें माघमें स्नानमात्रसे ही विद्याधर काम रूप हो गया, और नियमादिसे निश्चित हो

पर्वतसे उतर भृगुजी रेवा तटमें आये ॥ ५५ ॥ यह माघमाहात्म्य सब भुवनका सार है, सो भृगुजीने विद्याधरसे कहा, जो नित्य इसको सुनते हैं उनको अनेक प्रकारके विचित्र फल और देववत् सब काम प्राप्त होते हैं ॥ ५६ ॥ ॥ इति श्रीपद्मे माघमासमाहात्म्ये वशिष्ठदिलीपसंवादे पंडितज्वालाप्रसादमिश्रकृतभाषाटीकायां चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ वसिष्ठजी बोले हे राजन् ! अब तुमसे माघमाहात्म्य कहताहूं जो कार्तवीर्यके पूँछनेपर दत्तात्रेयने कथन किया है ॥ १ ॥ साक्षात् हरिरूप

अखिलभुवनसारंमाघमाहात्म्यमेतद्द्विजवरभृगुणोक्तंभूपविद्याधराय॥ विविधफलविचित्रंयःशृणोतीहनित्यंरुचि रसकलकामान्देववत्प्राप्नुयात्सः ॥ ५६ ॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे माघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ ॥ वसिष्ठउवाच ॥ ॥ अधुनामाघमाहात्म्यंप्रवक्ष्यामिनृपोत्तम ॥ पृच्छतेकार्तवीर्यायदत्तात्रेयेणभाषितम् ॥ १ ॥ दत्तात्रेयंहरिंसाक्षाद्वसंतंसह्यपर्वते ॥ पप्रच्छतंद्विजंगत्वाराजामाहिष्मतीपतिः ॥ २ ॥ सहस्रार्जुनउवाच ॥ भगवन्योगिनांश्रेष्ठसर्वेधर्माः श्रुतामया ॥ माघस्नानफलंब्रूहिकृपयाममसुव्रत ॥ ३ ॥ ॥ श्रीदत्तात्रेयउवाच ॥ ॥ श्रूयतांनृपशार्दूलएतत्प्रश्नोत्तरंशुभम् ॥ ब्रह्मणोक्तंपुराह्येतन्नारदायमहात्मने ॥ ४ ॥ तत्सर्वंकथयिष्यामिमाघस्नानफलंमहत् ॥ यथादेशंयथातीर्थंयथाविधियथाक्रियम् ॥ ५ ॥

दत्तात्रेयजी जब सह्य पर्वतपर निवासकरते थे, तब माहिष्मतीके राजाने उनसे जाकर पूँछा था ॥ २ ॥ सहस्रार्जुन बोले हे भगवन् ! योगिश्रेष्ठ ! हमने सब धर्म सुने सो कृपाकरके अब माघ स्नानका फल कहो॥ ३॥ श्रीदत्तात्रेय बोले राजन् इस प्रश्नका उत्तर सुनो, जो पहले महात्मा नारदजीके प्रति ब्रह्माजीने कहा है ॥ ४ ॥ वह सब माघस्नानका महाफल कहताहूं यथा देश

परम विप लालची पिशुन क्रूर कृतघ्न क्षणिकबुद्धि ॥ १४ ॥ दुष्पूर दूर्धर दुष्ट तीनों दोषोंसे युक्त अपवित्र वस्तुका निकालनेवाला छिद्रयुक्त तीन तापसे मोहित ॥ १५॥स्वभावसे अधर्ममें रत सैकडों तृष्णासे व्याप्त काम क्रोध लोभयुक्त नरकद्वारसे व्याप्त ॥१६॥ कृमिकीडोंसे युक्त परिणाममें भस्महोकर कुत्तोंकी हवि होता है माघस्नानके विना इस प्रकारका शरीर व्यर्थही है ॥ १७ ॥ जलके बुद्बुदोंकी समान जन्तुओंमें पूतिका (जन्तुविशेषदीमक) की समान माघस्नानके विना मनुष्य मरणकेही निमित्त है ॥१८ ॥ ब्राह्मण

दुष्पूरंदुर्द्धरंदुष्टंदोपत्रयसमन्वितम् ॥ अशुचिस्राविसच्छिद्रंतापत्रयविमोहितम् ॥१५॥ निसर्गतोऽधर्मरतंतृष्णाशतसमाकुलम् ॥ कामक्रोधमहालोभनरकद्वारसंस्थितम् ॥ १६ ॥ क्रिमिविड्भस्मभवतिपरिणामेशुनांहविः ॥ ईदृक्छरीरंव्यर्थंहिमाघस्नानविवर्जितम् ॥ १७ ॥ बुद्बुदाइवतोयेषुपूतिकाइवजंतुषु ॥ जायंतेमरणायैवमाघस्नानविवर्जिताः ॥१८॥ अवैष्णवोहतोविप्रोहतंश्राद्धमयोगिच ॥ अब्रह्मण्यंहतंक्षेत्रमनाचारंहतंकुलम् ॥१९॥ सदंभश्चहतोधर्मःक्रोधेनैवहतंतपः ॥ अदृढंचहतं ज्ञानंप्रमादेनहतंश्रुतम् ॥ २० ॥गुर्वभक्ता हतानारी ब्रह्मचारी तयाहतः ॥ अदीप्तेग्नौहतोहोमोहताभुक्तिरसाक्षिका ॥ २१ ॥

होकर भगवान् नारायणको न माने तो ब्राह्मण हत है, अयोगी श्राद्ध हत है, अब्रह्मण्य क्षेत्र हत है और अनाचारसे कुल नष्ट है ॥ ॥ १९ ॥ दंभसे धर्म क्रोधसे तप हत होजाता है दृढताके विना ज्ञान और प्रमादसे शास्त्र नष्ट होजाता है ॥ २०॥ अपने गुरुजनोंका मान्य न करनेसे नारी तथा ब्रह्मचारी हत होते हैं, अदीप्त अग्निमें होम हत, साक्षी रहित भुक्ति हत है ॥ २१ ॥

१ कृमिवर्चस्कभस्मास्थिपरिपाकसमाकुलम्–इ० पा० । २ दुर्भगाचेतिपाठः । ३ हताशक्तिरसात्विकी–इ० पा० ।

उपजीविकाके निमित्त कन्या हत है, अपने निमित्तही भोजन हत है, शूद्रके घरकी भिक्षासे यज्ञ और कृपणका धन हत है, ॥ २२ ॥ विना अभ्यासके विद्या विरोधी राजा और जीवनके निमित्त तीर्थ हत है और निस्सन्देह जीवनहीके निमित्त व्रत हत है ॥ २३ ॥ असत्यसे वाणी हत है, तथा चुगलीसे हत है, सन्दिग्ध होनेसे मंत्र हत है, व्यग्रचित्त होनेसे जप हत है॥ २४॥ अश्रोत्रियको दान देना हत है, नास्तिकसे लोक हत है, और श्रद्धाके विना कीहुई सब

उपजीव्याहताकन्यास्वार्थंपाकक्रियाहता ॥ शूद्रभिक्षाहतोयागःकृपणस्यहतंधनम् ॥ २२ ॥ अनभ्यासा हताविद्याहतोराजाविरोधकृत्॥जीवनार्थंहतंतीर्थंजीवनार्थंहतंव्रतम् ॥ २३ ॥ असत्याचहतावाणीतथापैशुन्य वादिनी ॥ संदिग्धश्चहतोमंत्रोव्यग्रचित्तोहतोजपः ॥ २४ ॥ हतमश्रोत्रियेदानंहतोलोकश्चनास्तिकः ॥ अश्रद्धयाहतंसर्वंकृतंयत्पारलौकिकम् ॥ २५ ॥ इहलोकोहतोनृणांदरिद्राणांयथानृप ॥ मनुष्याणांतथाजन्म माघस्नानंविनाहतम् ॥२६॥ मकरस्थेरवौयोहिनस्नात्यनुदितेरवौ ॥ कथंपापैःप्रमुच्येतकथंसत्रिदिवंव्रजेत् ॥ ॥ २७ ॥ ब्रह्महाहेमहारीचसुरापोगुरुतल्पगः ॥ माघस्नायीविपापःस्यात्तत्संसर्गीचपंचमः ॥ २८ ॥ माघमा सेरटंत्यापःकिंचिदभ्युदितेरवौ ॥ ब्रह्मघ्नंवासुरापंवाकंपतंतं पुनीमहे ॥ २९ ॥

पारलौकिक क्रियाहत है॥ २५॥ हे राजन् ! इस लोकमें जैसे प्राणी दरिद्रसे हत हैं, इसी प्रकार माघस्नानके विना मनुष्यका जन्म हत है ॥ २६ ॥मकरके सूर्यमें जो प्रभात समय स्नान नहीं करता वह किसप्रकार पापसे छूटे और कैसे स्वर्गको जाय॥ २७॥ ब्रह्महत्यारा सुवर्णका चुरानेवाला, मद्य पीनेवाला, गुरुकी सेजपर चढनेवाला, यह पाप करनेवाला और पाँचवा इनका संसर्ग करनेवाला यह सब माघ स्नान करनेसे पवित्र होजाते हैं॥ २८॥माघमासमें किंचित सूर्यके उदय होने पर जल कहते हैं ब्रह्महत्यारा सुरापान करनेवाला और

पतित पुरुषको हम पवित्र करेंगे ॥ २९ ॥ सब उपपातक और महापातकभी माघस्नान सुरू करनेसे भस्म होजाते हैं ॥ ३० ॥ माघस्नानके आतेही पाप कंपित होने लगते हैं, यदि यह पुरुष स्नानकर लेगा तो हमारा नाश होगा॥ ३१ ॥इस प्रकार स्नान करनेको उद्यत हुए पुरुषको देखकर पाप दुःखी होते हैं माघस्नायी मनुष्य अग्निकी समान दीखने लगते हैं॥ ३२ ॥ वे पापोंसे विमुक्त होकर इस प्रकार दीप्त होते हैं जिस प्रकार मेघोंसे मुक्त होकर चन्द्रमा दीप्त होता है, गीला सूखा लघुवाणी मनसे जो पाप किया है॥ ३३ ॥वह

उपपापानिसर्वाणिपातकानिमहांत्यपि ॥ भस्मीभवंतिसर्वाणिमाघस्नायिनिमानवे ॥ ३० ॥ कंपंतिसर्वपापानिमाघस्नानसमागमे ॥ नाशकालोयमस्माकंयदिस्नास्यतिवारिणि ॥ ३१ ॥ एवंक्रोशंति पापानिदृष्ट्वा स्नानोद्यतंनरम् ॥ पावकाइवदीप्यंतेमाघस्नानैर्नरोत्तमाः ॥ ३२ ॥ विमुक्ताःसर्वपापेभ्योमेघेभ्यइवचंद्रमाः ॥ आर्द्रंशुष्कंलघुस्थूलंवाङ्मनःकर्मभिःकृतम् ॥ ३३ ॥ माघस्नानंदहेत्पापंपावकःसमिधोयथा ॥ प्रामादिकंचयत्पापंज्ञानाज्ञानकृतंचयत् ॥ ३४ ॥ स्नानमात्रेणतन्नश्येन्मकरस्थे दिवाकरे ॥ निष्पापास्त्रिदिवंयांतिपापिष्ठायांतिशुद्धताम् ॥३५॥ संदेहोनात्रकर्तव्योमाघस्नानेनराऽधिप ॥ सर्वेधिकारिणोमात्रेविष्णुभक्तौयथानृप ॥ ॥ ३६ ॥ सर्वेषांस्वर्गदोमाघः सर्वेपांपापनाशनः ॥एषएवपरो मंत्रोह्येतदेवपरंतपः ॥ ३७ ॥

सब पाप माघस्नानसे इस प्रकार दूर होजाते हैं जैसे अग्निमें समिधा, जो प्रमाद वा अज्ञान जानमें वा अजानमें पाप किया है ॥ ॥ ३४ ॥ वह मकरके सूर्य होनेमें स्नान मात्रसे नष्ट होजाता है, पापरहित स्वर्गको जाते, पापिष्ठ शुद्ध होजाते हैं ॥ ३५ ॥ हे राजन् ! माघस्नान विषयमें सन्देह न करना चाहिये, हे राजन् ! माघके स्नानमें सबही अधिकारी हैं, जैसे भगवान्के भक्तिमें सब अधिकारी हैं ॥ ३६ ॥ माघ सबहीको स्वर्ग देनेवाला और सबहीका पाप नाशक है यही परं मंत्र और यही परं

तप है ॥ ३७ ॥ माघस्नानका करना परमोत्तम प्रायश्चित्त है जन्मान्तरोंके अभ्याससे मनुष्योंकी माघस्नानमें भक्ति होती है ॥ ३८ ॥ जिस प्रकार जन्मान्तरोंके अभ्याससे अध्यात्म ज्ञानकी प्राप्ति होती है, संसाररूपी कर्दमका इसीसे प्रक्षालन होता है ॥ ३९ ॥ हे राजन् ! यह माघस्नान पवित्रोंका पवित्र करनेवाला है हे राजन् ! जो सब काम फल देनेवाले माघमें स्नान नहीं करते हैं ॥ ४० ॥ वे चन्द्र सूर्यकी समान बडे भोग किस प्रकारसे भोग कर सकते हैं, हे राजन् ! माघ

अध्यात्मज्ञा नकौशल्यंजन्माभ्यासाद्यथानृप ॥ संसारकर्दमालेपप्रक्षालनविशारदम् ॥ ३९ ॥ पावनंपावनानांचमाघस्नानं परंनृप ॥ स्नांतिमाघेनयेराजन्सर्वकामफलप्रदे ॥ ४० ॥ कथंतेभुंजतेभोगांश्चंद्रसूर्यग्रहोपमान् ॥ शृणुराजन्म हाश्चर्यंमाघस्नानप्रभावजम् ॥४१॥ कुब्जिकानामकल्याणीब्राह्मणीभृगुवंशजा ॥ बालवैधव्यदुःखार्तातपस्ते पेसुदुस्तरम् ॥ ४२ ॥ विंध्यपादेमहाक्षेत्रेरेवाकपिलसंगमे ॥ तत्रसाव्रतिनीभूत्वानारायणपरायणा ॥ ४३ ॥ सदाचारवतीनित्यंनित्यंसंगविवर्जिता ॥ जितेंद्रियाजितक्रोधासत्यवागल्पभाषिणी ॥ ४४ ॥

प्रायश्चित्तंपरंचैतन्माघस्नानमनुत्तमम् ॥ नृणांजन्मांतराभ्यासान्माघस्नानेमतिर्भवेत् ॥ ३८ ॥

स्नानके प्रभावसे उत्पन्न हुआ महा आश्चर्य सुनो ॥ ४१ ॥ एक भृगुवंशमें उत्पन्न हुई कुब्जिका नाम कल्याणी ब्राह्मणी थी, वह बालवैधव्यसे दुःखी हो घोर तप करने लगी ॥ ४२ ॥ विन्ध्याचलपर्वतके महा क्षेत्रमें जहां रेवाकपिलका संगम हुआ है वहां वह व्रतिनी होकर नारायणपरायण हुई ॥ ४३ ॥ सदा सदाचारसे युक्त सम्पूर्ण संगसे वर्जित जितेन्द्रिय जितक्रोध सत्यवाक् अल्प

१ कुब्जी–इ० पा० ।

भाषण करनेवाली ॥ ४४ ॥ सुशीला दानशीला अपने देहको शोषनेवाली पितृदेवताओंको देकर अग्निमें आहुति देनेवाली थी ॥ ॥ ४५ ॥ हे राजन् ! वह उच्छवृत्ति करनेवाली सदा छठे कालमें भोजन करती कृच्छ्र अतिकृच्छ्र और तप्तकृच्छ्र व्रतका सदा अनुष्ठान करती ॥ ४६ ॥ पुण्यसेही वह नर्मदाके तटमें अपना समय व्यतीत करतीथी, इस प्रकार वल्कल वस्त्रधारिणी उस सुशीलाने ॥ ४७ ॥ महासत्वतासे युक्त धैर्य और सन्तोषसे युक्त रेवाकपिलके संगममें साठ माघस्नान किये ॥ ४८ ॥

सुशीलादानशीलाचदेहशोषणशालिनी ॥ पितृदेवद्विजेभ्यश्चदत्त्वाहुत्वातथानले ॥४५॥ षष्ठेकालेचसाभुङ्क्ते ह्युंच्छवृत्तिःसदानृप ॥ कृच्छ्रातिकृच्छ्रपाराकतप्तकृच्छ्रादिभिर्व्रतैः ॥ ४६ ॥ पुण्यान्नयतिसामासान्नर्मदायाश्चरोधसि ॥ एवंतयातपस्विन्यावल्कलिन्यासुशीलया ॥ ४७ ॥ सुमहासत्त्वशालिन्याधृतिसंतोपयुक्तया ॥ षष्टिर्माघास्तयास्नातारेवाकपिलसंगमे ॥ ४८ ॥ ततःसातपसाक्षीणातस्मिंस्तीर्थेमृतानृप ॥ माघस्नानजपुण्येनतेनसावैष्णवेपुरे ॥ ४९ ॥ उवासप्रमुदायुक्ताचतुर्युगसहस्रकम् ॥ सुंदोपसुंदनाशायपश्चात्पद्मभवात्पुनः ॥ ५० ॥ तिलोत्तमेतिनाम्नासाब्रह्मलोकेवतारिता ॥ तेनपुण्यस्यशेषेणरूपस्यैकायनंययौ ॥ ५१ ॥ अयोनिजावलारत्नंदेवानामपिमोहिनी ॥ लावण्यह्लादिनीतन्वीसाभूदप्सरसांवरा ॥ ५२ ॥

हे राजन् ! तब वह तपसे क्षीण होकर उस क्षेत्रमें मृतक होगई तब वह माघस्नानके पुण्यसे उस वैष्णवपुरमें ॥ ४९ ॥ प्रसन्न होकर सहस्र चतुर्युगी निवास करती हुई सुन्दउपसुन्दके नाश करनेको पद्मभवसे प्रगट हुई ॥ ५० ॥ तिलोत्तमा नाम होकर ब्रह्मलोकमें रही और उस पुण्यके शेषसे महा रूपवती हुई ॥ ५१ ॥ वह अयोनिजस्त्रियोंमें रत्न देवता

तिलोत्तमा नाम होकर ब्रह्मलोकमें रही और उस पुण्यक [illegible] महा कायवती हुई ॥ ५२ ॥ विधाताकी चातुरीका मानो आश्चर्य करनेवाली
ओंकी मोहनेवाली हुई सुन्दर नाभिवाली मनोहर अप्सरा होती हुई ॥ ५२ ॥ विधाताकी चातुरीका मानो आश्चर्य करनेवाली तब
उसको उत्पन्नकर विधाताने प्रसन्न हो आज्ञादी ॥ ५३ ॥ हे मृगलोचनी ! शीघ्रही तुम दैत्योंके नाशके निमित्त गमन करो तब
वह भामिनी वीणा लेकर ब्रह्माजीके लोकसे ॥ ५४ ॥ पुष्कर मार्गसे गई जहां वे दोनों दैत्य स्थित थे वहां रेवाके पवित्र निर्मल
जलमें स्नानकर॥ ५५ ॥ बंधूकपुष्पकी समान लाल वस्त्र धारण कर शब्दायमान कंकण और मेखला नूपुर धारण किये॥ ५६ ॥

एणशावाक्षिगच्छ
निपुणस्यविधेःसृष्टुनूनमाश्चर्यकारिणी ॥ तामुत्पाद्यविधातावैतुष्टोतुज्ञांतदाददौ ॥ ९३ ॥
त्वंदैत्यनाशायसत्वरम् ॥ ततःसाब्रह्मणोलोकाद्वीणामादायभामिनी ॥ ९४ ॥ गतापुष्करमार्गेणयत्रतौदेववै
रिणौ ॥ तत्रस्नात्वातुरेवायाःपवित्रेनिर्मलेजले ॥ ९५ ॥ परिधायांबरंरक्तंबंधूककुसुमप्रभम् ॥ रणद्वलयिनी
चारुसिंजन्मेखलनूपुरा ॥ ९६ ॥ लोलमुक्तावलीकंठीचलत्कुंडलशोभना ॥ माधवीकुसुमापीडाकंकेलिवि
टपेस्थिता ॥९७ ॥ गायंतीसुस्वरंसापिपीडयंतीतुवल्लकीम् ॥ मूर्च्छयंतीस्वरपद्मंसुस्निग्धंकोमलंकलम् ॥९८॥
इत्थंतिलोत्तमांबालांतिष्ठंत्यशोककानने ॥ दृष्टा दैत्यभटैरिंदोःकलेवसुखदाहृदि ॥ ९९ ॥

चलायमान मुक्तावली कंठी चलायमान कुंडलोंसे शोभित चमेलीके फूलोंको जूडेमें गूथे अशोकवृक्षके नीचे स्थित ॥ ५७ ॥
मधुर स्वरसे गाती वीणाको बजाती छःओं सुरोंकी तान लेती सुस्निग्ध कोमल शब्दसे युक्त ॥ ५८ ॥ इस प्रकार तिलोत्तमा
वाला अशोक वृक्षके नीचे स्थित हुई दैत्यके सेवकोंने उसको मनकी आनंद देनेवाली चन्द्रमाकी कलाकी समान देख कर॥ ५९ ॥

१ मालती इति पा० । २ कंकेली अशोकवृक्षः ।

उसको देख विस्मित हो आनंदित हो सेनाके वडे लोगोंने शीघ्रतासे सुन्दउपसुन्दके समीप जाकर ॥ ६० ॥ वारंवार उसका वर्णन करके संभ्रमसे कहा हे दैत्य! हम नहीं जानते कि, वह एक स्त्री देवी वा दानवी है॥६१॥ नागस्त्री यक्षिणी कौन है सर्वथा वह स्त्रीरत्न है आप लोकमें रत्नभोगी हो और वह अबला रत्नभूत है ॥ ६२ ॥ वह शोककी हरनेवाली थोडी ही दूरपर स्थित है, उसको जाकर शीघ्र देखो कामकी भी मोहित करनेवाली है ॥ ६३ ॥ इस प्रकार वे दोनों सेनापतियोंकी मनोहर वाणी सुन

तांदृष्ट्वाविस्मितैराजन्सानंदैःसैनिकैर्भृशम् ॥ त्वरमाणैरहङ्कैवगत्वासुंदोपसुंदयोः ॥ ६० ॥ कथितासंभ्रमेणै ववर्णयित्वापुनःपुनः ॥ हेदैत्यौनविजानीमोदेवीवादानवीनुकिम् ॥ ६१ ॥ नागांगनाथवायक्षीस्त्रीरत्नंसर्व थातुसा ॥ युवांरत्नभुजौलोकेरत्नभूताहिसाबला ॥६२॥ वर्ततेनातिदूरेग्रेअशोकेशोकहारिणी ॥ गत्वातांपश्यतं शीघ्रंमन्मथस्यापिमोहिनीम् ॥ ६३ ॥ इतिसेनापतीनांतौश्रुत्वावाचंमनोहराम् ॥ चषकंसीधुनस्त्यक्त्वावि हायजलसेचनम् ॥ ६४ ॥ उत्तमस्त्रीसहस्राणित्यक्त्वातस्माज्जलाशयात् ॥ शतभारायसींक्रूरांकालदंडोपमां गदाम् ॥ ६५ ॥ भिन्नांभिन्नांगृहीत्वातु जवेनाभिद्रुतंगतौ ॥ यत्रशृंगारसज्जासाहंतुंचंडीवसंस्थिता ॥ ६६ ॥ राजन्संधुक्षयंतीवदैत्ययोर्मन्मथानलम् ॥ स्थित्वातस्याःपुरोजाल्मौतद्रूपेणविमोहितौ ॥ ६७ ॥

कर सीधु मधुके कटोरेको त्याग तथा जल सेचनेको त्यागकरके ॥ ६४ ॥ सहस्रों उत्तम स्त्रियोंको छोड उस जलाशयसे निकल सौभारकी वनी लोहेकी कालदण्डकी समान गदा लेकर ॥ ६५ ॥ भिन्न २ दोनों गदाओंको लेकर वडे वेगसे चले, जहां वह शृंगार किये चंडीकी समान इनको मारनेको स्थित थी ॥ ६६ ॥ हे राजन्! वह उन दोनों दैत्योंकी कामाग्नि प्रदीप्त करती हुई

१ शीघ्रत इ०पा०। २ स्थित्वादैत्यौ पुरस्तस्या इति पा०।

और मदसे विशेष मत्त हो परस्पर कहने लगे हे
स्थित थी उसके रूपसे मोहित हो दोनों उसके आगे स्थित होते हुए ॥ ६७ ॥ तुम इसको छोडो यह मेरी भार्या
भ्राता ! तुम इससे विरामको प्राप्त हो इसको मैं अपनी भार्या बनाऊंगा ॥ ६८ ॥ कालके वशीभूत हो दोनोंने परस्पर
होगी इस प्रकार मातंगकी समान मत्त हो परस्पर दोनों कहने लगे ॥ ६९ ॥ इनको मरा देखकर सेनाके लोगोंने बड़ा कोला
गदाघात किया और परस्परके प्रहारसे प्राणरहित हो पृथ्वीपर गिरे ॥ ७० ॥

त्वमेवार्थत्यजैतांमे विशेषान्मधुनामत्तावूचतुस्तौपरस्परम् ॥ भ्रातर्विरमभार्येयंममास्तुवरवर्णिनी ॥ ६८ ॥ अन्योन्यंकालनिर्दिष्टौगदयाजघ्न भार्यांतुमदिरेक्षणाम् ॥ इत्याग्रहेणसंरब्धौमातंगाविवसोन्मदौ ॥ ६९ ॥ कालरा तुस्तदा ॥ परस्परप्रहारेणगतासूपतितौभुवि ॥ ७० ॥ तौमृतौसैनिकैर्दृष्ट्वाकृतःकोलाहलोमहान् ॥ पातयित्वागिरेःशृंगेह्लादिनी त्रिसमाकेयंहाकिमेतदुपस्थितम् ॥ ७१ ॥ एवंवदत्सुसैन्येषुदैत्यौसुंदोपसुंदकौ ॥ देवकार्यंततःकृत्वाआगताब्रह्मणःपुरः ॥७३॥ वतिलोत्तमा ॥ ७२ ॥ प्रस्थितागगनंशीघ्रंद्योतयंतीदिशोदश ॥ भुंक्ष्वभोगाननेकांस्त्वं ततस्तुष्टेनदेवेनविधिनासानुमोदिता ॥ स्थानंसूर्यरथेदत्तं तवचंद्राननेमया ॥ ७४ ॥ यावत्सूर्योबरेस्थितः ॥ इत्थंसाब्राह्मणीराजन्भूत्वाचाप्सरसांवरा ॥ ७५ ॥

सेनाके ऐसा कहने पर सुन्द उपसुन्द दैत्योंको
हल किया यह कालरात्रिकी समान कौन है यह क्या वार्ता उपस्थित हुई ॥ ७१ ॥ दशों दिशाओंको प्रकाश करती आकाशको गई, और देवकार्य
मनोहारिणी तिलोत्तमा पर्वत शृंगपर पातित करके ॥ ७२ ॥ तब संतुष्ट होकर ब्रह्माजीने उसका अनुमोदन किया, हे चंद्रानने ! मैंने
करके ब्रह्माजीके आगे आकर स्थित हुई ॥ ७३ ॥ जबतक सूर्य आकाशमें स्थित हैं, तबतक तू अनेक प्रकारके भोगोंको भोग,
तुमको सूर्यके रथपर स्थान दिया ॥ ७४ ॥

हेराजन्! इस प्रकार यह ब्राह्मणी श्रेष्ठ अप्सरा होकर ॥ ७५ ॥ अबतक सूर्यलोकमें माघस्नानका बड़ा फल भोगती है हे राजन् ! इस कारण श्रद्धावाले मनुष्योंको सदा यत्नपूर्वक ॥ ७६ ॥ परमगति चाहनेवालोंको माघस्नान करना चाहिये उससे कौनसे पुरुषार्थकी प्राप्ति न करी वा उसके कौनसे पापक्षीण न हुए ॥ ७७ ॥ जो मनुष्य माघमासमें स्नान करता है दक्षिणा सहित सब यज्ञ इसकी बराबरि नहीं करसकते ॥ ७८ ॥ हे राजन् ! माघस्नान और विशेष कर तीर्थ सेवनसे ऐसा पापनाशक और स्वर्ग

भुंक्तेद्यापिरवेर्लोकेमाघस्नानफलंमहत् ॥ तस्मात्प्रयत्नतो राजञ्छ्रद्दधानैः सदानरैः ॥ ७६ ॥ स्नातव्यंमकरादित्येवांच्छद्भिःपरमांगतिम् ॥ नानवातोत्रतस्यास्तिपुरुषार्थोहिकश्चन ॥ ७७ ॥ नाक्षीणंपातकंकिंचिन्माघेमज्जतियोनरः ॥ तुलयंतिनतेनात्रयज्ञाः सर्वेसदक्षिणाः ॥ ७८ ॥ माघस्नानेन राजेंद्रतीर्थेचैवविशेषतः ॥ नचान्यत्स्वर्गदंकर्मनचान्यत्पापनाशनम् ॥ ७९ ॥ नचान्यन्मोक्षदंयस्मान्माघस्नानसमंभुवि ॥ ८० ॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेमाघस्नानप्रशंसायांसुंदोपसुंददैत्यवधोनामपंचमोऽध्यायः ॥ ॥ ५ ॥ छ ॥ श्रीदत्तात्रेयउवाच ॥ ॥ अत्रतेकथयिष्यामिइतिहासंपुरातनम् ॥ पुराकृतयुगेराजन्नैषधेनगरेवरे ॥ १ ॥ आसीद्वैश्यःकुबेराभोनामतोहिमकुण्डलः ॥ कुलीनःसत्क्रियोदांतोद्विजवह्निसुरार्चकः ॥ २ ॥

का देनेवाला कोई कर्म नहीं है ॥ ७९ ॥ माघस्नानकी समान भूमिमें और कोई मोक्ष देनेवाला नहीं है ॥ ८० ॥ इति श्रीपद्मपुराणे माघमाहात्म्ये वसिष्ठ–दिलीपसंवादे पण्डित–ज्वालाप्रसाद मिश्रकृतभाषाटीकायां पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ ॥ श्रीदत्तात्रेय बोले इसमें एक और भी पुरातन इतिहास आपसे कहते हैं, हे राजन् ! पहले सतयुगमें निषध नगरमें

१ स्नातोवाङ्मात्रतश्चास्ति इ० पा० ।

कुबेरके समान धनी एक वैश्य हिमकुंडल नामवाला था कुलीन सत्क्रियावाला चतुर द्विज अग्नि देवताओंका पूजन करनेवाला ॥ १ ॥ २ ॥ कृषिवाणिज्यका करनेवाला अनेक प्रकार क्रय विक्रयके कार्य कर्ता गौ घोडे महिषी आदि पशु पालन करता ॥ ३ ॥ दूध दही मट्ठा गोमय तृण काष्ठ फल मूल लवण पिप्पल धान्य शाक तैल और अनेक प्रकारके वस्त्र धातु खांड मिठाई आदि सदा बेचता ॥ ४ ॥ ५ ॥ इस प्रकार वह वैश्य नानाप्रकारके उपायोंसे सुवर्णकी आठ करोड

कृषिवाणिज्यकर्तासौबहुधाक्रयविक्रयी ॥ गोघोटकमहिष्यादिपशुपोषणतत्परः ॥३॥ पयोदधीनितक्राणिगोमयानितृणानिच ॥ काष्ठानिफलमूलानिलवणानिचपिप्पलीम् ॥ ४॥ धान्यानिशाकतैलानिवस्त्राणिविविधानिच ॥ धातूनीक्षुविकारांश्चविक्रीणीतेचसर्वदा ॥ ५ ॥ इत्थंनानाविधैर्वैश्यउपायैःपरमैस्तदा ॥ द्रव्याण्युपार्जयामासअष्टौहाटककोटयः ॥६॥ एवंमहाधनःसोथआकर्णपलितोभवत् ॥ पश्चाद्विचार्यसंसारक्षणिकत्वंस्वचेतसि ॥ ७ ॥ तद्धनस्यषडंशेनधर्मकार्यंचकारसः ॥ विष्णोरायतनंचक्रेचक्रेगेहंशिवस्यच ॥ ८ ॥ तडागंखानयामासविपुलंसागरोपमम् ॥ वाप्यश्चपुष्करिण्यश्च बहुशस्तेनकारिताः ॥ ९ ॥ वटाश्वत्थाम्रकंकोलजंबूनिंबादिकाननम् ॥ आरोपितंसुसत्वेनतथापुष्पवनंशुभम् ॥ १० ॥

अशरफी उपार्जन करता हुआ ॥६॥ इस प्रकार उस महाधनीकी कर्णपर्यन्त वृद्धता प्राप्त हुई पीछे अपने मनमें विचार करनेलगा कि, यह संसार क्षणिक है ॥ ७ ॥ उस धनके छठे अंशसे उसने धर्म कार्य किया ठाकुरद्वारा और शिवजीका मन्दिर बनवाया ॥ ८ ॥ और सागरकी समान एक बडा सरोवर खुदवाया बावडी और पुष्करिणी उसने बहुतसी बनवांई ॥ ९ ॥ वड अश्वत्थ

आम्र कंकोल जामुन नीम आदिके वन पुष्पवाटिका यह उसने प्रेमसे लगाई ॥ १०॥ उदयसे अस्त पर्यन्त उसने अन्नदान किया पुरके बाहर चारोंओर उसने परकोटा बनवाया ॥ ११ ॥ पुराणों में भूमि में जितने प्रपा (पौसरे) दान स्थित हैं उस धर्मात्माने वह सब दान दिये॥१२॥ फिर जन्म पर्यन्त तक किये पापोंका उसने प्रायश्चित्त किया सदा देवता अतिथिका पूजन करता॥१३॥ इस प्रकार कर्म करते उसके दो पुत्र हुए वह श्रीकुंडल विकुंडल नामसे प्रसिद्ध थे ॥ १४ ॥ उन बालकोंको घर सोंपकर वैश्य

उदयास्तमनंयावदन्नदानंचकारसः ॥ पुराद्बहिश्चतुर्दिक्षुप्रपाश्चक्रेसुशोभनाः ॥ ११ ॥ पुराणेषुप्रसिद्धानिप्रपादानानिभूतले ॥ ददौदानानिधर्मात्मानित्यंदानरतस्तथा ॥ १२ ॥ यावज्जीवंकृतेपापेप्रायश्चित्तमथाकरोत् ॥ देवपूजारतोनित्यंनित्यंचातिथिपूजकः ॥१३ ॥ तस्येत्थंवर्तमानस्यसंजातौद्वौसुतौनृप ॥ तौतुप्रसिद्धनामानौश्रीकुंडलविकुंडलौ ॥ १४ ॥ तयोर्मूर्ध्निगृहंत्यक्त्वाजगामतपसेवनम् ॥ तत्राराध्यपरंदेवंगोविंदंवरदंप्रभुम् ॥ १५ ॥ तपःक्लिष्टशरीरोसौवासुदेवमनाःसदा ॥ आप्तवान्वैष्णवंलोकंयत्रगत्वानशोचति ॥ १६ ॥ अथतस्यसुतौराजन्धनमानमदान्वितौ ॥ तरुणौरूपसंपन्नौधनगर्वेणगर्वितौ ॥ १७ ॥ दुःशीलौव्यसनासक्तौधर्मकर्मविदूरगौ ॥ नवाक्यंशृणुतोमातुर्वृद्धानांवचनं तथा ॥ १८ ॥

नारायणका भजन करने वनको गया वहां गोविन्द प्रभुका आराधन कर ॥ १५ ॥ तपसे शरीरको क्लेश देता सदा वासुदेवमें मन लगाये वैष्णवलोकको प्राप्त हुआ जहां जाकर फिर शोच नहीं करता ॥ १६ ॥ हे राजन्! तब उसके पुत्र धन मानसे मत्त होकर तरुण रूप सम्पन्न धनके गर्वसे गर्वित होकर ॥ १७ ॥ दुःशील व्यसनमें आसक्त धर्म कर्मसे रहित हुए माता तथा वृद्ध जनोंके

वचन नहीं मानते हुए ॥ १८ ॥ वे दुरात्मा पितृ मित्रोंका निषेध करनेवाले उन्मार्ग अधर्ममें निरत दुष्ट पराई स्त्रियोंको ताकनेवाले तथा गमन करनेवाले ॥ १९ ॥ गीत बाजोंमें निरत वीणा वेणुको बजाते सैकडों वेश्या साथ लिये सदा गाते फिरते थे ॥ २० ॥ बनावटी खुशामदी मनुष्योंसे युक्त धूर्तोंकी गोष्ठीमें चतुर सुन्दर वेष सुन्दर वस्त्र सुन्दर चंदनसे विभूषित ॥ २१ ॥ सुगन्धित मालाओंसे युक्त कस्तूरीके चिह्नोंसे सेवित अनेक आभूषणोंसे शोभित मोतीके श्रेष्ठ हार पहरे ॥ २२ ॥ हाथी घोडे रथोंके समूह

उन्मार्गगौदुरात्मानौपितृमित्रनिषेधकौ ॥ अधर्मनिरतौदुष्टौपरदाराभिगामिनौ ॥ १९ ॥ गीतवादित्रनिरतौ वीणावेणुनिनादिनौ ॥ वारस्त्रीशतसंयुक्तौगायंतौचेरतुःसदा ॥ २० ॥ चाटुवाचिनरैर्युक्तौ विटगोष्ठीविशारदौ ॥ सुवेषौचारुवसनौचारुचंदनभूषितौ ॥ २१ ॥ सुगंधमाल्यमालाढ्यौकस्तूरीलक्ष्मलाक्षितौ ॥ नानालंकारशोभाढ्यौमौक्तिकोदारहारिणौ ॥ २२ ॥ गजवाजिरथौघेनक्रीडंतौतावितस्ततः ॥ मधुपानसमायुक्तौवारस्त्रीरतिमोहितौ ॥ २३ ॥ नाशयंतौपितृर्द्रव्यंसहस्रंददतुःशतम् ॥ तस्थतुःस्वगृहेरम्येनित्यंभोगपरायणौ ॥ २४ ॥ इत्थंतुतद्धनंताभ्यांविनियुक्तमसद्व्ययैः ॥ वारस्त्रीविटशैलूषमल्लचारणबंदिषु ॥ २५ ॥ अपात्रेतद्धनंदत्तंक्षितंबीजमिवोपरे ॥ नसत्पात्रेषुतद्दत्तंनब्राह्मणमुखेहुतम् ॥ २६ ॥

से युक्त इधर उधर क्रीडा करते हुए मधुपान किये वेश्या संग लिये ॥ २३ ॥ पिताका द्रव्य नाश करते सहस्रों सैकडों धन लुटाते नित्य भोग परायण अपने घरमें निवास करते थे ॥ २४ ॥ इस प्रकार वह धन उन्होंने असन्मार्गमें व्यय किया वेश्या जार शैलूष पहलवान् भाट बनावटी श्लाघा करने वाले जनोंमें ॥ २५ ॥ अर्थात् अपात्रोंमें सब धन इस प्रकार व्यय किया जिस

प्रकार ऊपरमें बोया, न कभी सत्पात्रोंको दिया, न ब्राह्मणोंके मुखमें हवन किया ॥ २६ ॥ न कभी भूतोंके पालक सब पापहारी विष्णुका अर्चन किया,इस,प्रकार उनका द्रव्य बहुत थोडे कालमें ही क्षय होगया ॥ २७ ॥ तब वे महादुःखी हो परम कृपणताको प्राप्त हुए क्षुधाकी पीडासे दुःखी हो शोचकरते मोहको प्राप्त होगये ॥ २८ ॥ वह घरमें कोई ऐसी वस्तु नहीं देखते हुए जिसे भोजन करें स्वजन बंधु सेवक उपजीवि ॥ २९ ॥ इन सबने द्रव्यके अभाव से उनको त्यागन कर दिया तब पुरमें निन्दा होने

नार्चितोभूतभृद्विष्णुःसर्वपापप्रणाशनः ॥ तयोरेवंतुतद्द्रव्यमाचिरेणक्षयंययौ ॥ २७ ॥ ततस्तौदुःखमापन्नौकार्पण्यंपरमंगतौ ॥ शोचमानौमुमुहातांक्षुत्पीडादुःखदुःखितौ ॥२८॥ तयोस्तुतिष्ठतोर्गेहेनास्तियद्भुज्यतेतदा ॥ स्वजनैर्बांधवैःसर्वैःसेवकैरुपजीविभिः ॥ २९ ॥ द्रव्याभावात्परित्यक्तौनिंद्यमानौततःपुरे ॥ पश्चाच्चौर्यंसमारब्धंताभ्यांतन्नगरेनृप ॥ ३० ॥ राजतोलोकतोभीतौस्वपुरान्निःसृतौतदा ॥ चक्रतुर्वनवासंचसर्वेषामृणपीडितौ ॥ ॥ ३१ ॥ जघ्नतुःसततंमूढौशितबाणैर्विपादितैः ॥ नानापक्षिवराहांश्चहरिणान्रोहितांस्तथा ॥ ३२ ॥ शशकाञ्छल्लकीगोधाःश्वापदांश्चबहूंस्तथा ॥ महाबलौभिल्लसंगावाखेटकरतौसदा ॥ ३३ ॥ एवंमांसमयाहारौपापाचारौपरंतप ॥ कदाचिद्भूधरंप्राप्तएकोन्यश्चवनंगतः ॥ ३४ ॥

लगी हे राजन् ! तब उन्होंने उस नगरमें चोरी करनी प्रारंभ की ॥ ३० ॥ तब राजा और लोकोंसे भीत हो अपने पुरते निकले और सबके ऋणसे पीडित हो वनमें निवास करते हुए ॥ ३१ ॥ और मूढ वहां तीक्ष्ण बाणोंसे अनेक पक्षी वराह हरिण रोहित मृग ॥ ३२ ॥ खरगोश शल्लक गोय अनेक हिंसकजीव मारने लगे वे महाबली भीलोंके संग आखेट करते थे ॥ ३३ ॥ इस प्रकार

किसी पर्वत पर प्राप्त हुए एक उनमेंसे वनको गया ॥ ३४ ॥ बडेको
मांसका आहार करते पापाचरणमें रत रहते एक समय किसी पर्वत पर प्राप्त हुए ॥ ३५ ॥ तब यमदूत
सिंहने मार लिया और छोटेको सर्पने डस लिया हे राजन् ! एक ही दिन वे दोनों पापी मरणको प्राप्त हुए ॥ ३६ ॥ हे धर्मराज ! इन दोनोंको हम आपकी
उनको पाशोंमें बांधकर यमलोकको लेगये जाकर दूतोंने कहा यह बडे पापी हैं ॥ ३७ ॥ चित्र गुप्तके द्वारा उनका लेखा लिया
आज्ञासे लाये हैं अपने भृत्योंको शीघ्र आज्ञादो कि अब हम क्या करें ॥ ३८ ॥ यमदूतैस्तदाबद्धौ
शार्दूलेनहतोज्येष्ठःकनिष्ठःसर्पदंशितः ॥ एकस्मिन्दिवसेराजन्पापिष्ठौनिधनंगतौ ॥ ३८ ॥ यमदूतैस्तदाबद्धौ
पाशैर्नीतौयमक्षयम् ॥ गत्वाभिजगदुःसर्वेतेदूताःपापिनाविमौ ॥३६॥ धर्मराजनरावेतावानीतौतवशासनात् ॥
आज्ञांदेहिस्वभृत्येषुप्रसीदकरवामकिम् ॥ ३७ ॥ आलोक्यचित्रगुप्तेनतदादूताञ्जगौयमः ॥ एकस्तुनीयतांघो
रंनिरयंतीव्रवेदनम् ॥ ३८ ॥ अपरःस्थाप्यतांस्वर्गेयत्रभोगाअनुत्तमाः ॥ तदाज्ञांतुसुसंप्राप्यदूतैस्तैः क्षिप्रकारि
भिः ॥ ३९ ॥ निक्षिप्तोरौरवेघोरेतत्रज्येष्ठोनराधिप ॥ तेषांदूतवरः कश्चिदुवाचमधुरंवचः ॥ ४० ॥ विकुण्डलम
यासार्धमेहिस्वर्गंददामिते ॥ भुंक्ष्वभोगान्सुदिव्यांस्त्वमर्जितान्स्वेनकर्मणा ॥ ४१ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे उत्तर
खंडे माघमासमाहात्म्ये वसिष्ठदिलीपसंवादे विकुण्डलस्वर्गप्राप्तिर्नामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ ॥ छ ॥
गया तब यमने कहा एकको तो घोर नरकमें जहां तीव्र वेदना होती है लेजाओ ॥ ३८ ॥ दूसरेको उत्तम भोगवाले स्वर्गमें
लेजाओ शीघ्रकारी दूतोंने उनकी आज्ञासे वैसाही किया ॥ ३९ ॥ हे राजन् ! बडा तो घोर नरकमें भेजा गया तब एक दूत
मनोहर वचन बोला ॥ ४० ॥ हे विकुंडल ! मेरे साथ आ मैं तुझे स्वर्ग दूंगा अपने कर्मसे उत्पन्न भोगोंको तू भोग ॥ ४१ ॥
॥ इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरार्धे माघमाहात्म्ये भाषाटीकायां वसिष्ठदिलीपसंवादे विकुंडलस्वर्गप्राप्तिर्नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

ऋषि बोले वह प्रसन्न मन हो मार्गमें दूतसे पूंछने लगा हृदयमें बडा सन्देह कर परमविस्मयको प्राप्त हुआ ॥ १ ॥ मनमें विचारकर किसपुण्यके प्रभाव से मुझे स्वर्गकी प्राप्ति हुई विकुंडल बोला हे श्रेष्ठ दूत ! मुझे बडा सन्देह है इस कारण तुझसे पूंछताहूं ॥ २ ॥ हम दोनोंने तुल्य कुल में जन्म लेकर तुल्यही कर्म किये दुर्मृत्युभी तुल्यही हुई तुल्यही यमराजका दर्शन हुआ ॥ ३ ॥ फिर तुल्य कर्मा मेरा भाई किस कारण नरकको गया मुझे स्वर्ग कैसे हुआ वह सन्देह तुम दूर करो ॥ ४ ॥

॥ ऋषिरुवाच ॥ ॥ ततोत्हृष्टमनाःसोपिदूतंपप्रच्छतंपथि ॥ संदेहंहृदिकृत्वातुविस्मयंपरमंगतः ॥ १ ॥ विचारयन्हृदिस्वर्गःकस्यहेतोःफलंमम ॥ विकुंडलउवाच ॥ भोदूतवरपृच्छामिसंदेहंत्वामहंपरम् ॥ २ ॥ आवांजातौकुलेतुल्येतुल्यंकर्मतथाकृतम् ॥ दुर्मृत्युरपितुल्योभूत्तुल्यंदृष्टोयमस्तथा ॥ ३ ॥ कथंसनिरयेक्षिप्तस्तुल्यकर्माममाग्रजः ॥ ममभावीकथंस्वर्गइतित्वंछिंधिसंशयम् ॥४॥ देवदूतनपश्यामिस्वस्यस्वर्गस्यकारणम् ॥ इतिपृष्टोदेवदूतोविकुंडलमुवाचह ॥ ५ ॥ यमदूतउवाच ॥ ॥ मातापितासुतोजायास्वसाभ्राताविकुंडल ॥ जन्महेतुरियं संज्ञाजन्मकर्मोपभुक्तये ॥६॥ एकस्मिन्पादपेयद्वच्छकुंतानांसमागमः ॥ पुत्रभ्रातृपितॄणांचतथा भवतिसंगमः ॥ ७ ॥ तेषांयोगोहियत्कर्मकुरुतेपूर्वभावितः ॥ तस्यतस्यफलंभुंक्तेकर्मणःपुरुषःसदा ॥ ८ ॥

हे देवदूत ! अपने स्वर्ग आनेका कारण मैं नहीं देखता हूं यह सुन देवदूत विकुंडल से बोला ॥ ५ ॥ यमदूत बोला हे विकुंडल ! माता पिता जाया भगिनी भाई यह संज्ञा तो जन्मका कारण है जन्म कर्मके भोगनेको होता है ॥ ६ ॥ जैसे एक वृक्षपर अनेक पक्षियोंका आगमन होता है इसी प्रकार पुत्र माता पिता आदिका समागम होता है ॥ ७ ॥ उनके योगसे जो यह पूर्व भावित कर्म

करता है उस उस कर्मसे यह पुरुष सब कर्मोंको भोग करता है ॥ ८ ॥ हे वैश्य ! प्रीति पूर्वक तुझसे सत्य कहताहूं कि, मनुष्य प्रीतिसे शुभाशुभ कर्म अपना किया हुआ कालमें वारंवार भोगताहै॥९॥एकही कर्म करता और एकही उसका फल भोगता है हेवैश्य! कोई किसी के कर्मको प्राप्त नहीं होता है ॥ १० ॥ इस कारण तेरा भ्राता घोर नरक में गया हे धर्मात्मन् ! तुम धर्मसे स्वर्गलोकको जातेहो ॥ ११ ॥ विकुंडल बोला, हम दोनोंनें सदा पाप किया, कभी धर्ममें मन नहीं लगाया, यदि हमारा पुण्य जानते हो तौ

सत्यंवदामितेप्रीत्यानरःकर्मशुभाशुभम् ॥ स्वकृतंभुंजतेवैश्यकालेकालेपुनःपुनः ॥ ९ ॥ एकःकरोतिकर्माणि एकस्तत्फलमश्नुते ॥ अन्योन्यंलिप्यतेवैश्यकर्मनान्यस्यकस्यचित् ॥ १० ॥ अतस्तुनरकेपापेतवभ्राता सुदारुणः ॥ त्वंचधर्मेणधर्मात्मन्स्वर्गंप्राप्स्यसिशाश्वतम् ॥ ११ ॥ ॥ विकुंडलउवाच ॥ ॥ अवाभ्योः समपापेषुनपुण्येषुरतंमनः ॥ यदिजानासिमत्पुण्यंतन्मांत्वंकृपयावद ॥ १२ ॥ ॥ यमदूतउवाच ॥ शृणुवैश्य प्रवक्ष्यामियत्त्वयापुण्यमर्जितम् ॥ जानामितदहंसर्वंनत्वंवेत्सिसुनिश्चितम् ॥१३॥ हरमित्रसुतोविप्रःसुमित्रो वेदपारगः ॥ -॥ आसीत्तस्याश्रमः पुण्योयमुनादक्षिणेतटे ॥ १४ ॥ तेनतस्मिन्वनेसख्यंजातंतवविशांवर ॥ सत्संगेनत्वयास्नातंमाघमासद्वयंतथा ॥ १५ ॥

कृपाकरके कहो ॥ १२ ॥ यमदूतने कहा हे वैश्य ! जो तैंने किया है सो मैं कहताहूं तू सुन मैं सब जानताहूं परन्तु तुझको उसकी खबर नहीं ॥ १३ ॥ हरमित्रका पुत्र सुमित्र वेदपारगामी ब्राह्मण है उसका पुण्य आश्रम यमुनाके दक्षिण तटमें है ॥ १४ ॥ हे वैश्यश्रेष्ठ ! वनमें उसके साथ तेरी मित्रता होगई और उस सत्संगतिके प्रभावसे तैंने माघके महीनेमें दो स्नान किया ॥ १५ ॥

यमुनाके सब पाप हरने वाले पवित्र जलमें जो कि सब पाप दूरकरनेमें लोक विख्यात तीर्थहै ॥ १६ ॥ सो एक वार माघस्नानके कारण तू सब पापसे विमुक्त हुआ और दूसरे के पुण्य से स्वर्गकी प्राप्ति तुझको हुई ॥ १७ ॥ उस पुण्यके प्रभाव से स्वर्गमें आनंद कर और नरकमें तेराभाई यमकी यातना भोगे ॥ १८ ॥ असिपत्र से छेदित और मुद्गरों से भेदित पत्थरों के प्रहार से चूर्णीय अंग अंगारोंसे तापित होगा ॥ १९ ॥ श्रीदत्तात्रेय बोले इस प्रकार दूतके वचन सुनकर भाईके दुःखसे दुःखी सब अंगसे पुलकित दीनहो

कालिंदीपुण्यपानीयेसर्वपापहरेशुभे ॥ तत्तीर्थेलोकविख्याते सर्वपापप्रणाशने ॥ १६ ॥ एकेनसर्वपापेभ्यो विमुक्तस्त्वंविशांवर ॥ द्वितीयमाघपुण्येनप्राप्तःस्वर्गस्त्वयानघ ॥ १७ ॥ त्वंतत्पुण्यप्रभावेणमोदस्वसुचिरं दिवि ॥ नरकेपुतवभ्रातासहतांयमयातनाम् ॥ १८ ॥ छिद्यमानोसिपत्रैश्चभिद्यमानश्चमुद्गरैः ॥ चूर्ण्यमानः शिलापृष्ठैस्तप्तांगारेपुभार्जितः ॥ १९ ॥ ॥ श्रीदत्तात्रेयउवाच ॥ ॥ इतिदूतवचःश्रुत्वाभ्रातृदुःखेनदुःखितः ॥ पुलकांकितसर्वांगोदीनोसौविनयान्वितः ॥ २० ॥ उवाचदेवदूतंतंमधुरंनिपुणंवचः ॥ मैत्रीसाप्तपदीसाधोसतां भवतिसत्फला ॥ २१ ॥ मैत्रीभावंविचिंत्याथमामुपाकर्तुमर्हसि ॥ त्वत्तोहंश्रोतुमिच्छामिसर्वज्ञस्त्वंमतोमम ॥ ॥ २२ ॥ यमलोकंनपश्यंतिकर्मणा केनमानवाः ॥ गच्छंतियेननिरयंतन्मेत्वंकृपयावद ॥ २३ ॥

विनय पूर्वक ॥ २० ॥ देवदूतसे मधुरता पूर्वक मधुर वचन बोला हे महात्मन् ! सत्पुरुषों की सातपदकेही साथ होने से मित्रता होजाती है ॥ २१ ॥ मित्रताका भाव विचारकर तुम मेरे ऊपर कृपाकरो मैं तुमसे सुननेकी इच्छा करताहूं तुम मेरे मतमें सर्वज्ञ हो ॥ २२ ॥ किस कर्मसे मनुष्य यमलोक का दर्शन नहीं करते जिससे नरकको न जांय सो कृपा करके तुम मुझसे

॥ यमदूतउवाच ॥ ॥ सम्यक्पृष्टंत्वयासौम्यलुप्तपापोसिसांप्रतम् ॥ विशुद्धहृदयपुंसांबुद्धिः श्रेयसिजायते
॥ २४ ॥ यद्यप्यवसरोनास्तिममसेवापरस्यवै ॥ तथापिचतवस्नेहात्प्रवक्ष्यामियथामति ॥२५॥ मनसाकर्म
णावाचासर्वावस्थासुसर्वदा ॥ परपीडांनकुर्वंतिनतेयांतियमालयम् ॥ २६ ॥ नवेदैर्नचदानैश्चनतपोभिर्न
चाध्वरैः ॥ कथंचित्सद्गतिंयांतिपुरुषाःप्राणिहिंसकाः ॥ २७ ॥ अहिंसापरमोधर्मोह्यहिंसापरमंतपः ॥ अहिं
सापरमंदानमित्याहुर्मुनयः सदा ॥ २८ ॥ मशकान्मत्कुणान्दंशान्यूकादिप्राणिनस्तथा ॥ आत्मौपम्ये
नरक्षंतिमानवायेदयालवः ॥ २९ ॥ तप्तांगारमयंकीलमार्गंप्रेततरंगिणीम् ॥ दुर्गतिंनचपश्यंतिकृतांतस्यचते
नराः ॥ ३० ॥ भूतानियेत्रहिंसंतिजलस्थलचराणिवै ॥ जीवनार्थंहितेयांतिकालसूत्रांचदुर्गतिम् ॥ ३१ ॥

कहो ॥ २३ ॥ यमदूत बोले सौम्य! भली बात पूछी इससमय तुम पापरहित हो विशुद्ध हृदय होनेमें पुरुषोंकी कल्याण मार्गमें बुद्धि लगती है ॥ २४ ॥ यद्यपि परसेवाके कारण मुझे अवसर नहीं है, तथापि तेरी प्रीतिके कारण मैं तुझसे कहताहूं ॥२५॥ सब अवस्थाओंमें मन वचन कर्मसे जो किसीको पीड़ा नहीं देते, वे यमालयको नहीं जाते ॥ २६ ॥ हिंसा करनेवाले पुरुष वेद दान यज्ञ तपसेभी सद्गतिको प्राप्त नहीं होते ॥ २७ ॥ अहिंसाही परम धर्म अहिंसाही परम तप अहिंसाही परम दान ऐसा मुनि जनोंने सदा कथन किया है ॥ २८ ॥ मशक डांश खटमल लीख जूंआदिकोभी दयालु पुरुष पीडा देनेकी इच्छा नहीं करते अपनी समान रक्षा करते हैं ॥ २९ ॥ तप्त अंगारे के बने कीलवाले मार्गमें प्रेतकी तरंगवाली दुर्गति वे पुरुष नहीं देखते हैं तथा कृतान्त का दर्शन नहीं करते हैं ॥ ३० ॥ जो जलथल के प्राणियोंकी हिंसा करते हैं और अपने भोजनके निमित्त करते

हैं वे कालकी गतिको प्राप्त नहीं होते ॥ ३१ ॥ वहां उनको उनके शरीरकाही मांस भोजन करनेको मिलता राध रुधिर फेन मज्जा वसा मिलती वहां औंधेमुख करके डाल दिये जाते हैं कीडे काटते हैं ॥ ३२ ॥ अंधकारमें परस्पर एक दूसरे को खाते हैं इसप्रकार दारुण शब्द करते एक कल्प वहां निवास करना पडता है ॥ ३३ ॥ हे वैश्य ! फिर वे नरकसे निकलकर स्थावरयोनिको प्राप्तहोते हैं फिर ये क्रूर अनेक तिर्यग् योनियों में निवास करते हैं ॥३४॥ हे वैश्य ! फिर वे जाति अंधे काने कुबडे लँगड़े दरिद्री

स्वमांसभोजनास्तत्रपूयशोणितफेनदाः ॥ मज्जंतश्चवसापंकंदुष्टाःकीटैरधोमुखाः ॥ ३२ ॥ परस्परंचखादंतो ध्वांतेचान्योन्यघातिनः ॥ वसंतिकल्पमेकंतेरटंतोदारुणंरवम् ॥ ३३ ॥ नरकान्निःसृतावैश्यस्थावराःस्युश्चिरं तुते ॥ ततोगच्छंतितेक्रूरास्तिर्यग्योनिशतेषुच ॥ ३४ ॥ पश्चाद्भवंतिजात्यंधाःकाणाःकुब्जाश्चपंगवः ॥ दरिद्राअंगहीनाश्चपुरुषाःप्राणिहिंसकाः ॥ ३५ ॥ तस्माद्वैश्यपरद्रोहंकर्मणामनसागिरा ॥ लोकद्वयेसुखप्रेप्सुर्धर्मज्ञोनसमाचरेत् ॥ ३६ ॥ लोकद्वयेनविंदंतिसुखानिप्राणिहिंसकाः ॥ येहिंसंतिनभूतानिनतेबिभ्यतिकुत्रचित् ॥ ३७ ॥ प्रविशंतियथानद्यःसमुद्रमृजुवक्रगाः ॥ सर्वेधर्माह्यहिंसायांप्रविशंतितथादृढम् ॥ ३८ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरखंडेमाघमाहात्म्ये दिलीपवसिष्ठसंवादे विकुंडलदूतसंवादोनाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अंगहीन होते हैं जो प्राणियोंकी हिंसा करते हैं ॥३५॥ हे वैश्य! इस कारण पराये द्रोह कर्म मन वाणी से दोनों लोकमें सुखकी प्राप्ति करनेवाला कभी न करे ॥३६॥ हिंसा करनेवालोंको दोनों लोक में सुख नहीं होता जो किसीकी हिंसा नहीं करते उनको कहीं से भय नहीं होता ॥ ३७ ॥ जिस प्रकार सीधी तथा कुटिलगामिनी नदी समुद्र में प्राप्त होती हैं इसी प्रकार सम्पूर्ण धर्म अहिंसामें प्राप्त होते हैं यह निश्चय है ॥ ३८ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे माघमाहात्म्ये पण्डितज्वालाप्रसाद मिश्रकृत भाषा टीकायां सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

करली है वैश्य श्रेष्ठ ! जिसने सबको अभय
यमदूत बोला वह सब तीर्थोंमें स्नान करचुका सब यज्ञों में उसने दीक्षा प्राप्त कर ली वे कभी यमालय का दर्शन नहीं करते ॥ २ ॥
देदिया ॥ १ ॥ अपने २ शास्त्रोक्त धर्मोंको जो यथा योग्य पालन करते हैं वे कभी यमालय का दर्शन नहीं करते ॥ ३ ॥ जो वर्णाश्रम धर्मों
ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ संन्यासी अपने धर्म में निरत रहकरही स्वर्गमें निवास करते हैं ॥ ४ ॥ जो इष्टापूर्त यज्ञों में रत और पंचयज्ञों
के यथोक्त कारी हैं और जितेन्द्रिय हैं वे सनातन ब्रह्मलोकको जाते हैं ॥ ४ ॥

॥ यमदूतउवाच ॥ ॥ सस्नातःसर्वतीर्थेषुसर्वयज्ञेषुदीक्षितः ॥ अभयंयेनभूतेभ्योदत्तमत्रविशांवर ॥ १ ॥ निजांनिजांश्चशास्त्रोक्तान्वर्णधर्मानमिश्रितान् ॥ पालयंतीहयेवैश्यनतेयांतियमालयम् ॥ २ ॥ ब्रह्मचारीगृहस्थश्चवानप्रस्थोयतिस्तथा ॥ स्वधर्मनिरताःसर्वेनाकपृष्ठेवसंतिते ॥ ३ ॥ यथोक्तकारिणःसर्वेवर्णाश्रमसमन्विताः ॥ नराजितेंद्रियायांतिब्रह्मलोकंचशाश्वतम् ॥ ४ ॥ इष्टापूर्तरतायेचपंचयज्ञरताश्चये ॥ दयान्विताश्चयेनित्यंनेक्षंतेतेयमालयम् ॥ ५ ॥ इंद्रियार्थैर्निवृत्तायेसमर्थावेदवादिनः ॥ अग्निपूजारतानित्यंतेविप्राःस्वर्गगामिनः ॥ ६ ॥ अदीनवादिनःशूराःशत्रुभिः परिवेष्टिताः ॥ आहवेषुविपन्नायेतेषांमार्गोदिवाकरः ॥ ७ ॥ अनाथस्त्रीद्विजार्थेचशरणागतपालने ॥ प्राणांस्त्यजंतियेवैश्यतेमोदंतेसदादिवि ॥ ८ ॥

॥ ५ ॥ जो इन्द्रियों के विषयों से पृथक्
में प्रीति करते हैं तथा नित्य दया युक्त हैं वे यमालय का दर्शन नहीं करते ॥ ६ ॥ दीन वचन न कहनेवाले शूर शत्रुओं
समर्थ वेदवादी हैं नित्य अग्निहोत्र करते हैं वे ब्राह्मण स्वर्गगामी होते हैं ॥ ७ ॥ जो अनाथ स्त्री ब्राह्मण तथा शरणमें
से वेष्टित संग्राम में प्राण देनेवाले सूर्य मार्गमें होकर गमन करते हैं ॥

आयंके निमित्त प्राण त्यागन करते हैं हे वैश्य ! वे स्वर्गमें सदा आनंद करते ह ॥ ८ ॥ लँगडे अंधे बालक वृद्ध रोगी अनाथ दरिद्री इनको जो सदा अन्न देते हैं वे स्वर्गसे पतित नहीं होते ॥ ९ ॥ पंकमें फँसी गौ और रोगमें मग्न ब्राह्मण को देख कर जो मनुष्य उद्धार करते हैं वे अश्वमेधियोंके लोकको जाते हैं ॥ १० ॥ जो गौग्रास देकर गौकी शुश्रुषा करते हैं जो बैलके ऊपर नहीं चढते वे स्वर्गगामी होते हैं ॥ ११ ॥ जहां गौ जल पीती है वहां जो गर्त मात्र करदेते हैं वे विना यमलोकका दर्शन

पंग्वंधबालवृद्धानांरोग्यनाथदारिद्रिणाम् ॥ येपुष्णंतिसदावैश्यनच्यवंतेदिवस्तुते ॥ ९ ॥ गांदृष्ट्वापंकनिर्मग्नां रोगमग्नंद्विजंतथा ॥ उद्धरंतिनरायेतुतेपांलोकोश्वमेधिनाम् ॥ १० ॥ गोग्रासंयेप्रयच्छंतिशुश्रूषंतिचगांसदा ॥ येनारोहंतिगोपृष्ठेतेस्युःस्वर्लोकगामिनः ॥ ११ ॥ गर्तमात्रंचयेचक्रुर्यत्रगौर्वितृपीभवेत् ॥ यमलोकमदृष्ट्वैवतेयांतिस्वर्गतिंनराः ॥ १२ ॥ वापीकूपतडागादौधर्मस्यांतोनविद्यते ॥ पिबंतिस्वेच्छयायत्रजलस्थलचराःसदा ॥ ॥ १३ ॥ यथायथाचपानीयंपिबंतिस्वेच्छया नराः ॥ तथातथाऽक्षयःस्वर्गोधर्मवृद्धिर्विशांवर ॥१४॥ प्राणिनां जीवनंवारिप्राणावारिणिसंस्थिताः ॥ तत्प्रपांयेप्रयच्छंतिते दीप्यंतेसदादिवि ॥ १५ ॥ अश्वत्थमेकंपिचुमंदमेकंन्यग्रोधमेकंदशतिंतिणीकम् ॥ कपित्थविल्वामलकत्रयंचपंचाम्रवापीनरकं नपश्येत् ॥ १६ ॥

किये स्वर्गको जाते हैं ॥१२॥ बावडी कूप तडागादिमें धर्म अनन्त होता है जहां स्वेच्छासे स्थल चारी जलपान करते हैं ॥१३॥ स्वेच्छासे मनुष्य जैसे २ जलपान करते हैं हे वैश्य श्रेष्ठ वैसे २ ही उनको धर्मकी वृद्धि और स्वर्गकी प्राप्ति होती है ॥ १४ ॥ प्राणियोंका जीवन और प्राण जलमें स्थित है सो जो पौ लगाते हैं वे सदा स्वर्गमें रहते हैं ॥ १५ ॥ एक पीपल एक रुईका

एक न्यग्रोध (वटवृक्ष) तिंतिणी (इमली) के दश कैथ बेल आमलेके तीन आमके पांच वृक्ष लगाने से नरकका दर्शन नहीं होता है ॥ १६ ॥ वृक्ष पांच भी अच्छे हैं कुपुत्र दशभी अच्छे नहीं वृक्ष पत्र पुष्प फल मूलोंसे सदा पितृतर्पण करते हैं ॥ १७ ॥ वह स्त्री पुत्र अग्निहोत्र नहीं करता अर्थात् उसे आवश्यकता नहीं जो मार्गमें वृक्ष लगाकर सघन छायाकर देता है ॥ १८ ॥ वह सदा सुखी बसता सदा आनंद देता है वह उसी समय यज्ञ कर रहा है जो वृक्ष लगाता है ॥ १९ ॥

वरंभूमिरुहाःपंचनतुकोष्टरुहादश ॥ पत्रैःपुष्पैःफलैर्मूलैःकुर्वंतिपितृतर्पणम् ॥ १७ ॥ नतत्करोत्यग्निहोत्रं सुद्वृत्तंयोपितःसुतः ॥ यत्करोतिघनच्छायःपादपःपथिरोपितः ॥१८॥ सदासुखीसवसतिसदादानंप्रयच्छति ॥ सदायज्ञंसयजते योरोपयतिपादपम् ॥ १९ ॥ सच्छायान्फलपुष्पाढ्यान्पादपान्पथिरोपितान् ॥ येछिंदंति सदामूढास्तेयांतिनिरयेंचिरम् ॥ २० ॥ नपश्यंतियमंवैश्यतुलसीवनरोपणात् ॥ सर्वपापहरंपुण्यंकामदं तुलसीवनम् ॥ २१ ॥ तुलसीकाननंवैश्यगृहेयस्मिंश्चतिष्ठति ॥ तद्गृहंतीर्थभूतंहिनोयांति यमकिंकराः ॥ ॥ २२ ॥ तावद्वर्षसहस्राणियावद्बीजदलानिच ॥ वसंतिदेवलोकेतेतुलसींरोपयंतिये ॥ २३ ॥ तुलसीगंधमाघ्रायपितरस्तुष्टमानसाः ॥ प्रयांतिगरुडारूढाभवनंचक्रपाणिनः ॥ २४ ॥

अच्छी छायावाले फल पुष्पोंसे युक्त मार्ग में लगाये वृक्ष जो मूर्ख काटते हैं वे नरकको जाते हैं ॥ २० ॥ हे वैश्य ! तुलसीका वन रोपण करने से यम का दर्शन नहीं होता सब पाप हरनेवाला परम पवित्र कामना देनेवाला तुलसीका वनहै ॥२१॥ हे वैश्य ! जिसके घरमें तुलसी कानन है वह घर तीर्थरूप है वहां यमके किंकर नहीं जाते ॥ २२ ॥ जो तुलसी लगाते हैं उनके बीज दल जितने हैं तितने कालतक वे स्वर्ग में निवास करते हैं ॥ २३ ॥ तुलसी गंध सूंघते ही पितर संतुष्ट होजाते हैं गरुड पर आरूढ हो

भगवानके स्थानको जाते हैं ॥२४॥ हे वैश्य श्रेष्ठ । नर्मदाका दर्शन गंगाकास्नान तुलसीवनका स्पर्श यह सब समानही है ॥२५॥ इनके लगाने पालने सिंचने तथा दर्शन करने से तुलसी मन वचन कर्म से उत्पन्न हुए पापको दूर करती है ॥ २६ ॥ हे वैश्य श्रेष्ठ ! द्वादशीको प्रतिपक्षमें ब्रह्मादिक देवता तुलसीका दर्शन पूजन करते हैं ॥ २७ ॥ मणि कांचनके पुष्प मोती यह तुलसीपत्रसे पूजन करनेकी षोडशी कला भी नहीं है ॥ २८ ॥ सहस्र आम लगाने से सौ पीपल लगाने से जो फल है वह एक तुलसीके

दर्शनंनर्मदायास्तुगंगास्नानंविशांवर ॥ तुलसीवनसंस्पर्शः सममेतत्त्रयंस्मृतम् ॥ २५ ॥ रोपणात्पालनात्से
कादर्शनात्स्पर्शनान्नृणाम् ॥ तुलसीदहतेपापंवाङ्मनःकायसंचितम् ॥ २६ ॥ पक्षेपक्षेतुसंप्राप्तेद्वादश्यांवै
श्यसत्तम ॥ ब्रह्मादयोपिकुर्वंतितुलसीवनपूजनम् ॥२७॥ मणिकांचनपुष्पाणितथामुक्ताफलानिच ॥ तुलसी
पत्रपूजायाःकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ २८ ॥ आम्ररोपसहस्रेणपिप्पलानांशतेनच ॥ यत्फलंहितदेकेनतुलसी
विटपेनच ॥ २९ ॥ विष्णुपूजनसंसक्तस्तुलसींयस्तुरोपयेत् ॥ युगायुतंदशैकंचरोपकोरमतेदिवि ॥ ३० ॥
तुलसीमंजरीभिस्तुकुर्याद्धरिहरार्चनम् ॥ नसगर्भगृहंयातिमुक्तिभागीभवेन्नरः ॥ ३१ ॥ पुष्करादीनितीर्था
निगंगाद्याःसरितस्तथा ॥ वासुदेवादयोदेवावसंतितुलसीदले ॥३२॥ आरोप्यतुलसींवैश्यसंपूज्यतद्दलैर्हरिम्॥
वसंतिमोदमानास्तेयत्रदेवश्चतुर्भुजः ॥ ३३ ॥

विटप से होताहै ॥ २९ ॥ विष्णु पूजनमें संसक्त चित्त जो तुलसीको रोपण करते हैं वह दशसहस्र युग तक स्वर्ग में रहते हैं ॥ ॥ ३० ॥ जो तुलसीकी मंजरी से नारायणकी पूजा करते हैं वह गर्भ में नहीं आते सदा मुक्ति भागी रहते हैं ॥ ३१ ॥ पुष्करादि तीर्थ गंगादि नदी वासुदेवादि देवता सब तुलसीदल में निवास करते हैं ॥ ३२ ॥ जो तुलसीको लगाकर उस से नारायणका

पूजन करते हैं वे प्रसन्न होकर भगवानके निकट निवास करते हैं ॥ ३३ ॥ एक काल दो काल अथवा तीन कालम जो मनुष्य रेवा नदीमें प्रकट हुए भूतपतिका अर्चन करता है ॥ ३४ ॥ अथवा स्फटिक मणिके रत्न के पार्थिव के वा स्वयं प्रादुर्भूत अथवा कहीं तीर्थ वा वन में स्थापित किये हुएको ॥ ३५ ॥ नमः शिवाय इस मंत्र द्वारा जो जप करता है वह मनुष्य यमलोककी कथाभी श्रवण नहीं करते हैं ॥३६॥ शिवकी पूजाके प्रभावसे शिवभक्त शिव में तत्पर चौदह इन्द्रपर्यन्त शिवलोकमें आनंद करते

एककालंद्विकालंवात्रिकालंवापियोनरः ॥ समर्चयतिभूतेशंलिंगेरेवासमुद्भवे ॥ ३४ ॥ स्फाटिकेरत्नलिंगेवापार्थिवेवास्वयंभुवि ॥ स्थापितेवाक्वचिद्देश्यतीर्थेतीर्थेगिरौवने ॥ ३५ ॥ नमःशिवायमंत्रेणकुर्वंतस्तज्जपंसदा ॥ शृण्वंतियमलोकस्यकथामपिनतेनराः ॥ ३६ ॥ शिवपूजाप्रभावेणशिवभक्ताःशिवेरताः ॥ मोदंतेशिवलोकंतेयावदिंद्राश्चतुर्दश॥३७॥ प्रसंगेनापिमोहेनदंभेनापिहिलोभतः ॥ येसेवंतेमहादेवंनतेपश्यंतिभास्करिम् ॥३८॥ शिवार्चनसमंपुण्यंसर्वपापप्रणाशनम् ॥ सर्वैश्वर्यप्रदंवैश्यनास्तिकिंचिज्जगत्त्रये ॥ ३९ ॥ शिवभक्तिंप्रकुर्वाणायेद्विपंतिजनार्दनम् ॥ तेपांनिरयपातस्तुतत्कालेचउदाहृतः ॥ ४० ॥ द्रव्यमन्नंफलंतोयंशिवस्वंनस्पृशेत्क्वचित् ॥ निर्माल्यंनैवसंलंघेत्कूपेसर्वंचतत्क्षिपेत् ॥ ४१ ॥

हैं॥ ३७॥प्रसंग से भी दंभ मोह वा लोभयुक्त होकर भी जो शिवका दर्शन करतेहैं वे यमका दर्शन नहीं करते हैं॥ ३८॥शिवार्चनकी समान पुण्यकारक पापका नाश करनेवाला सब ऐश्वर्यका देनेवाला त्रिलोकी में नहीं है ॥३९॥ हे वैश्य! शिवभक्ति करनेवाले यदि जनार्दनकी निन्दा करें अथवा नारायणके भक्त शिवकी निन्दा करें तो अवश्य नरकपात होता है और इस में कुछभी सन्देह नहीं है॥४०॥ द्रव्य अन्न फल जल जो शिव का धनहै उसको ग्रहण न करे तथा उनके निर्माल्यको लंघन न करे कहीं एकांतमें निक्षेप

करदे ॥ ४१ ॥ जो लोभ वा मोहसे मक्खीके पाद मात्र भी शिवका धन लताहै चढाया खाताहै वह कल्प पर्यन्त नरक पाता है शिव निर्माल्य योगियोंको ग्राह्य है जो कि, लिया करते हैं, शिव लिंगपर चढा हुआ ही सर्व साधारणको अग्राह्य है अन्य नहीं ॥ ॥४२॥ उन्तालीस से बयालीस श्लोकतक अप्रासंगिक श्लोक होनेसे क्षेपक विदित होते हैं, तृण काष्ठ वा पाषाण का जो शिवकी मंदिर बनाते हैं वह मनुष्य शिवके साथ सदा शिवलोक में आनंद करते हैं ॥४३॥ ब्रह्मा विष्णु महादेव इन तीनों देवताओंमें किसी एक

मक्षिकापादमात्रंहिशिवस्वमुपजीवति ॥ मोहाल्लोभात्सपच्येतकल्पांतंनरकंनरः ॥ ४२ ॥ तृणैःकाष्ठैश्चपाषाणै र्येकुर्वंतिशिवालयम् ॥ मोदंतेसहरुद्रेणतेनराःशिवसन्निधौ ॥ ४३ ॥ ब्रह्मविष्णुमहादेवप्रासादंमठमेवच ॥ कृत्वा तुसुचिरंकालंतत्रलोकेवसंतिते ॥ ४४ ॥ येधर्ममठगोशालाःपथिविश्राममंदिरम् ॥ यतीनांसदनंवैश्यदानानां चकुटीरकम् ॥ ४५ ॥ ब्रह्मशालांचविपुलांब्राह्मणस्यचमंदिरम् ॥ सृष्ट्वायांतिविशांश्रेष्ठइंद्रस्यभवनंनराः ॥४६॥ जीर्णोद्धारेणवैतेषांतत्फलंद्विगुणंभवेत् ॥ तद्भंगंयत्रयःकुर्यात्सगच्छेन्निरयंध्रुवम् ॥४७॥ देवविप्रयतीनांतुमठलो भविमोहितः ॥ मठाधिपत्यंयःकुर्यात्सर्वधर्मबहिष्कृतः ॥ ४८ ॥

देवताका भी मंदिर बनाने से चिरकाल तक उन उन देवताओंके लोक में निवास करता है ॥४४॥ जो मार्गमें धर्मशाला मठ या विश्राममंदिर बनाते हैं हे वैश्य! जो यतियोंको स्थानकुटी बनाते हैं दान देते हैं ॥ ४५ ॥ ब्रह्मशाला तथा ब्राह्मणका मंदिर बनाते हैं हे वैश्यश्रेष्ठ! वे इन्द्र भवनमें निवास करते हैं ॥ ४६ ॥ और जो इन स्थानोंका जीर्णोद्धार करते हैं उनको दुगुना फल होता है और जो इनको तोडता है वह घोर नरक को जाता है ॥ ४७ ॥ पत्र पुष्प फल द्रव्य अन्न मठ जो

पचालेते हैं वे इक्कीस नरकोंका दुःख भोगते हैं ॥ ४८ ॥ जो देव ब्राह्मण यतियोंके मठको लोभसे अपना कर
लेता है वह सब धर्मसे बहिष्कृत होता है ॥ ४९ ॥ जो अपने पुत्र पशु बांधवोंको नरक में ले जाने चाहै वह इस ब्राह्मणोंके
तथा गौओंके स्थानमें अधिकार करताहै ॥५०॥ मठधारियोंका अन्न अभोज्य है उसको खाकर चान्द्रायण करै और इन
मठाधिकारियोंको स्पर्श करके सवस्त्र स्नान करे ॥ ५१ ॥ आदित्य चंडिका विष्णु रुद्र गणेश्वर इनका अन्न जो अन्यायसे खाते हैं

पत्रंपुष्पंफलंतोयंद्रव्यमन्नंमठस्यच ॥ योश्नातिनरकान्घोरान्सेवतेचैकविंशति ॥ ४९ ॥ यइच्छेन्नरकंनेतुंसपु
त्रपशुबांधवम् ॥ तंदेवेष्वधिपंकुर्याद्गोशुचिब्राह्मणेषुच ॥ ५० ॥ अभोज्यंमठिनामन्नंभुक्त्वाचांद्रायणंचरेत् ॥
स्पृष्ट्वामठपतिंवैश्यसवासाजलमाविशेत् ॥ ५१ ॥ आदित्यंचण्डिकांविष्णुंरुद्रंचैवगणेश्वरम् ॥ उपभुञ्जंतिये
द्रव्यंतेवैनिरयगामिनः ॥ ५२ ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशानांपूजार्थंपुष्पवाटिकाम् ॥ आरोपयंतियेधन्यादेवलोकेवसं
ति ते ॥ ५३ ॥ येसदापितृदेवांश्चप्रीणयंत्यतिथीन्सदा ॥ प्राजापत्यंहितेयान्तिलोकंसर्वोत्तमोत्तमम् ॥ ५४ ॥
मूर्खोवापंडितोवापिश्रोत्रियःपतितोपिवा ॥ ब्रह्मतुल्योतिथिर्वैश्यमध्याह्नेयः समागतः ॥ ५५ ॥ पथिश्रांताय
विप्रायह्यन्यस्मैक्षुधितायच ॥ प्रयच्छंत्यन्नपानीयंतेनाकेचिरवासिनः ॥ ५६ ॥

वे नरकगामी होते हैं ॥ ५२ ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वरकी पूजाके निमित्त जो फुलवारी बनाते हैं वे धन्य हैं और देवलोकमें निवास
करते हैं ॥ ५३ ॥ जो सदा देवता पितृ अतिथियोंका पूजन श्राद्ध और सत्कार करते हैं वह प्रजापतिके सर्वोत्तम लोकोंको प्राप्त
होते हैं ॥ ५४ ॥ मूर्ख पंडित श्रोत्रिय वा पतित हे वैश्य ! मध्याह्नमें जो अपने यहां आवे वह ब्रह्मकी तुल्य सत्कार योग्य
है ॥ ५५ ॥ मार्गमें श्रान्त ब्राह्मण वा और किसी भूंखेको जो जल देते हैं वे चिरकालतक स्वर्गमें निवास करते हैं ॥ ५६ ॥

जो कभी देखे नहीं ऐसे पुरुष आनकर भूंखे प्राप्त हों तो वे जिसके घर तृप्त होते हैं वे स्वर्गमें निवास करते हैं ॥ ५७ ॥ जिसके घर आया अतिथि निराश होकर चला जाता है हे वैश्य ! सायं वा मध्याह्नमें उलटा लौटजाता है वह यमालयको जाता है ॥५८॥ जब कि नहींहै २ यह वचन सुन अतिथि निराश होकर चला जाता है वह गृहस्थीका जन्मसंचित पुण्य ग्रहणकरके ले जाता है ॥ ५९ ॥ अतिथिकी समान बंधु अतिथिकी समान धन अतिथिकी समान धर्म और अतिथिकी समान हितकारी कोई नहीं

प्राप्ताह्यदृष्टपूर्वाश्चभोक्तुकामाःक्षुधातुराः ॥ यद्गेहेतृप्तिमायांतिब्रह्मलोकेवसंतिते ॥ ५७ ॥ अतिथिर्विमुखोयस्य संगच्छेद्गृहमागतः ॥ मध्याह्नेवैश्यसायंवासप्रयातियमालयम् ॥ ५८ ॥ नास्तिनास्तिवचःश्रुत्वात्यक्ताशोह्य तिथिर्व्रजेत् ॥ आजन्मसंचितंपुण्यंगृह्णातिगृहमेधिनः ॥ ५९ ॥ नास्त्यतिथिसमोबंधुर्नास्त्यतिथिसमंधनम् ॥ नास्त्यतिथिसमोधर्मोनास्त्यतिथिसमोहितः ॥ ६० ॥ आतिथ्यस्यप्रभावेणराजानोमुनयस्तथा ॥ ब्रह्मलोकं गताद्यापिनच्यवंतेविशांवर ॥ ६१ ॥ आजन्मतोगृहस्थोयःप्रमादाद्वाकथंचन ॥ भोजयेदतिथिंनूनंनैवपश्य तिसोंतकम् ॥ ६२ ॥ सुदीप्तेषु विमानेषुभुंक्तेपीयूषमन्नदः ॥ यातिस्वर्गच्युतोवैश्यउत्तरांश्चकुरून्प्रति ॥ ६३ ॥ ततश्चभारतेवर्षेराजाभवतिधार्मिकः ॥ अन्नदोदीर्घमायुश्चविंदतेसुखसंपदः ॥ ६४ ॥

है ॥ ६० ॥ आतिथ्यकेही प्रभाव से राजा और मुनि ब्रह्मलोकको प्राप्त हुए आजतक निवृत्त नहीं होते हैं ॥ ६१ ॥ हे वैश्य ! जो जन्मसे गृहस्थ कभी प्रमादसे अतिथिको भोजन करादे वह भी यमलोकका दर्शन नहीं करते हैं ॥ ६२ ॥ प्रदीप्त विमानोंमें अमृतवत् अन्नको भोजन करते हैं और स्वर्गसे च्युत होकर उत्तर कुरुओंमें जन्म पाते हैं ॥ ६३ ॥ फिर भारतवर्षमें धर्मात्मा

राजा होता है अन्नका देनेवाला दीर्घायु और सुखसम्पत्तिको प्राप्त होताहै ॥ ६४ ॥ सब भूतोंके प्राण अन्नमें प्रतिष्ठित हैं हे वैश्य ! इस कारण अन्नका देनेवाला प्राणदाता कहा जाता है ॥ ६५ ॥ यह वैवस्वतदेवने राजा केसरिध्वजसे जब कि, वह स्वर्गलोकसे पतित होताथा करुणाकर कहा ॥ ६६ ॥ हे राजन् ! यदि तुझको स्वर्ग जानेकी इच्छा है तो कर्मभूमिमें जाकर अन्नदान कर ॥ ६७ ॥ हे वैश्य ! यह बात मैंने साक्षात् धर्मके मुखसे सुनी है अन्नदानकी समान दूसरा दान नहीं है ऐसा मैंने निश्चय कर

सर्वेषामेवभूतानामन्नेप्राणाःप्रतिष्ठिताः ॥ तेनान्नदोविशांश्रेष्ठप्राणदातास्मृतोबुधैः ॥ ६५ ॥ प्राह वैवस्वतोदेवो राजानंकेसरिध्वजम् ॥ च्यवंतंस्वर्गलोकात्तंकारुण्येनविशांपते ॥ ६६ ॥ ददस्वान्नंददस्वान्नंददस्वान्नंनराधिप॥ कर्मभूमौगतोभूयोयदिस्वर्गंत्वमिच्छसि ॥ ६७ ॥ इत्यश्राविमयावैश्यसाक्षाद्धर्ममुखादपि ॥ अन्नदानसमं दानमतोनास्तिमयोदितम् ॥ ६८ ॥ पानीयंप्रददेद्ग्रीष्मेहेमंतेचतपोधन ॥ अन्नंचसर्वदादत्त्वागच्छेद्याम्यांनयातनाम् ॥ ६९ ॥ ज्ञाताज्ञातेषुपापेषुक्षुद्रेषुचमहत्सुच ॥ षट्सुषट्सुचमासेषुप्रायश्चित्तंतुयश्चरेत् ॥ ७० ॥ निष्कल्मषोनरोवैश्यसकृतांतंनपश्यति ॥ प्रायश्चित्तंचरेद्यस्तुवाङ्मनःकायकर्मसु ॥ ७१ ॥ सप्राप्नोतिशुभाँल्लोकान्देवगंधर्वशोभितान् ॥ नित्यंजपंतियेवैश्यगायत्रींवेदमातरम् ॥ ७२ ॥

कहा है ॥ ६८ ॥ जो ग्रीष्मऋतुमें जल और हेमन्तमें अन्नदान करते हैं वे यमकी यातनाको नहीं देखते हैं ॥ ६९ ॥ ज्ञात अज्ञात छोटे बडे पापोंका जो छः छः महीनेमें प्रायश्चित्त करे ॥ ७० ॥ हे वैश्य ! वह पापरहित होकर कृतान्तको नहीं देखता है जो वाणी मन कर्मसे प्रायश्चित्त करता है ॥ ७१ ॥ वह देवगन्धर्वोंसे शोभित उत्तमलोकोंको प्राप्त होता है हे वैश्य ! जो वेदमाता

गायत्रीका नित्य जप करते हैं ॥ ७२ ॥ वा दूसरा वैदिक जप करते हैं वे पातकोंसे लिप्त नहीं होते हैं जो वेदाभ्यासमें रत होकर प्रातः सायं अग्निमें ॥७३॥ हवन करते हैं हे वैश्य ! वे ब्राह्मण शुभ गतिके अधिकारी होते हैं नित्य व्रत कर्त्ता और नित्य तीर्थसेवी ॥ ७४ ॥ नित्य जितेन्द्रिय पुरुष सत्यही कठिन यमयातनाका दर्शन नहीं करते हैं, दारुण नरकका स्मरण कर परान्नसे प्रीति त्यागन करे ॥७५॥ जो जिसका अन्न खाता है वह उसका पापही खाता है तथा प्रभातकाल स्नान करनेवाला यमकी यातनाको प्राप्त

अन्यद्वावैदिकंजाप्यंनतेलिंपंतिपातकैः ॥ वेदाभ्यासरतानित्यंसायंप्रातर्हुताशने ॥ ७३ ॥ येजुह्वतिद्विजावै श्यतेलभंतेऽक्षयांगतिम् ॥ नित्यंव्रतसमाचारोनित्यंतीर्थोपसेवकः ॥ ७४ ॥ नित्यंजितेंद्रियःसत्यंयमरौद्रं नपश्यति ॥ नरकंदारुणंस्मृत्वापरान्नेचरतिंत्यजेत् ॥ ७५ ॥ योयस्यान्नंसमश्नातितस्याश्नातिचकिल्बिषम् ॥ याम्यंहियातनादुःखंप्रातःस्नायीनविंदति ॥ ७६ ॥ प्रातःस्नानेनपूयंतेअतिपापकरानराः ॥ प्रातःस्नानं हरेद्वैश्यसबाह्याभ्यंतरंमलम् ॥ ७७ ॥ प्रातःस्नानेननिष्पापोनरोननिरयंव्रजेत् ॥ स्नानंविनातुयोभुंक्तेसम लाशीसदानरः ॥ ७८ ॥ अस्नायिनोऽशुचेस्तस्यनिराशाःपितृदेवताः ॥ स्नानहीनोनरःपापःस्नानहीनोऽ शुचिःसदा ॥ ७९ ॥

नहीं होता है ॥ ७६ ॥ प्रभात स्नान करनेसे पापी मनुष्यभी पवित्र हो जाते हैं हे वैश्य ! प्रभातकाल स्नान करनेसे बाहर भीतरका मल स्वच्छ हो जाता है ॥ ७७ ॥ प्रभातमें स्नान करनेसे पाप रहित हो मनुष्य नरकको नहीं जाता है जो स्नानके विना भोजन करता है वह पाप भोजी है ॥ ७८ ॥ जो स्नान नहीं करता अपवित्र रहता है उसके पितृ देवता निराश होजाते हैं स्नान हीन

मनुष्य पापरूप और स्नानहीन सदा अशुचि है ॥ ७९ ॥ स्नान न करनेवाला नरक भोगकर पुक्कस चाण्डालादिकी योनियोंमें जन्म लेता है, और जो तपयुक्त पर्वोंमें स्नान करते हैं ॥ ८० ॥ न उनकी दुर्गति होती न कुयोनियोंमें जन्म होता है दुस्स्वप्न और दुश्चिन्ता सदा मोघ हो जाती है ॥ ८१ ॥ हे वैश्य श्रेष्ठ ! प्रभातस्नानसे शुद्ध मनुष्योंको तिलका पात्र तिलकमल यथा विधिसे दे ॥ ८२ ॥ इसके प्रदान करनेसे फिर मनुष्य यमलोकको कभी नहीं जाते हैं, पृथ्वी, सुवर्ण, गौ यह षोडश महा दान हैं

अस्नायीनरकंभुक्त्वापुल्कसादिषुजायते ॥ येपुनस्तपसिस्नानमाचरंतीहपर्वणि ॥ ८० ॥ तेनैवदुर्गतिंयांति नजायंतेकुयोनिषु ॥ दुःस्वप्नंदुष्टचिंत्यंचवंध्यंभवतिसर्वदा ॥८१॥ प्रातःस्नानविशुद्धानांपुरुषाणांविशांवर ॥ तिलांश्चतिलपात्रंचतिलपद्मंयथाविधि ॥ ८२ ॥ दत्त्वाप्रेतपतेर्भूमिंनव्रजंतिनराःक्वचित् ॥ पृथिवींकांचनंगाश्च महादानानिषोडश ॥ ८३ ॥ दत्त्वातुननिवर्ततेस्वर्गलोकाद्विकुंडल ॥ पुण्यासुतिथिषुप्राज्ञोव्यतीपातेचसं क्रमे ॥ ८४ ॥ स्नात्वादत्त्वातुयत्किंचिन्नैवगच्छतिदुर्गतिम् ॥ नैवाक्रमंतिदातारोदारुणंरौरवंपथम् ॥८५॥ इहलोकेनजायंतेकुलेधनविवर्जिते ॥ सत्यवादीसदामौनीप्रियवादीचयोनरः ॥ ८६ ॥ अक्रोधनः क्षमासारो नातिवागनसूयकः ॥ सदादाक्षिण्यसंयुक्तःसदाभूतदयान्वितः ॥ ८७ ॥

॥ ८३ ॥ हे विकुंडल इनके दान करनेसे स्वर्गलोकसे निवृत्ति नहीं होती हे बुद्धिमान् ! पवित्र तिथियोंसे व्यतीपात वा संक्रान्तिमें ॥ ८४ ॥ स्नान दान करनेसे फिर दुर्गतिको प्राप्त नहीं होता, ऐसे दाता दारुण रौरवनरकमें नहीं पड़ते हैं ॥ ८५ ॥ इस लोकमें फिर धनहीनके यहां उसका जन्म नहीं होता जो मनुष्य सत्यवादी मौनी और प्रियवादी हैं ॥ ८६ ॥ क्रोधहीन क्षमा सारवान

बहुत न बोलनेवाले निन्दारहित सदा चतुरतायुक्त सदा प्राणियों पर दया करनेवाले ॥ ८७ ॥ पराये धर्मोंके रक्षक पराये गुणोंके कथन करनेवाले जो तिलमात्रभी मनसे पराये धनको नहीं लेते हैं ॥ ८८ ॥ हे वैश्यश्रेष्ठ ! वह नरककी यातनाको प्राप्त नहीं होते पराये निन्दक पापी पाप में अनुरक्त पुरुष ॥ ८९ ॥ प्रलय पर्यन्त घोर नरकमें पड़े रहते हैं खोटे वचन कहने वाले को नरक गामी जानना चाहिये ॥ ९० ॥ इसमें सन्देह नहीं कि वह फिर भी नरकगामी होगा कृतघ्न की तीर्थ और तपस्या से

गोप्ताचपरधर्माणांवक्तापरगुणस्यच ॥ परस्वंतिलमात्रंतुमनसापिनयोहरेत् ॥ ८८ ॥ नपश्यतिविशांश्रेष्ठसवै नरकयातनाम् ॥ परापवादीपापिष्ठःपापेष्वभिरतःसदा ॥ ८९ ॥ पच्यतेनरकेघोरेयावदाभूतसंप्लवम् ॥ वक्ताप रुपवाक्यानांमंतव्योनरकागतः॥९०॥ संदेहोनविशांश्रेष्ठपुनर्यास्यतिदुर्गतिम् ॥ नतीर्थैर्नतपोभिश्चकृतघ्नस्याऽस्तिनिष्कृतिः ॥ ९१ ॥ सहतेयातनांघोरांसनरोनरकेचिरम् ॥ पृथिव्यांयानितीर्थानितेषुमज्जतियोनरः ॥९२॥ जितेंद्रियोजिताहारोनसयातियमालयम् ॥ नतीर्थेपातकंकुर्यात्त्यजेत्तीर्थोपजीवनम् ॥ ९३ ॥ अन्यतीर्थं समांगंगांयोब्रवीतिनराधमः ॥ सयातिरौरवंवैश्यनरकंदारुणंभृशम् ॥ ९४ ॥ तीर्थेप्रतिग्रहस्त्याज्यस्त्याज्यो धर्मस्यविक्रयः ॥ दुर्जरंपातकंतीर्थेदुर्जरश्चप्रतिग्रहः ॥ ९५ ॥

निष्कृति नहीं होती ॥ ९१ ॥ वह मनुष्य चिरकालतक नरक में घोर यातनाको प्राप्त होगा पृथ्वीमें जितने तीर्थहैं उन में जो मनुष्य स्नान करताहै ॥९२॥ जितेन्द्रिय जिताहार होने से वह फिर यमालयको नहीं जाता तीर्थमें पातक न करै तीर्थमें जीविका न करै ॥ ९३ ॥ जो नराधम गंगाको और तीर्थोंकी समान कहताहै हे वैश्य ! वह दारुण रौरव नरकमें पड़ताहै ॥ ९४ ॥ तीर्थमें दान न ले धर्मका विक्रय न करै तीर्थ में किया पातक दुर्जर है और इसी प्रकार प्रतिग्रहभी दूर नहीं होता ॥ ९५ ॥

तीर्थमें किये समीपापदुर्जरहैं इनके करनेसे नरक होताहै एक बार गंगामें स्नान करनेसे पवित्र होकर ॥९६॥ कितनेही पाप किये हों परन्तु वह मनुष्य नरकको नहीं जाता व्रत दान तप यज्ञ और जो पवित्र करने वाले हैं ॥९७॥ वे गंगाके एक बिन्दु अभिषेक की समान नहीं है ऐसा हमने सुना है धर्म द्रव्य धर्म बीज वैकुण्ठनाथके चरण से च्युत हुई ॥ ९८ ॥ फिर शिवजीने शिरपर धारण की इत्यादि कारणोंसे गंगा अनेक प्रकार से निर्मल हुई है जो ब्रह्म निर्गुण प्रकृति से परे है ॥ ९९ ॥

तीर्थेषुदुर्जरंसर्वमेतत्कृत्वानरकंव्रजेत् ॥ सकृद्गंगांभसिस्नात्वापूतोगांगेनवारिणा ॥ ९६ ॥ नरोननरकंयाति अपिपातकराशिकृत् ॥ व्रतंदानंतपोयज्ञाः पवित्राणीतराणिच ॥ ९७ ॥ गंगाबिंद्वभिषेकस्यनसमानीतिविश्रुतम् ॥ धर्मद्रव्यंधर्मबीजंवैकुंठचरणच्युतम् ॥ ९८ ॥ धृतंमूर्ध्निमहेशेनयद्गाङ्गममलंजलम् ॥ यद्ब्रह्मवनसंदेहोनिर्गुणंप्रकृतेःपरम् ॥ ९९ ॥ तेनकिंसमतांगच्छेदपिब्रह्मांडगोलके ॥ गंगेतिनामग्रहणाद्योजनानांशतैरपि ॥ ॥ १०० ॥ नरोननरकंयातिकिंतयासदृशंभवेत् ॥ नान्येनदह्यतेसद्यःक्रियानरकदायिनी ॥ १ ॥ गंगांभसि प्रयत्नेनस्नातव्यंतैश्चमानुषैः ॥ प्रतिग्रहानिवृत्तोयः प्रतिग्रहक्षमोपिसन् ॥ २ ॥ सद्विजोद्योततेवैश्यतारारूपश्चिरंदिवि ॥ गामुद्धरंतियेपंकाद्येचरक्षंतिरोगिणम् ॥ ३ ॥

ब्रह्माण्ड गोलकमें उसकी समताको किस प्रकार प्राप्त हो सक्ता है गंगा इस नामके ग्रहण करने से सौ योजनसे भी ॥ १०० ॥ मनुष्य नरकको प्राप्त नहीं होता नरक देने वाली क्रिया शीघ्र और कार्य से दग्ध नहीं होती ॥ १ ॥ प्रयत्न से गंगाजलमें मनुष्योंको स्नान करना चाहिये जो प्रतिग्रहसे निवृत्त है और प्रतिग्रहमें क्षमावाला है ॥ २ ॥ हे वैश्य ! वह ब्राह्मण तारे की

समान स्वर्ग में प्रकाशित होता है जो पंक से गौका उद्धार करते हैं जो रोगी की रक्षा करते हैं ॥ ३ ॥ जो गोशाला में शरीर त्यागते हैं वे आकाश में तारागण होते हैं प्राणायाम करनेवाले यमलोक का दर्शन नहीं करते हैं ॥ ४ ॥ दुष्कृत कर्म करनेवाले भी पापहीन होते हैं हे वैश्य ! जो दिन २ सोलह सोलह प्राणायाम करते हैं ॥ ५ ॥ उनकी भ्रूणहत्या का पाप दूर होता है जो तप करते व्रत नियम धारण करते हैं ॥ ६ ॥ और सहस्र गोदान करते हैं वह प्राणायाम की बराबर फल है जो कुशाग्र से एक

म्रियंतेगोगृहेचैवतेस्युर्नभासितारकाः ॥ यमलोकंनपश्यंतिप्राणायामरतानराः ॥ ४ ॥ अपिदुष्कृतकर्माणस्त एवहतकिल्बिषाः ॥ दिवसेदिवसेवैश्यप्राणायामास्तुषोडश ॥ ५ ॥ अपिभ्रूणहताःपुंसांपुनंत्यहरहःकृताः ॥ तपांसियानितप्यंतेव्रतानिनियमाश्चये ॥ ६ ॥ गोसहस्रप्रदानञ्चप्राणायामास्तुतत्समाः ॥ गंगांभोपिकुशाग्रे णमासमेकंतुयःपिबेत् ॥७॥ संवत्सरशतंसाग्रंप्राणायामस्तुतत्समः ॥ पातकंतुमहच्चचतथाक्षुद्रोपपातकम् ॥८॥ प्राणायामैःक्षणात्सर्वंभस्मसाच्चविशांवर ॥ मातृवत्परदारान्येसंपश्यंतिनरोत्तमाः ॥ ९ ॥ तेनयांतिविशांश्रेष्ठ कदाचिद्यमयातनाम् ॥ मनसापिपरेषांयःकलत्राणिनसेवते ॥ ११० ॥ सहिलोकद्वयेदेवस्तेनवैश्यधराधृता ॥ तस्मात्सर्वात्मनात्याज्यंपरदारोपसेवनम् ॥ ११ ॥

महीने तक गंगाजल पान करते हैं ॥ ७ ॥ सो सम्वत्सर प्राणायाम करनेकी बराबर उसका फल है महापातक और क्षुद्र उपपातक हैं ॥ ८ ॥ प्राणायाम से क्षणार्ध में भस्म हो जाते हैं जो नरश्रेष्ठ पराई स्त्रियों को माता की समान देखते हैं ॥ ९ ॥ हे वैश्य श्रेष्ठ ! वे कभी यमलोकको नहीं जाते जो मनसे भी पराई स्त्रियोंकी सेवा नहीं करते ॥ ११० ॥ उसने दोनों लोक मानो अपने वशमें

नयंतिपरदारास्तुनरकानेकविंशातिम् ॥ नलोभेजायतेयेपांपरद्रव्येपुमानसम् ॥ १२ ॥ तेयांतिदेवलोकेहि
नयाम्यंवैश्यसत्तम ॥ सत्सुक्रोधनिमित्तेपुयःक्रोधेननजीयते ॥ १३ ॥ जितस्वर्गः समतंव्यःपुरुपोऽक्रोधनो
भुवि ॥ मातरंपितरंयस्तुआराधयतिदेववत् ॥ १४ ॥ संप्राप्तेवार्धकेकालेनसयातियमालयम् ॥ पितुराधिक्य
भावेनयेऽर्चयंतिगुरुंनराः ॥ १५ ॥ भवंत्यतिथयोलोकेब्रह्मणस्तेविशांवर ॥ इहताश्चस्त्रियोधन्याःशीलस्यपरि
रक्षणात् ॥ १६ ॥ शीलभंगेननारीणांयमलोकः सुदारुणः ॥ शीलंरक्षंतियानित्यंदुष्टसंगविवर्जनात् ॥ १७ ॥
शीलेनहिपरः स्वर्गः स्त्रीणांवैश्यनसंशयः ॥ विशुद्धपाकयज्ञेननिपिद्धाकरणेनच ॥ १८ ॥ स्वर्गतिर्विहितावै
श्यनगतिस्तस्यनारकी ॥ विचारयंतियेशास्त्रंवेदाभ्यासरताश्चये ॥ १९ ॥

कर लिये हैं इस कारण सब प्रकार से पराई स्त्रियोंका सेवन न करना चाहिये ॥ ११ ॥ पराई स्त्री इक्कीसवार नरक म प्राप्त कराती है जिनका मन दूसरों के मनका लोभी नहीं होताहै ॥ १२ ॥ हे वैश्य श्रेष्ठ ! वे देवलोक को गमन करते हैं यमलोक को नहीं जाते, जो क्रोधके निमित्त प्राप्त होनेमें क्रोध को नहीं जीतता है ॥ १३ ॥ उस अक्रोधी पुरुप को स्वर्गका जीतनेवाला जानना चाहिये, जो मातापिताको देवता जानकर आराधना करताहै ॥ १४ ॥ वह वृद्धसेवी यमालय को गमन नहीं करता है जो मनुष्य पिता से अधिक गुरु की शुश्रूपा करते हैं ॥ १५ ॥ हे वैश्य श्रेष्ठ ! वे ब्रह्मलोक को गमन करते हैं इसमें संदेह नहीं शीलकी रक्षा करनेवाली स्त्री धन्य हैं ॥ १६ ॥ शील भंगसे स्त्रियोंको दारुण यमलोककी प्राप्ति होती है जो स्त्री दुष्टोंका संग न करके शील की रक्षा करती है ॥ १७ ॥ हे वैश्य ! स्त्रियोंको शीलसेही परम स्वर्ग की प्राप्ति होती है विशुद्ध पाकयज्ञ और निषिद्ध कार्यके न करने से ॥ १८ ॥ हे वैश्य ! स्वर्गकी गति होती है फिर वह नरक को नहीं जाता जो शास्त्रका विचार

करते हैं और वेदाभ्यास करते हैं ॥ १९ ॥ जो स्वर्गति प्राप्त कराने वाले पुराणादि सुनाते और पढ़ते हैं जो स्मृतियोंकी व्याख्या करते और धर्म को प्रतिबोधन करते हैं ॥ १२० ॥ जो वेदान्त शास्त्र में निपुण हैं उन्होंने इस पृथ्वीको धारण कररक्खाहै उन उनके अभ्यास और माहात्म्य से वे पापरहित होगये हैं ॥ २१ ॥ वे ब्रह्मलोक को जाते हैं जहां फिर मोह नहीं होता जो वेदशास्त्र के ज्ञान को दूसरों को देते हैं ॥ २२ ॥ उस संसार के भय दूर करने वाले की देवताभी पूजा करते हैं ॥ १२३ ॥

स्वर्गतिंविहितांयेचश्रावयंतिपठंतिच ॥ व्याकुर्वंतिस्मृतिंयेचयेधर्मप्रतिबोधकाः ॥ १२० ॥ वेदांतनिपुणायेवैतैरियंजगतीधृता ॥ तत्तदभ्यासमाहात्म्यैः सर्वेतेहतकिल्बिषाः ॥ २१ ॥ गच्छन्तिब्रह्मणोलोकंयत्रमोहोनविद्यते ॥ ज्ञानमादाययोदद्याद्वेदशास्त्रसमुद्भवम् ॥ २२ ॥ अपिदेवास्तमर्चंतिभवबंधविदारकम् ॥ १२३ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणेउत्तरखंडेमाघमाहात्म्येवासिष्ठदिलीपसंवादेअष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ ॥ यमदूतउवाच ॥ श्रूयतामद्भुतंह्येतद्रहस्यंवैश्यसत्तम ॥ संमतंधर्मराजस्यसर्वलोकाभयप्रदम् ॥ १ ॥ नयमंयमदूतंचनदूतान् घोरदर्शनान् ॥ पश्यंतिवैष्णवानूनंसत्यमेतन्मयोदितम् ॥ २ ॥ आहास्मान्यमुनाभ्रातासादरंचपुनःपुनः ॥ भवद्भिर्वैष्णवास्त्याज्यानतेस्युर्ममगोचराः ॥ ३ ॥

इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरखण्डे माघमासमाहात्म्ये वशिष्ठदिलीपसंवादे पण्डित ज्वालाप्रसादमिश्रकृत भाषाटीकायामष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ यमदूत बोले हे वैश्य ! मैं एक अद्भुत रहस्य कहताहूं सुनो जो धर्मराजका संमत और सब लोकका अभय देनेवाला है ॥ १ ॥ यह मैं सत्य कहताहूं भगवान् विष्णुकी भक्ति करनेवाले यम यमदूत घोर दर्शनवालोंका कभी दर्शन नहीं करते हैं ॥ २ ॥ यमुनाके भ्राता

यमराजजीने यह हमसे वारंवार कहा है कि विष्णु भक्तोंको कभी तुम हमारे निकट मत लाना ॥ ३ ॥ हे दूतो ! जो प्रसंग से कभी एक वार भगवानका स्मरण करते हैं वह सब पापरहित हो भगवान विष्णु के लोकको गमन करते हैं ॥ ४ ॥ दुराचारी दुश्शील सदा पापी यदि विष्णुका भजन करता हो तो उसके निकट तुम न जाना ॥ ५ ॥ हरिभक्त जिनके घर भोजन करते हैं जो उनकी संगति करते हैं उनके सत्संगतिसे पाप दूर होगये हैं उनके घर भी तुम गमन न करना ॥ ६ ॥ हे

येस्मरंतिसकृद्भक्ताःप्रसंगेनापिकेशवम् ॥ तेविध्वस्ताखिलाघौघायांतिविष्णोःपरंपदम् ॥ ४ ॥ दुराचारोपिदुःशीलःसदापापरतोपिवा ॥ भवद्भिःसर्वदात्याज्योविष्णुंचेद्भजतेनरः ॥ ५ ॥ वैष्णवोयद्गृहेभुंक्तेपांवैष्णवसंगतिः ॥ तेपिवःपरिहार्याःस्युस्तत्संगहतकिल्विषाः ॥६॥ इतिवैश्यानुशास्तास्मान्देवोदंडधरःसदा ॥ अतोनवैष्णवोयातिराजधानींयमस्यतु ॥ ७ ॥ विष्णुभक्तिंविनानॄणांपापिष्ठानांविशांवर ॥ उपायोनास्तिनास्त्यन्यःसंततुंनरकांबुधिम् ॥ ८ ॥ श्वपाकमिवनेक्षंतेलोकाविप्रमवैष्णवम् ॥ वैष्णवोवर्णबाह्योपिपुनातिभुवनत्रयम् ॥ ॥ ९ ॥ नरकेपिचिरंमग्नाःपूर्वजायेकुलद्वये ॥ तदैवयांतितेस्वर्गंयदार्चंतिसुतोहरिम् ॥ १० ॥

वैश्य ! उन दंडधारी देवने इस प्रकार हमको सदा शिक्षा दी है इस कारण हरिभक्त यमराजकी राजधानीमें गमन नहीं करता है ॥ ७ ॥ हे वैश्यश्रेष्ठ ! हरि भक्तिके विना पापियोंका संसार सागर से तरनेका और उपाय नहीं है ॥ ८ ॥ जो हरि भक्त न हो उस ब्राह्मणको लोक देखनेकी इच्छा नहीं करते हरिभक्त यदि वर्णबाहर भी हो तो वह सबको हरिभक्तिके प्रभाव से पवित्र करता है ॥ ९ ॥ जो दो कुलके[1] पूर्वज चिरकालसे नरक में मग्न हैं जब उनकी संतान नारायणका पूजन करती है

[1] नानाका कुल और पिताका कुल।

तभी वे स्वर्गको जाते हैं ॥ १० ॥ जो हरिभक्तोंके दास हैं वैष्णव अन्न भोजी हैं हे वैश्य ! वे भी श्रेष्ठ गतिको जाते हैं इस में मन्देह नहीं ॥ ११ ॥ हरिभक्तोंके दिये प्रसाद की यत्नसे इच्छा करै सब पाप इससे दूर होते हैं यदि यह न मिले तो चरणामृतही ग्रहण करै ॥ १२ ॥ "गोविन्दाय नमः" इस मंत्रको जपता हुआ यदि कहीं मरजाय तो उसको हम वा यमराज नहीं देखते हैं ॥ १३ ॥ अंग सहित समग्र न्यास ऋषि छंद देवताका स्मरण दीक्षा ग्रहण "ओं नमो भगवते वासुदेवाय" यह बारह अक्षरका

विष्णुभक्तस्ययेदासावैष्णवान्नभुजश्चये ॥ तेपिक्रतुभुजांश्रेष्ठगतिंयांतिनराःकिल ॥ ११ ॥ अर्थयेद्वैष्णवस्यान्नं प्रयत्नेनविचक्षणः ॥ सर्वपापविशुद्धयर्थंतदभावेजलंपिबेत् ॥ १२ ॥ गोविंदेतिजपन्मंत्रंकुत्रचिन्म्रियतेयदि ॥ सनरोनयमंपश्येत्तंचप्रेक्षामहेवयम् ॥१३॥ सांगंसमग्रंसंन्यासंसऋपिच्छंददैवतम् ॥ तद्दीक्षाविधिसंपन्नंसन्मंत्रं द्वादशाक्षरम् ॥१४॥ अष्टाक्षरंचमंत्रेशंयेजपंतिनरोत्तमाः ॥ तान्दृष्ट्वाब्रह्महाशुद्धस्तेजातावैष्णवाःस्वयम् ॥१५॥ शंखिनिश्चक्रिणोभूत्वाब्रह्मायुर्वनमालिनः ॥ वसंतिवैष्णवेलोकेविष्णुरूपेणतेनराः ॥ १६ ॥ हृदिसूर्येजलेवा थप्रतिमास्थंडिलेपुच ॥ समभ्यर्च्यहरिंयांतिनरास्तेवैष्णवंपदम् ॥ १७ ॥ अथवासर्वदापूज्योवासुदेवोमुमुक्षु भिः ॥ शालिग्रामशिलाचक्रेचक्रेकीटविनिर्मिते ॥ १८ ॥

मंत्र जप ॥ १४ ॥ तथा "ओं नमो नारायणाय" इस अष्टाक्षर मंत्रका जो जप करतेहैं उनके दर्शनसे ब्रह्महत्यारे भी शुद्ध होतेहैं वे स्वयं हरिभक्त हैं ॥ १५ ॥ शंख चक्र धारण किये ब्रह्माकी आयुपर्यन्त वनमाली होकरै विष्णुरूपसे नारायणके लोकमें निवास करते हैं ॥ १६ ॥ हृदय सूर्य जल स्थंडिल अथवा प्रतिमामें नारायणकी अर्चा करने से हरिभक्त परमपदको प्राप्त होतेहैं ॥१७॥ मुक्तकी इच्छा करनेवालोंको वासुदेवक सदा जन करना चाहिये शालिग्रामशिलाचक्रमें कीट विनिर्मित चक्रमें ॥ १८ ॥

विष्णुकी स्थिति है यही सब पापके नाश करनेवाले हैं यह सब पुण्य देनेवाले हैं और सब पापके दूर करनेवाले हैं सबको मुक्तिके देनेवाले हैं ॥ १९ ॥ जो नारायणको चक्र शिला अथवा शालिग्राम शिलमें पूजन करते हैं वह सहस्रराजसूयकी समान प्रतिदिन फल पाते हैं ॥ २० ॥ जिस समय जानने योग्य ब्रह्म निर्वाण अच्युतको प्रमाण करते हैं वह प्रसाद उनको शालिग्रामके पूजनसे होजाता है ॥ २१ ॥ बडे काष्ठ में स्थित अग्नि जैसे स्थान में प्रकाश करती है इसी प्रकारसे सर्वव्यापी नारायण शालिग्राम

अधिष्ठानंहितद्विष्णोःसर्वपापप्रणाशनम् ॥ सर्वपुण्यप्रदंवैश्यसर्वेषामपिमुक्तिदम् ॥ १९ ॥ यःपूजयेद्धरिंचक्रे शालिग्रामशिलोद्भवे ॥ राजसूयसहस्रेणतेनेष्टंप्रतिवासरम् ॥ २० ॥ यदानमंतिवेद्यंतंब्रह्मनिर्वाणमच्युतम् ॥ तत्प्रसादोभवेन्नणांशालिग्रामशिलार्चनात् ॥ २१ ॥ महत्काष्ठस्थितोवह्निर्यथास्थानेप्रकाशते ॥ तथातथाहरिर्व्यापीशालिग्रामेप्रकाशते ॥ २२ ॥ अपिपापसमाचारा नकर्मण्याधिकारिणः ॥ शालिग्रामार्चकावैश्यनवैयांतियमालयम् ॥ २३ ॥ नतथारमतेलक्ष्म्यांनतथास्वपुरेहरिः ॥ शालिग्रामशिलाचक्रेयथासरमतेसदा ॥ ॥ २४ ॥ अग्निहोत्रंहुतंतेनदत्तापृथ्वीससागरा ॥ येनार्चितोहरिश्चक्रेशालिग्रामसमुद्भवे ॥ २५ ॥ सकृत्करोतिमनुजःशालिग्रामशिलार्चनम् ॥ पापानिविलयंयांतितमःसूर्योदयेयथा ॥ २६ ॥

शिलामें प्रकाश करते हैं ॥ २२ ॥ जो पापी अकर्मी अनधिकारी हैं वे भी शालिग्राम पूजनसे यमालय को नहीं जाते ॥ २३ ॥ भगवान् इस प्रकार लक्ष्मी और अपने शरीरमें नहीं रमते हैं जिस प्रकार शालिग्राम शिला और चक्र शिलामें रमण करते हैं ॥ २४ ॥ उसने अग्निहोत्र कर लिया सागरपर्यन्त भूमि दान करली जिसने चक्र शिला और शालिग्राम में नारायणका अर्चन किया है ॥ २५ ॥ जो मनुष्य एक बार भी शालिग्राम शिला में अर्चन करता है उसके पाप इस प्रकार

नाश होजाते हैं जिस प्रकार सूर्योदयसे अंधकार ॥ २६ ॥ हे वैश्य ! शालिग्रामसे प्रादुर्भूत बारह शिला जिसने विधिपूर्वक पूजन की उसका पुण्य तुझसे कहता हूं ॥ २७ ॥ बारह कोटि शिवलिंग सुवर्णके कमलसे बारह कल्प पूजनेसे जो फल है वह एक दिनमें मिल जाता है ॥ २८ ॥ जो भक्तिसे शालिग्रामकी सौ शिलाका पूजन करता है वह नारायणके लोकमें बहुत काल बस कर चक्रवर्ती होता है ॥ २९ ॥ जो मनुष्य काम क्रोध लोभसे व्याप्त होकर शालिग्राम पूजन करे वह भी हरिलोकको जाता है

शिलाद्वादशभोवैश्यशालिग्रामसमुद्भवाः ॥ विधिवत्पूजितायेनतस्यपुण्यंवदामिते ॥२७ ॥ कोटिद्वादशलिंगैस्तुपूजितैःस्वर्णपंकजैः ॥ यच्चद्वादशकल्पेषुदिनेनैकेनतद्भवेत् ॥ २८ ॥ यःपुनःपूजयेद्भक्त्याशालिग्रामशिलाःशतम् ॥ उषित्वासहरेर्लोकंचक्रवर्तीहजायते ॥ २९ ॥ कामक्रोधैश्चलोभैश्चव्याप्तोयश्चनरोत्तमः ॥ सोपियातिहरेर्लोकंशालिग्रामशिलार्चनात् ॥ ३० ॥ यःपूजयतिगोविंदंशालिग्रामेसदानरः ॥ आभूतसंप्लवंयावन्नैवप्रच्यवतेदिवः ॥ ३१ ॥ विनातीर्थैर्विनादानैर्विनायज्ञैर्विनामतिम् ॥ मुक्तिंयांतिनरावैश्यशालिग्रामशिलार्चनात् ॥ ३२ ॥ नरकंगर्भवासंचतिर्यक्त्वंचकुयोनिषु ॥ नयातिवैश्यपापिष्ठःशालिग्रामाच्युतार्चकः ॥ ३३ ॥ दीक्षाविधानमंत्रज्ञश्चक्रेयोवलिमाहरेत् ॥ सयातिवैष्णवंधामसत्यंसत्यंमयोदितम् ॥ ३४ ॥ स्नातःसर्वतीर्थेषुसर्वयज्ञेषुदीक्षितः ॥ शालिग्रामशिलातोयैर्योभिषेकंसमाचरेत् ॥ ३५ ॥

॥ ३० ॥ जो मनुष्य शालिग्राम में गोविन्द का पूजन सदा करता है वह प्रलयकालतक स्वर्गसे नहीं गिरता है ॥ ३१ ॥ विना तीर्थ विना यज्ञ विना बुद्धिके शालिग्राम पूजनसे मनुष्य मुक्त हो जातेहैं ॥ ३२ ॥ नरक गर्भवास तिर्यक् योनिमें जन्मको हे वैश्य! कैसाभी पापीहो शालिग्राम पूजनसे प्राप्त नहीं होता ॥ ३३ ॥ मंत्रका और दीक्षा विधानका जाननेवाला बलिपूजा करता है वह अवश्य विष्णुके लोकको प्राप्त होता है इसमें सन्देह नहीं ॥ ३४ ॥ वह सबतीर्थोंमें स्नान करचुका और सब यज्ञोंमें

दीक्षित हो चुका, जिसने शालिग्रामको स्नान कराया ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ नैवेद्य अनेक प्रकारके पुष्प धूप दीप चंदन स्तोत्र बाजे गीतादिसे शालिग्राम शिलार्चन ॥ ३७ ॥ जो मनुष्य भक्तिपरायण होकर कलियुगमें करता है, वह सहस्र कोटि कल्पतक नारायणके समीप निवास करता है ॥ ३८ ॥ कोटि लिंगके दर्शन पूजनका जो फल है तथा स्तुतिका जो फल है वह एक शालिग्रामजीके पूजनसे फल होता है ॥ ३९ ॥ एक बारही शालिग्राम शिलाके पूजन करनेसे सांख्य वर्जित मनुष्यभी अवश्य मुक्तिको प्राप्त होते हैं

गंगागोदावरीरेवानद्योमुक्तिप्रदास्तुयाः ॥ निवसंतिसतीर्थास्ताःशालिग्रामशिलाजले ॥ ३६ ॥ नैवेद्यैर्विविधैः पुष्पैर्धूपैर्दीपैश्चचंदनैः ॥ स्तोत्रवादित्रगीताद्यैःशालिग्रामशिलार्चनम् ॥ ३७ ॥ कुरुतेमानवोयस्तुकलौभक्तिपरायणः ॥ कल्पकोटिसहस्राणिरमतेसन्निधौहरेः ॥३८॥ लिङ्गैस्तुकोटिभिर्दृष्टैर्यत्फलंपूजितैःस्तुतैः ॥ शालिग्रामशिलायांतुएकायामपितत्फलम् ॥३९॥ सकृदभ्यर्चनाल्लिंगेशालिग्रामशिलोद्भवे ॥ मुक्तिंप्रयांतिमनुजानूनंसांख्येनवर्जिताः ॥ ४० ॥ शालिग्रामशिलारूपीयत्रतिष्ठतिकेशवः ॥ तत्रयक्षाःसुराःसिद्धाभुवनानिचतुर्दश ॥ ॥ ४१ ॥ शालिग्रामशिलाग्रेतुयःश्राद्धंकुरुतेनरः ॥ पितरस्तस्यतिष्ठंतितृप्ताःकल्पशतंदिवि ॥ ४२ ॥ येपिबंतिनरानित्यंशालिग्रामशिलाजलम् ॥ पंचगव्यसहस्रैस्तुप्राशितैःकिंप्रयोजनम् ॥४३॥ शालिग्रामशिलायत्रतत्तीर्थयोजनत्रयम् ॥ तत्रदानंचहोमश्चसर्वंकोटिगुणंभवेत् ॥ ४४ ॥

॥ ४० ॥ ॥ जहां शालिग्राम रूपसे केशव स्थित हैं, वहां यज्ञदेवता सिद्ध चौदह भुवन स्थित हैं ॥ ४१ ॥ जो मनुष्य शालिग्रामके आगे श्राद्ध करता है, उसके पितर सौ कल्पतक तृप्त होकर स्वर्गमें निवास करते हैं ॥ ४२ ॥ जो मनुष्य प्रतिदिन शालिग्रामका जलपान करते हैं उनको सहस्र पंचगव्यके आचमनसेभी क्या प्रयोजन है ॥ ४३ ॥ जहां शालिग्राम शिला स्थित

है, वहां तीन योजनपर्यन्त तीर्थ जानना, वहां दान होम करना कोटिगुणा फल करता है ॥ ४४ ॥ शालिग्रामका जल और चक्र अंकित शिलाके जलसे जो मिलाकर पान करते हैं वा देह और शिरपर धारण करते हैं ॥ ४५ ॥ उसका देह विष्णुके चक्रसे स्वयं अंकित होजाता है इसमें संदेह नहीं, वह गुप्त रहता है उसको यमके विना कोई नहीं देख सकता ॥ ४६ ॥ इसकारण हरिभक्तोंके स्थानसे दूतोंको निवारण किया है, हरिभक्तोंके चरणोदक सेवन से भीत है ॥ ४७ ॥ जो नदी सागरमें

शालिग्राशिलातोयंचक्रांकितशिलाजलैः ॥ मिश्रितंपिबतेयस्तुदेहेशिरसिधारयेत् ॥ ४५ ॥ तस्यचक्रांकितो देहोभवेन्नास्त्यत्रसंशयः ॥ गुप्तंनपश्यतेकोपिलोकेसूर्यसुतांविना ॥ ४६ ॥ अतोन्यवारयद्दूतान्वैष्णवानांगृहोत्तमे ॥ भीतोवैष्णवभक्तानांपादोदकनिषेवणात् ॥ ४७ ॥ त्रिरात्रफलदोमाघोयाःकाश्चिदसमुद्रगाः ॥ समुद्रगास्तुपक्षस्यमासस्यसरितांपतिः ॥ ४८ ॥ षण्मासफलदागोदावत्सरस्यतुजाह्नवी ॥ पादोदकंभगवतोद्वादशाब्दफलप्रदम् ॥४९॥ कोटितीर्थसहस्रैस्तुसेवितैःकिंप्रयोजनम् ॥ तोयंयदिभवेत्पुण्यंशालिग्रामसमुद्भवम् ॥ ॥ ५० ॥ शालिग्रामाशिलातोयंयःपिबेद्बिंदुमात्रकम् ॥ मातुः स्तन्यरसेनैवसभवेन्मुक्तिभाङ्नरः ॥ ५१ ॥

नहीं मिलती है वह माघमें स्नान करनेसे त्रिरात्र फल देती है, समुद्रगामिनी एक पखवारेका, सागर एक महीनेका ॥ ४८ ॥ गोदावरी छः महीनेका, गंगा एक वर्षका और भगवानका चरणोदक बारह वर्ष माघस्नान के फलका देनेवाला है ॥ ४९ ॥ करोड सहस्र तीर्थोंके सेवनसे क्या प्रयोजन है, यदि शालिग्राम शिलाके जलकी प्राप्ति होती हो ॥५०॥ जो शालिग्रामका जल एक बिन्दु मात्र पान कर ले वा माताके दुग्धमें मिलाय पान करै तो वह मनुष्य मुक्तिका अधिकारी होता है ॥ ५१ ॥

शालिग्रामके समीप कोशपर्यन्त यदि कोई कीटभी मरजाय तो वह मुक्तिका अधिकारी हो वैकुंठको जाता है इसमें संदेह नहीं ॥ ५२ ॥ शालिग्राम शिला चक्रका जो उत्तम दान करता है उसने मानो पर्वत वनसहित भूमिचक्र प्रदान करदी ॥ ५३ ॥ और जो शालिग्राम शिलाका मूल्य करता है, बेचता वा उसमें सम्मति देता है, परीक्षामें अनुमोदन करता है ॥ ५४ ॥ वह प्रलयतक नरकको जाते हैं हे वैश्य ! इसकारण चक्रका क्रय विक्रय करना उचित नहीं ॥ ५५ ॥ हे वैश्य ! बहुत कहनेसे

शालिग्रामसमीपेतुक्रोशमात्रंसमंततः ॥ कीटकोपिमृतोयातिवैकुंठभवनंध्रुवम् ॥ ५२ ॥ शालिग्रामशिलाच
क्रंयोदद्याद्दानमुत्तमम् ॥ भूचक्रंतेनदत्तंस्यात्सशैलवनकाननम् ॥ ५३ ॥ शालिग्रामशिलायास्तुमौल्यंचैवकरो
तियः ॥ विक्रेताचानुमंताचयःपरीक्षानुमोदकः ॥ ५४ ॥ तेसर्वेनरकंयांतियावदाभूतसंप्लवम् ॥ अतस्तद्वर्जये
द्वैश्यचक्रस्यक्रयविक्रयम् ॥ ५५ ॥ बहुनोक्तेनकिंवैश्यकर्तव्यंपापभीरुणा ॥ स्मरणंवासुदेवस्यसर्वपापहरं
सदा ॥ ५६ ॥ तपस्तप्त्वानरोघोरमरण्येनियतेंद्रियः ॥ यत्फलंसमवाप्नोतितत्स्मृत्वागरुडध्वजम् ॥ ५७ ॥
कृत्वातुबहुधापापंनरोमोहसमन्वितः ॥ नयातिनरकंनत्वासर्वपापहरंहरिम् ॥ ५८ ॥ पृथिव्यांयानितीर्थानि
पुण्यान्यायतनानिच ॥ तानिसर्वाण्यवाप्नोतिविष्णोर्नामानुकीर्तनात् ॥ ५९ ॥

क्या है पापसे डरनेवालेको सब पाप दूर करनेवाले वासुदेवका स्मरण नित्य करना चाहिये ॥ ५६ ॥ जो मनुष्य वनमें घोर तप करके जितेन्द्रिय होकर जो फल प्राप्त करता है, वह गरुडध्वजके नामस्मरण करनेसे प्राप्त होता है ॥ ५७ ॥ मोहसे युक्त होकर मनुष्य अनेक प्रकारके पाप करकेभी सब पापहारी हरिको प्रणाम कर फिर नरकको नहीं प्राप्त होताहै ॥ ५८ ॥ पृथ्वीमें जितने

तीर्थ और पवित्र पुण्य स्थान हैं, वह सब विष्णुके नाम कीर्तन करनेसेही प्राप्त होजाते हैं ॥ ५९ ॥ जो लोग शार्ङ्ग धनुषधारी नारायणकी शरणको प्राप्त हुए हैं, वे यमलोकको नहीं जाते, न उनको नरक वास होता है ॥ ६० ॥ हे वैश्य ! जो वैष्णव होकर शिवकी निन्दा करते हैं वह वैष्णव लोकको नहीं जाते परंतु नरकको प्राप्त होते हैं ॥ ६१ ॥ जो मनुष्य प्रसंगसेभी एकादशीका व्रत करता है, वह यमके दुःखको नहीं प्राप्त होता, ऐसा हमने यमराजसे सुना है ॥ ६२ ॥ इसकी समान त्रिलोकीमें

देवंशार्ङ्गधरंविष्णुंयेप्रपन्नाःपरायणम् ॥ नतेपांयमसालोक्यंनतेवानरकौकसः ॥ ६० ॥ वैष्णवःपुरुषोवैश्य शिवनिंदांकरोतियः ॥ नगच्छेद्वैष्णवंलोकंसयातिनरकंध्रुवम् ॥६१॥ उपोष्यैकादशीमेकांप्रसंगेनापिमानवः॥ नयातियातनांयाम्यामितिनोयमतःश्रुतम् ॥ ६२॥ नेदृशंपावनंकिंचित्त्रिपुलोकेपुविद्यते ॥ यादृशंपद्मनाभस्य दिनंपातकनाशनम् ॥ ६३ ॥ तावत्पापानिदेहेस्मिन्वसंतीहविशांवर ॥ यावन्नोपवसेज्जंतुःपद्मनाभदिनंशुभम् ॥ ६४ ॥ अश्वमेधसहस्राणिराजसूयशतानिच ॥ एकादश्युपवासस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ ६५ ॥ एकादशेंद्रियैःपापंयत्कृतंवैश्यमानवैः ॥ एकादश्युपवासेनतत्सर्वंविलयंव्रजेत् ॥ ६६ ॥ एकादशीसमंकिंचित्पुण्यंलोकेनविद्यते ॥ व्याजेनापिकृतायैस्तुतेपियांतिनभास्करिम् ॥ ६७ ॥

पवित्र कोई नहीं है, जैसी यह एकादशी पाप को दूर करनेवाली है ॥ ६३ ॥ हे वैश्य ! तभीतक देहमें पातक निवास करते हैं, जबतक मनुष्य एकादशीका व्रत नहीं करते हैं ॥ ६४ ॥ हजार अश्वमेध और सौ राजसूय यज्ञका फलभी एकादशीकी षोडश कलाकी समान नहीं है ॥ ६५ ॥ हे वैश्य ! जो मनुष्यने ग्यारह इंद्रियोंसे पाप किया है, वह एकादशीके पुण्यसे सब नष्ट हो जाता है ॥ ६६ ॥ एकादशीकी समान त्रिलोकीमें कोई पुण्य नहीं है, जो किसी बहानेसेभी करते हैं वह यमलोकको प्राप्त नहीं

आरोग्यकी दाता है, अच्छी स्त्री और दीर्घायु पुत्रकी देनेवाली है
होते हैं ॥ ६७ ॥ यह सब भोगकी देनेवाली शरीरमें यमुना चन्द्रभागाका स्नान कोईभी एकादशीके समान
॥ ६८ ॥ हे वैश्य ! गंगा गया काशी पुष्कर कुरुक्षेत्र रेवा वेणी ॥ ६९ ॥ रात्रिमें जागरण करके एकादशीके दिन व्रत करके
नहीं है, वे मनुष्य अनायाससे वैष्णव पदको प्राप्त होते हैं ॥ ७० ॥ इस में सन्देह नहीं, यह सच
पैतृक पक्षमें दश माताके पक्ष में दश ॥ ७१ ॥ प्रियके पक्षके भी दश सन्तानोंको उद्धार करता है

सर्वभोगप्रदाह्येषाशरीरारोग्यदायिनी ॥ सुकलत्रप्रदाचैषाजीवपुत्रप्रदायिनी ॥ ६८ ॥ नगंगानगयावैश्यन काशीनचपुष्करम् ॥ नचापिकौरवंक्षेत्रंनरेवानचवेणिका ॥ ६९ ॥ यमुनाचंद्रभागाचदिनेननसमाहरेः ॥ अनायासेनयेनात्रप्राप्यतेवैष्णवंपदम् ॥ ७० ॥ रात्रौजागरणंकृत्वासमुपोष्यहरेर्दिनम् ॥ दशवैपैतृकेपक्षेमातृके दशपूर्वजान् ॥ ७१ ॥ प्रियायादशवैश्यैतान्समुद्धरतिनिश्चितम् ॥ तएवसंगनिर्मुक्तानागारिकृतकेतनाः ॥७२॥ स्रग्विणः पीतवस्त्राहिप्रयांतिहरिमंदिरम् ॥ बालत्वेयौवनेवापिवृद्धत्वेवाविशांवर ॥ ७३ ॥ उपोष्यैकादशीं नूनंनैतिपापोपिदुर्गतिम् ॥ उपोष्येहत्रिरात्राणिकृत्वातीर्थेचमज्जनम् ॥ ७४ ॥ दत्त्वाहेमतिलान्गाश्चस्वर्गतियां तिमानवाः ॥ तीर्थेनस्नांतियेवैश्यनदत्तंकांचनंतुयैः ॥ ७५ ॥

संगसे निर्मुक्त होकर भगवानके लोकको प्राप्त होता है ॥७२॥ माला पितांबरधारी हरि मंदिरको प्राप्त होते हैं बालक पन यौवन और बुढापा ॥ ७३ ॥ इनमें एकादशीके व्रतकरनेवाले पापसे दुर्गतिको प्राप्त नहीं होते, तीन रात व्रतकरके और तीर्थमें मज्जन करके ॥ ७४ ॥ सुवर्ण तिल गोदान करके मनुष्य स्वर्गको प्राप्त होते हैं। हे वैश्य ! जो तीर्थमें स्नान नहीं करते जिन्होंने सुवर्णका

दान नहीं किया ॥ ७५ ॥ अथवा जिन्होंने कुछ तप नहीं किया वे सर्वत्र दुःखी होते हैं, मैं आपसे संक्षेपसे नरक निवारक धर्मको कहताहूं ॥ ७६ ॥ जो मन वचन कर्मसे किसीका द्रोह नहीं करते हैं इन्द्रियोंका विरोध और नारायणकी सेवा ॥ ७७ ॥ वर्णाश्रम धर्मका पालन करना तप और दान स्वर्गकी इच्छा करनेवाला सदा करै ॥ ७८ ॥ अपने हितकी इच्छा करकै उपानह छत्र वस्त्र अन्न मूल फल जल ॥७९॥ यह बात निरंतर आचरण करनी चाहिये दरिद्री यह नहीं कर सकते. धनी इसको सदा करै

नैवतसंतपःकिंचित्तेस्युःसर्वत्रदुःखिताः ॥ संक्षिप्यवच्मितेधर्मंनरकस्यानिवारकम् ॥ ७६ ॥ अद्रोहःसर्वभूतेषुवाङ्मनःकायकर्मभिः ॥ इंद्रियाणांनिरोधश्चदानंचहरिसेवनम् ॥ ७७ ॥ वर्णाश्रमाणांधर्माणांपालनंविधितः सदा ॥ स्वर्गार्थीसर्वदावैश्यतपोदानंचकीर्तयेत् ॥ ७८ ॥ यथाशक्तिसमंदद्यादात्मनोहितमिच्छता ॥ उपानच्छत्रवस्त्रादिह्यन्नंमूलंफलंजलम् ॥ ७९ ॥ अवन्ध्यंदिवसंकुर्यान्नदरिद्रैर्हिमानवैः ॥ इहलोकेपरेचैवनादत्तमुपतिष्ठति ॥८०॥ इतिमत्वासदाचैवदातव्यंतुस्वशक्तितः ॥ दातारोनैवपश्यंतितांतांहियमयातनाम् ॥८१॥ दीर्घायुषोधनाढ्यास्तेभवंतीहपुनः पुनः ॥ किमत्रबहुनोक्तेनयांत्यधर्मेणदुर्गतिम् ॥ ८२ ॥ आरोहंतिदिवंधर्मैर्नराः सर्वत्रसर्वदा ॥ तेनबालत्वमारभ्यकर्तव्योधर्मसंग्रहः ॥ ८३ ॥

इस लोक वा परलोक में विना दिये नहीं मिलता है ॥ ८० ॥ ऐसा जानकर अपनी शक्तिके अनुसार सदा दान करना चाहिये दानी पुरुष यमकी यातनाको नहीं देखते हैं ॥ ८१ ॥ वारंवार दीर्घायु और धनाढ्यताको प्राप्त होते हैं बहुत कहनेसे क्या है अधर्मसे दुर्गतिको प्राप्त होते हैं ॥ ८२ ॥ धर्मसेही मनुष्य स्वर्गको सदा प्राप्त होते हैं इस कारण बालकपनसे लेकरही धर्मका

संग्रह करना चाहिये ॥ ८३ ॥ यह सब मैंने तुमसे कहा और फिर क्या सुननेकी इच्छा करते हो ॥-८४ ॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरखण्डे माघमाहात्म्ये भाषाटीकायां वसिष्ठदिलीपसंवादे शालिग्राममहिमावर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ॥ विकुंडल बोले हे सौम्य ! ताप नाशक तुम्हारा वचन श्रवण कर मेरा मन प्रसन्न हुआ गंगाकी समान सत्पुरुषोंके वचन तापका नाश करते हैं ॥ १ ॥ सत्पुरुषोंका स्वाभाविक धर्म है कि वे श्रेष्ठपुरुष उपकार करते

इतितेकथितंसर्वंकिमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ ८४ ॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेउत्तरखंडेमाघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेविकुंडलदूतसंवादेशालिग्रामशिलामहिमावर्णनंनामनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ॥ विकुंडलउवाच ॥ ॥ श्रुत्वातववचः सौम्यप्रसन्नंममममानसम् ॥ गंगेवतापहंसद्यः पापहागीःसतांयतः ॥ १ ॥ उपकर्तुंप्रियंवक्तुंगुणोनैसर्गिकःसताम् ॥ शीतांशुःक्रियतेयेनशीतलोऽमृतमंडलः ॥ २ ॥ देवदूततताब्रूहिकारुण्यान्ममपृच्छतः ॥ नरकान्निर्गतिः सद्योभ्रातुर्मेजायतेकथम् ॥ ३ ॥ ॥ श्रीदत्तात्रेयउवाच ॥ ॥ इतितस्यवचःश्रुत्वादेवदूतोजगादह ॥ ज्ञानदृष्ट्याक्षणंध्यात्वातन्मैत्रीरज्जुबंधनः ॥ ४ ॥ ॥ दूतउवाच ॥ ॥ गतेवैश्याष्टमेपुण्यंत्वयाजन्मनिसंचितम् ॥ तद्भ्रात्रेदीयतांशीघ्रंतस्यस्वर्गंयदीच्छसि ॥ ५ ॥

हैं जो चन्द्रमाको शीतल अमृतमय करते हैं ॥ २ ॥ हे दूत ! मेरे पूछनेसे कृपाकरके कहिये मेरे भाईकी नरकसे किस प्रकार निष्कृति होगी ॥ ३ ॥ श्रीदत्तात्रेय बोले वह उनके वचन सुनकर देवदूत कहने लगा ज्ञान दृष्टिसे विचारकर उसकी मित्रतासे बंधनको प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥ दूत बोला हे वैश्य ! बीते आठवें जन्ममें जो तैने पुण्य संचय किया है सो भाईको दीजिये

विकुंडल बोला वह क्या पुण्य है कैसे हुआ किस जन्ममें मैं पहले हुआ ? हे दूत ! वह शीघ्र कहो मैं उस सब पुण्यको दूंगा ॥ ५ ॥ ६ ॥ दूत बोला हे वैश्य ! सुन हेतु सहित मैं तेरा पुण्य कहताहूं पहले मधुवनमें एक शाकलि मुनि थे ॥ ७ ॥ तप और वेदपाठसे सम्पन्न तेजमें ब्रह्माकी समान उसकी स्त्री रेवती में ग्रहोंकी समान नौ पुत्र हुए ॥ ८ ॥ ध्रुव, शशी, बुध, तार, ज्योतिष्मान्, यह पांच अग्निहोत्र, प्रिय होके गृहधर्ममें रमण करते रहे ॥ ९ ॥ निर्मोह, जितमाय, ध्यानकाम, गुणातिग यह

॥ विकुंडलउवाच ॥ ॥ किंतत्पुण्यंकथंजातंकिंजन्माहंपुराभवम् ॥ तत्सर्वंकथ्यतांदूततच्चदास्यामिसत्व रम् ॥ ६ ॥ ॥ दूतउवाच ॥ शृणुवैश्यप्रवक्ष्यामित्वत्पुण्यंचसहेतुकम् ॥ पुरामधुवनेपुण्येमुनिरासीच्चशाकलिः ॥ ७ ॥ तपोध्ययनसंपन्नस्तेजसाब्रह्मणासमः ॥ जज्ञिरेतस्यरेवत्यांनवपुत्राग्रहाइव ॥ ८ ॥ ध्रुवःशशी बुधस्तारोज्योतिष्मानत्रपंचमः ॥ अग्निहोत्रप्रियाह्येतेग्रहधर्मेपुरेमिरे ॥ ९ ॥ निर्मोहोजितमायश्चध्यानकामो गुणातिगः ॥ एतेगृहवियुक्तास्तुचत्वारोद्विजसूनवः ॥ १० ॥ चतुर्थाश्रमसंपन्नाःसर्वकर्मसुनिस्पृहाः ॥ ग्रामैकवासिनःसर्वेनिःसंगानिःपरिग्रहाः ॥ ११ ॥ निःशिखानोपवीताश्चसमलोष्टाश्मकांचनाः ॥ येनकेनचिदाच्छन्नायेनकेनचिदाशिताः ॥ १२ ॥ सायंगृहास्तथानित्यंब्रह्मध्यानपरायणाः ॥ जितनिद्राजिताहारावातशीतसहिष्णवः ॥ १३ ॥

चार पुत्र उसके विरक्त हुए ॥ १० ॥ संन्यास आश्रममें सम्पन्न सम्पूर्ण कर्मोंमें इच्छा न करनेवाले एकही गांवमें सब निवास करनेवाले तथा सब कर्मोंमें इच्छा न करनेवाले हुए न विवाह किया ॥ ११ ॥ शिखा उपवीत रहित मट्टी सुवर्ण में एक दृष्टिवाले जिस किसी प्रकार से कुछ वस्त्र धारे ज्यों त्यों कुछ खातेथे ॥ १२ ॥ संध्याकालके समय नित्य ध्यान में परायण थे निद्रा आहार जीते

विचरण करते फिरते थे ॥ १४ ॥
वात शीतके सहनेवाले ॥ १३ ॥ चराचर जगत्‌को विष्णुरूप देखनेवाले मौन धारे पृथ्वीमें विचरण करते फिरते थे ॥ १४ ॥ इस प्रकार
और वे योगी अणुमात्र भी कुछ क्रिया नहीं करतेथे दृढज्ञानी सन्देह रहित चित्त विचारमें विशारद ॥ १५ ॥ इस प्रकार
तुम्हारे आठवें जन्ममें विप्ररूपसे पुत्रदार कुटुम्बी हुए मत्स्यदेशमें स्थित हुये ॥ १६ ॥ तुम्हारे समीप मध्याह्नमें भूखे प्यासे होकर
तुम्हारे स्थानमें आये वैश्वदेव करनेके उपरान्त तुमने उनको आंगनमें देखा ॥ १७ ॥ गद्गद कंठ नेत्रोंमें आंसु भरे हर्ष और

नकुर्वंतिक्रियांकिंचिदणुमात्रांहियोगिनः ॥ पश्यंतिविष्णुरूपेणजगत्सर्वंचराचरम् ॥ चरंतिलीलयापृथ्वींतेन्योन्यंमौनमास्थिताः ॥१४॥ नकुर्वंतिक्रियांकिं
चिदणुमात्रांहियोगिनः ॥ दृढज्ञानाअसंदेहाश्चिद्विचारविशारदाः ॥१५॥ एवंतेतवविप्रस्यपूर्वमष्टमजन्मनि ॥
तिष्ठतोमत्स्यदेशेपुपुत्रदारकुटुंबिनः ॥१६॥ गेहंतावकमाजग्मुर्मध्याह्नेक्षुत्पिपासिताः ॥ वैश्वदेवोत्तरेकालेत्वया
दृष्टागृहांगणे ॥ १७ ॥ सगद्गदंसाश्रुनेत्रंसहर्षंचससंभ्रमम् ॥ दंडवत्प्रणिपातेनबहुमानपुरःसरम् ॥ १८ ॥
प्रणम्यचरणौस्पृष्ट्वाकृत्वापाणिपुटांजलिम् ॥ तदाभिनंदिताःसर्वेत्वयासूनृतयागिरा ॥ १९ ॥ अद्यमेसफलं
जन्मसफलंजीवितंमम ॥ अद्यविष्णुःप्रसन्नोऽभूत्सनाथोस्म्यद्यपावितः ॥२०॥ धन्योस्मिममगृहंधन्यंधन्यामेऽ
द्यकुटुंबिनी ॥ ममाद्यपितरौधन्यौधन्यागावःश्रुतंधनम् ॥ २१ ॥ यद्दृष्टौभवतांपादौतापत्रयहरौमया ॥ भवतां
दर्शनंयस्माद्धन्यंसर्वंहरेरिव ॥ २२ ॥

संभ्रमसे युक्त दंडवतकर बहुत मानसे युक्त ॥ १८ ॥ प्रणाम कर चरण छूकर हाथ जोड मनोहर वाणीसे तुमने सबको आनंदित
किया ॥ १९ ॥ आज मेरा जन्म और जीवन सफल हुआ आज विष्णु हमपर प्रसन्न हुए आज मैं सनाथ और पवित्र हुआ ॥ २० ॥
मैं धन्य मेरा घर धन्य आज मेरी स्त्री धन्य है आज हमारे पितर गौ श्रुति (वेद) धन धन्य हैं ॥ २१ ॥ जो मैंने तीनों तापके

दूर करनेवाले तुम्हारे चरणोंका दर्शन किया आपके दर्शनसे हरिदर्शनकी समान सब धन्य है ॥ २२ ॥ इस प्रकारसे उनका पूजन कर तुमने चरण धोये और परम श्रद्धासे चरणोंका जल शिरपर धारण किया ॥ २३ ॥ हे वैश्य ! यतिके चरणोंका जल पुराकृत पापोंको दूर करता है सात जन्मके अर्जन किये पाप तत्काल ही दूर होते हैं, जो श्रद्धासे धारण करै ॥ २४ ॥ गंध पुष्प अक्षत धूप नीराजनसे युक्त उन यतियोंका सत्कार कर परम श्रमसे भोजन कराया ॥ २५ ॥ वे परमहंस तृप्त होकर उस

एवंसंपूज्यतेपांतुचरणक्षालनंत्वया ॥ धृतंमूर्भ्रिचपादोदःश्रद्धयापरयातदा ॥ २३ ॥ यतिपादोदकंवैश्यहंति पापंपुराकृतम् ॥ सप्तजन्मार्जितंसद्यः श्रद्धयापरयाधृतम् ॥ २४ ॥ गंधपुष्पाक्षतैर्धूपैर्नीराजनपुरःसरम् ॥ संपूज्यसंस्कृतैरन्नैर्भोजितायतयस्त्वया ॥ २५ ॥ तृप्ताःपरमहंसास्तेविश्रांतामंदिरेनिशि ॥ ध्यायंतश्चपरंब्रह्म यज्ज्योतिर्ज्योतिषांवरम् ॥ २६ ॥ तेपामातिथ्यजंपुण्यंजातंतेयद्विशांवर ॥ नतद्वक्त्रसहस्रेणवक्तुंशक्तोस्म्यहं खलु ॥ २७ ॥ भूतानांप्राणिनःश्रेष्ठाःप्राणिनांबुद्धिजीविनः ॥ बुद्धिमत्सुनराःश्रेष्ठानरेषुब्राह्मणाःस्मृताः ॥२८॥ ब्राह्मणेषुचविद्वांसोविद्वत्सुकृतबुद्धयः ॥ कृतबुद्धिषुकर्तारःकर्तृषुब्रह्मवेदिनः ॥२९॥ अतएवहिपूज्यास्तेयस्माच्छ्रेष्ठाजगत्रये ॥ यत्संगतिर्विशांश्रेष्ठमहापातकनाशिनी ॥ ३० ॥

रातको तुम्हारे मंदिरमें वसे परब्रह्म ज्योतिस्वरूपको ध्यान करते हुए ॥ २६ ॥ हे वैश्य ! उनके अतिथिसत्कारका जो पुण्य तुझको हुआ मैं उसको सहस्रमुखसे नहीं कह सकता ॥ २७ ॥ भूतोंमें प्राणी श्रेष्ठ, प्राणियोंमें बुद्धिसे जीनेवाले श्रेष्ठ, बुद्धिमानोंमें मनुष्य श्रेष्ठ, मनुष्योंमें ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं ॥ २८ ॥ ब्राह्मणोंमें विद्वान् विद्वानोंमें कृतबुद्धि कृतबुद्धियोंमें करनेवाले उनमेंभी ब्रह्मवादी श्रेष्ठ हैं ॥ २९ ॥ इस कारण त्रिलोकीमें श्रेष्ठ उनका पूजन अवश्य करना चाहिये, हे वैश्य श्रेष्ठ ! उनकी संगति महापातकोंके

नाश करनेवाली है ॥ ३० ॥ सतो गुणमें स्थित ब्रह्मवादी गृहस्थियोंके घरमें विश्रामको प्राप्त होकर जन्मके संचित पापोंको एक क्षणमें नाश करते हैं ॥ ३१ ॥ सो आठवें पूर्व जन्मका पुण्य इस प्रकार तैंने संचय किया है, सो पुण्य अपने भाईको दे, इससे तेरा भाई नरकसे छूट जायगा ॥ ३२ ॥ इस प्रकार दूतके वचन सुनकर उसने शीघ्रतासे पुण्यप्रदान किया और प्रसन्न मन हो उसका भाई नरकसे निर्गत हुआ ॥ ३३ ॥ और दोनों देवताओंसे पूजित हो स्वर्गको गये, देवताओंने उनपर फूल वर्षाये और

विश्रांतागृहिणोगेहेसत्त्वस्थाब्रह्मवादिनः ॥ आजन्मसंचितंपापंनाशयंतिक्षणेनवै ॥ ३१ ॥ इतितेसंचितं पुण्यमष्टमेपूर्वजन्मनि॥स्वभ्रात्रेदेहितत्पुण्यंनरकाद्येनमुच्यते ॥३२॥ इति दूतवचःश्रुत्वाददौपुण्यंससत्वरम् ॥ हृष्टेनचेतसाभ्राऽत्रेनिरयात्सोपिनिर्गतः ॥ ३३ ॥ देवैस्तौपुष्पवर्षेणपूजितौचदिवंगतौ ॥ ताभ्यांचपूजितःसम्यग्गतोदूतोयथागतम् ॥ ३४ ॥ अखिलजनसुबोधंदेवदूतस्यवाक्यंनिगमवचनतुल्यंवैश्यपुत्रोनिशम्यं ॥स्वकृतसुकृतदानाद्भ्रातरंतारयित्वासुरपतिवरलोकंतेनसार्धंजगाम ॥ ३५ ॥ इतिहासमिमंराजन्यःपठेच्छृणुयादपि ॥ सगोसहस्रदानस्यविपापोलभतेफलम् ॥ ३६ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेउत्तरखंडेमाघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादे श्रीकुंडलविकुंडलयोःस्वर्गगमनंनामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

उनसे पूजित हो देवदूत यथायोग्य अपने स्थानोंको गये ॥ ३४ ॥ यह देवदूतके वाक्य सब जनोंको बुद्धिदाता वेदवचनकी समान वैश्यपुत्र सुनकर अपने पुण्य देकर भाईको तारकर उसके साथ इन्द्रलोकको गया ॥ ३५ ॥ हेराजन्! जो इस इतिहासको पढैं और सुनें वह पापरहित हो सहस्र गोदानका पुण्य प्राप्त करते हैं ॥ ३६ ॥ इति श्रीमाघमाहात्म्ये भाषाटीकायां दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

कार्तवीर्य बोले हे महर्षे ! किस कारणसे माघस्नानका बड़ा प्रभाव कहा जाता है, सो आप मुझसे कहिये ॥१॥ जो वैश्य एक माघके स्नानसे पापरहित हो दूसरेके फलसे स्वर्गको गया, माघका पुण्य वैश्यको ऐसा किसप्रकार प्राप्त हुआ यह कुतूहल मुझसे कहिये ॥ २ ॥ श्रीदत्तात्रेय बोले हे पुरुषश्रेष्ठ ! स्वभावसेही जल पवित्र निर्मल शुचि और पाण्डुरवर्ण है, मलनाशक द्रावक और दाह नाशक है ॥ ३ ॥ सब प्राणियोंका तारक पुष्टि और जीवन करनेवाला है जल नारायण देवहैं ऐसा सब वेदोंमें पढ़ा जाता है

॥ कार्तवीर्यउवाच ॥ हेतुनाकेनविप्रर्षेमाघस्नानेमहाद्भुतः ॥ प्रभावोवर्ण्यतेनूनंतन्मेकथयसुव्रत ॥ १ ॥ गतपापोयदेकेनद्वितीयेनदिवंगतः ॥ वैश्योऽसौमाघपुण्येनब्रूहिमेतत्कुतूहलम् ॥ २॥ श्रीदत्तात्रेयउवाच ॥ निसर्गात्सलिलंमेध्यंनिर्मलंशुचिपांडुरम् ॥ मलहंपुरुषव्याघ्रद्रावकंदाहनाशनम् ॥ ३ ॥ तारकंसर्वभूतानांपोषणंजीवनंचयत् ॥ आपोनारायणोदेवः सर्ववेदेषुपठ्यते ॥ ४ ॥ ग्रहाणांचयथासूर्योनक्षत्राणां यथाशशी ॥ मासानांचतथामाघःश्रेष्ठःसर्वेषुकर्मसु ॥ ५ ॥ मकरस्थेरवौमाघेप्रातःकालेतथाऽमले ॥ गोष्पदेऽपिजलेस्नानंस्वर्गदंपापिनामपि ॥ ६ ॥ योगोऽयंदुर्लभोराजंस्त्रैलोक्येसचराचरे ॥ अस्मिन्योगेत्वशक्तोपिस्नायाद्यदिदिनत्रयम् ॥ दद्यात्किंचिदशक्तोपिदारिद्राभाववांछया ॥ त्रिस्नानेनापिमाघस्यधनिनोदीर्घजीविनः ॥ ८॥ पंचवाससवाऽह्यानिचंद्रवद्वर्धतेफलम् ॥ संप्राप्तेमकरादित्येपुण्येपुण्यप्रदेनृणाम् ॥ ९ ॥

॥ ४ ॥ ग्रहोंमें जैसे सूर्य नक्षत्रोंमें जैसे चन्द्रमा इसी प्रकार महीनोंमें सब कर्मोंमें माघ श्रेष्ठ है ॥ ५ ॥ मकरके सूर्य होनेमें माघ मासको प्रभातके समय गौके खुरमात्र जलमेंभी स्नान करनेसे पापियोंको स्वर्ग प्राप्त होता है ॥६॥ हे राजन् ! यह योग माघका त्रिलोकी और चराचरको दुर्लभ है इस योगमें जो कोई तीनदिनभी स्नान करे ॥ ७ ॥ और दरिद्रके अभाव होनेके निमित्त कुछभी दे माघमें तीनबार स्नान करनेसे धनी दीर्घजीवी होते हैं ॥८॥ पांच वा सातदिनमें चन्द्रमाकी समान फल बढता है, परमपवित्र

पुण्य देनेवाले मकरके सूर्य प्राप्त होनेमें मनुष्योंको ॥ ९ ॥ स्नानदानके समय अतिथियोंका सत्कार करना चाहिये कर्ताको अक्षय और शाश्वत पदकी प्राप्ति होती है ॥ १० ॥ इस कारण अपने हितकी इच्छा करके माघमासमें बाहर स्नान करे अब माघस्नानकी विधि कहते हैं ॥ ११ ॥ मनुष्योंको इसमें कोई व्रतरूपी नियम करना चाहिये अति फलकी प्राप्तिकी निमित्त पण्डित कुछ भोजन त्यागै ॥ १२ ॥ भूमिमें सोवै, घृत तिलका हवन करे, तीनकालमें वासुदेव सनातन विष्णुकी पूजा करे ॥ १३ ॥

तस्मान्माघे सत्कार्यास्तिथयः सर्वाः स्नानदानादिकर्मभिः ॥ कर्तारंदापयंतीहह्यक्षयंशाश्वतंपदम् ॥ १० ॥ तस्मान्माघे वहिःस्नायादात्मनोहितकाम्यया ॥ अथातःसंप्रवक्ष्यामिमाघस्नानविधिंपरम् ॥ ११ ॥ कर्तव्योनियमः कश्चिद्व्रतरूपीनरोत्तमैः ॥ फलातिशयहेतोर्वैकिंचिद्भोज्यंत्यजेद्बुधः ॥ १२ ॥ भूमौशयीतहोतव्यमाज्यंतिल विमिश्रितम् ॥ त्रिकालंचार्चयेद्विष्णुंवासुदेवंसनातनम् ॥ १३ ॥ दातव्योदीपकोऽखंडोदेवमुद्दिश्यमाधवम् ॥ इंधनंकंवलंवस्त्रमुपानत्कुंकुमंघृतम् ॥१४॥ तैलंकार्पासकोष्ठंचतूलींतूलवटींपटीम् ॥ अन्नंचैवयथाशक्तिदेयंमाघे नराधिप ॥ १५ ॥ सुवर्णरत्तिकामात्रंदद्याद्वेदविदेतथा ॥ तद्दानमक्षयंराजन्समुद्रइवसर्वदा ॥१६॥ परस्याग्निं नसेवेतत्यजेच्चैवप्रतिग्रहम् ॥ माघांतेभोजयेद्विप्रान्यथाशक्तिनराधिप ॥ १७ ॥

भगवान माधवके उद्देश्यसे अखण्ड दीपदान दे, इन्धन ऊर्णवस्त्र उपानत् (जूता) कुंकुम घृत ॥ १४ ॥ तैल कपास कोठला रुई तूलवटी (पीनी) वस्त्र और अन्न यथाशक्ति माघमें देना चाहिये ॥ १५ ॥ वेद जाननेवालेको रत्तीमात्र सोना देना उचित है हे राजन् ! वह दान समुद्रकी समान सदा अक्षय होता है ॥ १६ ॥ दूसरेकी अग्नि न सेवे, प्रतिग्रह न ले,

१ पराज्ञानि न सेवेत इ० पा० ।

माघके अन्तमें ब्राह्मणोंको यथाशक्ति भोजन करावे ॥ १७ ॥ अपने कल्याणकी इच्छासे उनको दक्षिणा दे, एकादशीके विधानसे माघका उद्यापन करे ॥ १८ ॥ अक्षय स्वर्गकी इच्छा करके श्रद्धापूर्वक करे, अनन्तपुण्य और विष्णुकी प्रीतिके निमित्त यह सब करे ॥ १९ ॥ मकरके सूर्य माघमें प्राप्त होनेसे "गोविन्दायनमः अच्युतायनमः माधवायनमः" यह मंत्र पाठकर स्नान करनेसे यथोक्त फल मिलता है ॥ २० ॥ यह मंत्र पढकर मौन हो स्नान करे, फिर वासुदेव हरि कृष्ण माधवका स्मरण करे ॥ २१ ॥

देयाचदक्षिणातेभ्यआत्मनः श्रेयइच्छता ॥ एकादशीविधानेनमाघस्योद्यापनंतथा ॥ १८ ॥ कर्तव्यंश्रद्धयानेनह्यक्षय्यस्वर्गवांछया ॥ अनंतपुण्यावाप्त्यर्थंविष्णुसंप्रीतिहेतवे ॥ १९ ॥ मकरस्थेरवौमाघेगोविंदाच्युतमाधव ॥ स्नानेनानेनभोदेवयथोक्तफलदोभव ॥ २० ॥ इतिमंत्रंसमुच्चार्यस्नायान्मौनीसमाहितः ॥ वासुदेवंहरिंकृष्णंमाधवंचस्मरेत्पुनः ॥ २१ ॥ गृहेपिसजलंकुंभंवायुनानिशिपीडितम् ॥ तत्स्नानंतीर्थसदृशंसर्वकामफलप्रदम् ॥ २२ ॥ तत्रव्रतेनदातव्यंसान्नंचोपस्करान्वितम् ॥ तत्स्नानस्यप्रभावेणनरोननिरयंव्रजेत् ॥ २३ ॥ तप्तेनवारिणास्नानंयद्गृहेक्रियतेनरैः ॥ षडब्दफलदंतद्धिमकरस्थेदिवाकरे ॥ २४ ॥ बहिःस्नानंतुवाप्यादौद्वादशाब्दफलंस्मृतम् ॥ तडागेद्विगुणंराजन्नद्यांचैवचतुर्गुणम् ॥ २५ ॥

और घरमेंभी जलका भरा धरा घडा जिसे रात्रिमें वायुने स्पर्श किया है उसका स्नानभी तीर्थकी समान सब कामना देनेवाला है ॥ २२ ॥ सामग्री सहित अन्न इसका व्रतकर देना चाहिये, उस स्नानके प्रभावसेभी मनुष्य नरकको नहीं जाते हैं ॥ २३ ॥ जिस घरमें मनुष्य तत्ते जलसे स्नान करतेहैं वह मकरके सूर्यका स्नान छः वर्षके स्नानका फल देताहै ॥ २४ ॥ बाहर बावडी

॥ २५ ॥ देव आदिमें स्नान करनेसे बारह वर्षका फल होता है हे राजन् ! तालावमें दूना और नदीमें चौगुना फल होताहै हदमें सौगुना महानदमें सौगुना महानदी संगममें चारसौगुना फल होता है ॥ २६ ॥ मकरके सूर्यमें यह फल सहस्रगुण गंगास्नान करनेसे प्राप्त होजाता है ॥ २७ ॥ हे राजन् ! जो माघमासमें गंगास्नान करतेहैं, वह चार सहस्र युगतक स्वर्गसे पतित नहीं होते हैं ॥ २८ ॥ हे राजन् ! जो दिन २ सहस्र सुवर्ण देनेका फल है वह माघमासमें गंगास्नानका फल है ॥ २९ ॥ हे राजन् !

शतधादेवखातेषुशतधातुमहानदे ॥ शतंचतुर्गुणंराजन्महानद्याश्चसंगमे ॥ २६ ॥ सहस्रगुणितंसर्वंतत्फलं मकरेरवौ ॥ गंगायांस्नानमात्रेणलभतेमानवोनृप ॥ २७ ॥ गंगायांयेऽवगाहंतिमाघमासेनृपोत्तम ॥ चतुर्युगसहस्रंतुनपतंतिसुरालयात् ॥ २८ ॥ दिनेदिनेसहस्रंतुसुवर्णानांविशांपते ॥ तेनदत्तंतुगंगायांयोमाघेस्नाति मानवः ॥ २९ ॥ शतेनगुणितंमाघेसहस्रंराजसत्तमः ॥ निर्दिष्टमृषिभिःस्नानंगंगायामुनसंगमे ॥ ३० ॥ पापौघभूरिभारस्यदाहार्थंचप्रजापतिः ॥ प्रयागंविदधेभूपप्रजानांचहितेस्थितः ॥ ३१ ॥ शृणुस्थानमिदंसम्यक् सितासितजलंकिल ॥ पापरूपपशूनांचब्रह्मणाविहितंपुरा ॥३२॥ सितासितजलेमज्जेदपिपापशतान्वितः ॥ मकरस्थेरवौमाघेनैवगर्भेपुमज्जति ॥ ३३ ॥

वह माघमें शत और सहस्र गुण फलकी प्राप्ति करता है जहां गंगा यमुनाका संगम है वहां ऋषियोंने यह पुण्य कहा है ॥ ३० ॥ हे राजन् ! प्रजापतिने पापसमूहोंके नाश करनेके निमित्त प्रजाके हितके निमित्त प्रयागकी रचना की है ॥३१॥ इस सित असित जलके स्थानको पापरूपी जीवोंके उद्धारके निमित्त प्रथम ब्रह्माजीने निर्माण किया है ॥ ३२ ॥ सैकडों पाप करनेवाला मनुष्य

यदि प्रयागमें स्नान करे और माघका महीना हो तो वह पुरुष फिर गर्भमें नहीं आता ॥ ३३ ॥ पांच प्रकारकी हिंसा करनेवाला मनुष्य प्रयागमें स्नान करै हे राजन् ! वह माघमें स्नान करनेवाला परमपदको प्राप्त होता है ॥ ३४ ॥ जो गंगा यमुनाकी धार सरस्वतीके जलसे युक्त है वह ब्रह्माजीने विष्णु लोकका मार्ग कथन किया है ॥ ३५ ॥ वैष्णवी माया बडी दुस्तर देवताओंको भी दुर्जय है हे राजन् ! वहभी माघमास प्रयाग में स्नान करनेसे नष्ट. होती है ॥ ३६ ॥ तेजोमय

सूनारतोपियोमर्त्यःप्रयागेस्नानमाचरेत् ॥ माघेमासिनरव्याघ्रसयातिपरमंपदम् ॥ ३४ ॥ सितासितातुया धारासरस्वत्याविगर्भिता ॥ तन्मार्गंविष्णुलोकस्यसृष्टिकर्ताससर्जवै ॥ ३५ ॥ दुस्तरावैष्णवीमायादेवैरपिसुदुर्जया ॥ प्रयागेदह्यतेसातुमाघेमासिनराधिप ॥ ३६ ॥ तेजोमयेषुलोकेषुभुक्त्वाभोगाननेकशः ॥ पश्चाच्चक्रिणिलीयंतेप्रयागेमाघमज्जनात् ॥ ३७ ॥ उपस्पृशतियोमाघेमकरार्केसितासिते ॥ नतंत्पुण्यंचसंख्यातुंचित्रगुप्तोपिवेत्त्यलम् ॥ ३८ ॥ सन्निमज्जतियोमाघेमकरस्थेसितासिते ॥ तस्यपुण्यस्यमाहात्म्यंवक्तुंब्रह्मापिनक्षमः ॥ ३९ ॥ संवत्सरशतंसाग्रंनिराहारस्ययत्फलम् ॥ प्रयागेमाघमासेतुत्र्यहस्नानस्यतत्फलम् ॥ ४० ॥

लोकोंमें अनेक भोगोंको भोगकर पीछे माघस्नायी परमात्मामें लीन होजाते हैं ॥ ३७ ॥ जो माघमास मकरकी संक्रान्तिको सूर्यको नमन करके गंगा यमुनाको स्पर्श करता है चित्रगुप्त उसके पुण्यकी संख्या नहीं कह सकते ॥ ३८ ॥ जो मकरके सूर्य युक्त माघमासमें प्रयागमें स्नान करै उसके पुण्यका माहात्म्य ब्रह्माभी कथन नहीं कर सकता ॥ ३९ ॥ सौ वर्षतक निराहार रहनेका जो

१ तस्यपुण्यमसंख्यातं चित्रगुप्तोलिखेत्कलमिति पाठः ।

फल है प्रयाग में तीन दिन माघस्नानसे वही फल मिलताहै ॥ ४० ॥ सूर्यग्रहण पर कुरुक्षेत्रमें सुवर्णके सहस्रभार दानका जो फल है वह माघमें दिन दिन वेणीके स्नानसे फल होता है ॥ ४१ ॥ हे राजन् ! सहस्र राजसूयका अविकल फल होताहै परन्तु माघमास प्रयागमें स्नान करनेसे निश्चल फल होता है ॥४२॥ पृथ्वीमें जितने पुरी और सात तीर्थ हैं हे राजन् ! वे सब माघ मासमें वेणीके स्नानको आते हैं ॥ ४३ ॥ पापियोंके संग दोषसे सब तीर्थ कृष्ण होजाते हैं वह प्रयागमें माघस्नान

स्वर्णभारसहस्रेणकुरुक्षेत्रेरविग्रहे ॥ यत्फलंलभतेमाघेवेण्याःस्नानाद्दिनेदिने ॥ ४१ ॥ राजसूयसहस्रस्यराजन्न
विकलंफलम् ॥ सितासितेतुमाघेचस्नानानांभवतिध्रुवम् ॥ ४२॥ पृथिव्यांयानितीर्थानिपुर्यःसप्तचयाःपुनः ॥
वेण्यांस्नातुंसमायांतिमाघेमासिनृपोत्तम ॥ ४३ ॥ सर्वतीर्थानिकृष्णानिपापिनांसंगदोषतः ॥ भवंतिशुक्लवर्णा
निप्रयागेमाघमज्जनात् ॥ ४४ ॥ आकल्पसंचितंपापंजन्मभिर्यन्नरैर्नृप ॥ तद्भवेद्भस्मसान्माघेस्नातानांचसि
तासिते ॥ ४५ ॥ वाङ्मनःकायजंपापंनरस्यविलयंव्रजेत् ॥ प्रयागेमाघमासेतुत्र्यहंस्नातस्यनिश्चितम् ॥
॥ ४६ ॥ प्रयागेमाघमासेयस्त्र्यहंस्नातिचमानवः ॥ पापंत्यक्त्वादिवंयातिजीर्णांत्वचमिवोरगः ॥४७॥ कुरुक्षेत्र
समागंगायत्रकुत्रावगाहिता ॥ तस्माद्दशगुणापुण्यायत्रविंध्येनसंगता ॥ ४८ ॥

करनेसे शुक्लवर्ण होते हैं ॥ ४४ ॥ कल्पोंके संग्रह किये अनेक जन्मोंमें जो पाप मनुष्योंने कियेहैं वह माघमें प्रयागस्नानसे भस्म होजाते हैं ॥ ४५ ॥ वाणी मन कायाके पाप मनुष्यके सब विलीन हो जाते हैं जो माघ मास प्रयागमें तीन दिन स्नान करते हैं ॥ ४६ ॥ प्रयागमें माघ मासमें जो मनुष्य तीन दिन स्नान करताहै वह पापको सर्पकी कैंचलीकी समान त्याग कर स्वर्गको जाता है ॥ ४७ ॥ कुरुक्षेत्रकी समान गंगामें जहां कहीं स्नान किया है और जहां विन्ध्यपर्वतसे संगत हुई है

उससे दश गुणा अधिक पुण्य देती है ॥ ४८ ॥ काशीमें उत्तर वाहिनी उस्से सौगुणा अधिक फल देती है, गंगा यमुना संगम काशीसे सौगुणा अधिक फल देता है ॥४९॥ पश्चिमवाहिनी उससे सहस्र गुण अधिक फल देती है हे राजन्! जो देखतेही ब्रह्म हत्या दूर करतीहै ॥५०॥ जो पश्चिम वाहिनी गंगा कालिन्दी से मिली है, हे राजन्! वह माघमासमें करोडों पापोंको दूर करती है ॥५१॥ हे राजन्! जिसको अमृत कहते हैं भूमिमें वह वेणी कहाती है, माघमासमें मुहूर्त मात्रको उसकी प्राप्ति देवताओंकोभी दुर्लभ

तस्माच्छतगुणागंगाकाश्यामुत्तरवाहिनी ॥ काश्याःशतगुणाप्रोक्तागंगायामुनसंगमे ॥ ४९ ॥ सासहस्रगुणा तासांभवेत्पश्चिमवाहिनी ॥ याराजन्दर्शनादेवब्रह्महत्यापहारिणी ॥ ५० ॥ यापश्चाद्वाहिनीगंगाकालिंद्यासहसंगता ॥ हंतिकोटिकृतंपापंसामाघेनृपदुर्लभा ॥ ५१ ॥ यत्कथ्यतेऽमृतंराजन्सावेणीभुविकीर्तिता ॥ तस्यांमाघे मुहूर्तंतुदेवानामपिदुर्लभम् ॥ ५२ ॥ ब्रह्माविष्णुर्महादेवोरुद्रादित्यमरुद्गणाः ॥ गंधर्वालोकपालाश्चयक्षाकिन्नरपन्नगाः ॥ ५३ ॥ अणिमादिगुणैःसिद्धायेचान्येतत्त्ववादिनः ॥ ब्रह्माणीपार्वतीलक्ष्मीःशचीमेनाऽदितिर्दितिः ॥ ५४ ॥ सर्वास्तादेवपत्न्यश्चतथानागांगनानृप ॥ घृताचीमेनकारंभाउर्वशीचतिलोत्तमा ॥ ५५ ॥ गणाह्यप्सरसांसर्वेपितॄणांचगणास्तथा ॥ स्नातुमायांतितेसर्वेमाघेवेण्यांनराधिप ॥ ५६ ॥

है ॥ ५२ ॥ ब्रह्मा विष्णु महादेव रुद्र आदित्य मरुद्गण गंधर्व लोकपाल यक्ष किन्नर पन्नग ॥ ५३ ॥ अणिमा, आदि गुणोंसे सिद्ध जो और तत्वादि हैं तथा ब्रह्माणी पार्वती लक्ष्मी शची मेना (हिमालय पत्नी) दिति अदिति ॥ ५४ ॥ (वा रति) सब देवपत्नी और नागोंकी स्त्री घृताची मेनका रंभा उर्वशी तिलोत्तमा ॥ ५५ ॥ अप्सराओंके सम्पूर्ण गण पितृगण यह माघमासमें

१ तथा रतिरिति पाठः ।

वेणीमें सब स्नान करनेको आतेहैं ॥ ५६ ॥ सतयुगमें अपने स्वरूपसे और कलियुगमें प्रच्छन्नरूप से आते हैं, अर्थात माघ स्नानमें जो तीन दिन स्नान का फल है ॥ ५७ ॥ वह फल सहस्र अश्वमेधमें भी भूमिमें प्राप्त नहीं होताहै पहले कांचन मालिनीने माघमासमें तीन दिनका फल राक्षसको दिया था उस्से वह पापात्मा मुक्त हुआ ॥ ५८ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे उत्तर खंडे माघमासमाहात्म्ये पण्डितज्वालाप्रसादमिश्रकृतभाषाटीकायां प्रयागस्नानप्रशंसानाम एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ कार्तवीर्य

कृतेयुगेस्वरूपेणकलौप्रच्छन्नरूपिणः ॥ प्रयागेमाघमासेतुत्र्यहस्नानस्ययत्फलम् ॥ ५७ ॥ नाश्वमेधसहस्रेणतत्फलंलभतेभुवि ॥ त्र्यहस्नानफलंमाघेपुराकांचनमालिनी ॥ राक्षसायददौभूपतेनमुक्तःसपापकृत् ॥५८॥ इति श्रीपद्मपुराणेउत्तरखण्डेमाघमाहात्म्येप्रयागस्नानप्रशंसानामएकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ ॥ कार्तवीर्य उवाच ॥ ॥ भगवन्राक्षसःकोऽसौसाकाकांचनमालिनी ॥ १ ॥ कथंदत्तवतीधर्मंकथंवातस्यसद्गतिः ॥ एतत्कथययोगींद्रअत्रिसंतानभास्कर ॥ २ ॥ यदित्वंमन्यसेश्राव्यंपरंकौतूहलंहिमे ॥ श्रीदत्तात्रेयउवाच ॥ शृणुराजन्विचित्रंत्वमितिहासंपुरातनम् ॥ ३ ॥ यस्यस्मरणमात्रेणवाजपेयफलंलभेत् ॥ अप्सरारूपसंपन्ना नाम्नाकांचनमालिनी ॥ ४ ॥

बोले, हे भगवन् ! वह राक्षस कौन और वह कांचनमालिनी कौन थी ॥ १ ॥ किस प्रकार उसने धर्म दिया किस प्रकार उसकी सद्गति हुई हे अत्रिसंतानभास्कर ! यह वार्ता आप हमसे वर्णन कीजिये ॥ २ ॥ यदि आप इसका श्रवण कराना उचित समझें तो मुझे परम कौतूहल है, श्रीदत्तात्रेय बोले हे राजन् ! विचित्र पुरातन इतिहासको श्रवण करो ॥ ३ ॥ जिसके स्मरण मात्रसे वाज

पेयका फल होता है. कांचनमालिनी बड़ी रूपवती एक अप्सरा थी ॥ ४ ॥ माघमास प्रयागमें स्नानकर शिवमंदिरको आतीथी. जो गिरिराज हिमवान्‌के निकुंजमें गिरिके समान शरीरसे स्थित ॥ ५ ॥ उस वृद्ध राक्षसने उसको जो कि तेजस्विनी सुवर्णकी कान्तिवाली सुश्रोणी दीर्घलोचना थी आकाशमें आरूढ देखकर ॥६॥ जो कि चन्द्रमुखी सुकेशी उन्नतपीनपयोधरवाली रूपवती थी उसको देखकर वह राक्षस बोला ॥ ७ ॥ हे कमललोचने ! तुम कौनहो ? कहांसे आतीहो ? तेरे वस्त्र और केश गीले क्यों हो

प्रयागेमाघमासेसास्नात्वायातिहरालयम् ॥ निकुंजेगिरिराजस्यतिष्ठतागिरिरूपिणा ॥ ५ ॥ दृष्टागगनमारूढातेनवृद्धेनरक्षसा ॥ तेजस्विनीसुहेमाभासुश्रोणीदीर्घलोचना ॥ ६ ॥ चंद्राननासुकेशीचपीनोन्नतपयोधरा ॥ तांदृष्ट्वारूपसंपन्नामुवाचराक्षसस्तदा ॥ ७ ॥ कात्वंकमलपत्राक्षिकुतआगम्यतेत्वया ॥ आर्द्रंचवसनंकस्मात्साद्रांतेकबरीकुतः ॥८॥ कुत्रआगम्यतेभीरुकुतस्तेखेचरीगतिः॥केनपुण्येनवाभद्रेतवतेजोमयंवपुः ॥९॥ अतीवरूपसंपन्नंसंभूतंचमनोहरम् ॥ त्वद्वस्त्रबिंदुपातेनममसूर्धिसुलोचने ॥१०॥ क्षणेनह्यगमच्छांतिंक्रूरंमेमानसंसदा ॥ नीरस्यमहिमाकोऽयमेतद्व्याख्यातुमर्हसि ॥ ११ ॥ त्वंमेशीलवतीभासिनाकृतिर्निर्गुणाभवेत् ॥ अप्सराउवाच ॥ श्रूयतामप्सराश्चाहंभोरक्षःकामरूपिणी ॥ १२ ॥

रहे हैं ? ॥ ८ ॥ हे भीरु ! कहांसे आती हो ? आकाशचारी तुम्हारी गति कैसे है ? हे भद्रे ! किस पुण्यसे तुम्हारा शरीर तेजोमय हो रहा है ॥ ९ ॥ तुम्हारा रूप अधिक मनोहर है हे सुलोचने ! तुम्हारे वस्त्रसे एक बिन्दुजल मेरे ऊपर गिरा ॥ १० ॥ जो मेरा मन सदा क्रूर था सो क्षणमात्रमें शान्त होगया, यह जलकी महिमा कैसी है ? सो हमसे कहिये ॥ ११ ॥ तुम मुझे शीलवती विदित होती हो; तुम्हारी आकृति निर्गुण नहीं होगी. अप्सरा बोली हे राक्षस ! सुन मैं कामरूपिणी अप्सरा

मेरे वस्त्र इस कारण गीले हैं कि मैं अभी प्रयागमें स्नान किये
हूं ॥ १२ ॥ मैं प्रयागसे आई हूं, मेरा नाम कांचनमालिनीहै, वहां सुर असुरोंसे पूजित पार्वतीनाथ निवास करते
आती हूं ॥ १३ ॥ हे राक्षस ! अब मैं पर्वतश्रेष्ठ कैलासको जाती हूं, जिस पुण्यसे मैं सुबुद्धि गन्धर्वकी कन्या श्रेष्ठ ॥ १५ ॥ दिव्य
हैं ॥ १४ ॥ वेणीके जलके प्रभावसे हे राक्षस ! तेरी क्रूरता गई, मैं कलिंगाधिपति राजाकी वेश्या थी ॥ १६ ॥ रूपलावण्यसे सम्पन्न सौभाग्यके मदसे
रूप कन्या हुई, वह सब तुझसे कहती हूं.

सुस्नाताहंसितासिते ॥ १२ ॥ गंतव्यंतुमयारक्षः
प्रयागतश्चागताऽहंनाम्नाकांचनमालिनी॥आर्द्रःपरिकरोमेऽतः
वेणीवारिप्रभावेणरक्षस्तेक्रूरतागता ॥
कैलासेतुनगोत्तमे ॥ तत्रास्तेपार्वतीनाथःसुरासुरसुपूजितः ॥ १४ ॥
कलिंगाधिपतेराज्ञ
जाताऽहंयेनपुण्येनगंधर्वस्यसुमेधसः ॥ १५ ॥ कन्यकादिव्यरूपातुतत्सर्वंकथयामिते ॥
अन्यासांयुवतीनांचतत्पुरेऽहंशिरो
स्त्वहमासंहिवेश्यका ॥ १६ ॥ रूपलावण्यसंपन्नासौभाग्यमदगर्विता ॥
मोहितंतत्पुरंसर्वंमयायौवनसंपदा ॥ १८ ॥
माणिः ॥ १७ ॥ तज्जन्मनिमयारक्षोभुक्ताभोगान्यथेच्छया ॥
एतच्चोपार्जितं
रत्नानिचविचित्राणिभूषणानिधनानिच ॥ वासांसिचित्ररूपाणिकर्पूरागुरुचंदनम् ॥ १९ ॥
सर्वंमयामोहनरूपया ॥ नाहंजानामिहेमंतंस्वनिवासेनिशाचर ॥ २० ॥

हे राक्षस ! उस जन्ममें मैंने यथेच्छ भोग अपनी इच्छासे भोगे मेरी यौवन
गर्वित और स्त्रियोंमें वहां मैं शिरोमणिथी ॥ १७ ॥ विचित्ररत्नभूषण धन चित्ररूप वस्त्र कपूर अगर चन्दन ॥ १९ ॥ मुझ मोहिनी रूप
सम्पनिसे सब पुर मोहित था ॥ १८ ॥ अपने निवासमें मैंने कभी हिमऋतुका अन्त न जाना ॥ २० ॥
वालीने यह सब कुछ उपार्जन किया, हे निशाचर !

१ धर्मवै स्वनिवासे स्थितासती।

कामपीडित अनेक युवा मेरे चरणोंको सेवन करतेथे, मैंने उनका सर्वस्व मायाजालसे हरण करलिया॥ २१ ॥कोई कामी परस्पर स्पर्धा करके मृत्युको प्राप्त हुए इस प्रकार नगरमें मेरी गति थी ॥२२॥ जब वृद्धावस्था हुई तब मेरे हृदयमें शोच हुआ न मैंने दान किया न हवन और न जप किया ॥२३॥ तथा चतुर्वर्गके फल देनेवाले देवका मैंने आराधन न किया, न मैंने दुर्गति नाशिनी दुर्गा देवीका पूजन किया ॥ २४ ॥ भोगके लोभसे सब पापहारी विष्णुका मैंने स्मरण न किया, न ब्राह्मणोंको तृप्त किया, न कुछ

संसेवंतेयुवानोमेचरणौकामपीडिताः ॥ मयातेवंचिताःसर्वेसर्वस्वेनतुमायया ॥ २१ ॥ अन्योन्यस्पर्धाभावे नमृताःकेचित्तुकामिनः ॥ इत्थंतन्नगरेरम्येसकलेमेगतिस्तदा ॥ २२ ॥ प्राप्तेतुवार्द्धकेकालेशुशोचहृदयंमम ॥ नदत्तंनहुतंजप्तंनव्रतंचरितंमया ॥ २३ ॥ नाराधितोमयादेवश्चतुर्वर्गफलप्रदः ॥ नमयापूजितादेवीदुर्गादुर्गति नाशिनी ॥ २४ ॥ सर्वपापहरोविष्णुर्नस्मृतोभोगलुब्धया ॥ नचसंतर्पिताविप्रानकृतंप्राणिनांहितम् ॥ २५ ॥ अणुमात्रमिदंपुण्यंनकृतंचप्रमादतः ॥ पातकंतुकृतंभद्रतेनमेदह्यतेमनः ॥ २६ ॥ बहुधैवंविलप्याहंब्राह्मणं शरणंगता ॥ ब्रह्मण्यंवेदविद्वांसंतस्यराज्ञःपुरोहितम् ॥ २७ ॥ सहिपृष्टोमयारक्षःकथंमेनिष्कृतिर्भवेत् ॥ पाप स्यास्याद्द्विजश्रेष्ठकथंयास्यामिसद्गतिम् ॥ २८ ॥

प्राणियोंका हित किया ॥ २५ ॥ और प्रमादसे अणुमात्र पुण्यभी न किया, हे भद्र ! पापही किये इससे मेरा मन भस्म होने लगा ॥ २६ ॥ इस प्रकार मैं बहुत विलापकर ब्राह्मणकी शरण गई, वह विद्वान् ब्राह्मण उस राजाका पुरोहित था ॥२७॥ हे राक्षस ! उससे मैंने पूछा कि, मेरा निस्तार कैसे होगा ? हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! इस पापसे छूटकर मेरी सद्गति कैसे होगी ? ॥ २८ ॥

उद्धारकरो ॥ २९ ॥ हे ब्राह्मण ! अपने कर्मसे तापित हुई वशकी दीनमन पापरूपी कीचमें पडी मुझको बाल ग्रहणकर उद्धारकरो ॥ २९ ॥ हे ब्राह्मण !
हर्षकी दृष्टिसे मेरे ऊपर करुणाका जल वर्षाओ साधु महात्मा भले बुरे सबपर कृपा करते हैं ॥ ३० ॥ इस प्रकार मेरे वचन सुन
ब्राह्मणने मेरे ऊपर कृपा की और सब धर्मके सम्मित वचन मुझसे कहे ॥ ३१ ॥ ब्राह्मण बोले, हे वरानने ! मैं तुम्हारे सब
निषिद्ध आचारणको जानता हूं, तू मेरा वचन शीघ्र मानकर प्रजापतिके क्षेत्रको गमन कर ॥ ३२ ॥ वहां जाकर, स्नानकर,

॥ २९ ॥ मेयिकारुण्यजंवारि
स्वेनैवकर्मणातप्तांवराकींदीनमानसाम् ॥ पापपंकनिमग्नांत्वंमामुद्धरकचग्रहैः ॥ २९ ॥ मेयिकारुण्यजंवारि
वर्षहर्षदृशाद्विज ॥ सज्जनेसाधवःसर्वेसाधुःसाधुरसज्जने ॥ ३० ॥ इत्यसौमद्वचः श्रुत्वाचकारानुग्रहंमयि ॥
ऊचेप्रीतिकरंवाक्यंसर्वधर्ममयंद्विजः ॥ ३१ ॥ ॥ द्विज उवाच ॥ ॥ निषिद्धाचरणंजानेसर्वंतेऽहंवरानने ॥
कुरुमेसत्वरंवाक्यंयाहिक्षेत्रंप्रजापतेः ॥ ३२ ॥ तत्रगत्वाकुरुस्नानंतेनपापक्षयस्तव ॥ सर्वंमनोगतंभद्रेत्वदीयं
शोधितंमया ॥ ३३ ॥ नाहमन्यत्प्रपश्यामियत्तेपापप्रणाशनम् ॥ प्रायश्चित्तंपरंतीर्थेस्नानंचऋषिभिःस्मृतम् ॥
॥ ३४ ॥ किंतुतीर्थेत्यजेद्भीरुमनसाऽप्यशुभंकृतम् ॥ प्रयागस्नानशुद्धात्वंस्वर्गंयास्यसिनिश्चितम् ॥ ३५ ॥
प्रयागस्नानमात्रेणनृणांस्वर्गोनसंशयः ॥ अन्यदेशकृतंपापंतत्क्षणादेवभामिनि ॥ ३६ ॥

उससे तेरा पापक्षय होजायगा, हे भद्रे ! मैंने सब तेरे मनकी बात सोचली ॥ ३३ ॥ तीर्थस्नानके सिवाय और तेरे पापोंका दूर
करनेवाला प्रायश्चित्त मैं नहीं देखताहूँ. यह स्नान ऋषियोंद्वारा कथित है ॥ ३४ ॥ हे भीरु ! परन्तु तीर्थोंमें मनसेभी अशुभका
चिन्तन न करै प्रयागस्नान कर शुद्ध हो, तू अवश्य स्वर्गको जायगी ॥ ३५ ॥ इसमें सन्देह नहीं, प्रयागस्नान करतेही मनुष्य

१ पापपंके निमग्नांचमांसमुद्धरकोविद । २ कुरुकारुण्यजंवारिदृग्धाहंकिंनिरीक्ष्यसि ।

स्वर्गको प्राप्त होताहै. हे भामिनी ! और स्थानके किये पाप ॥ ३६ ॥ प्रयागमें नष्ट होते हैं, जो कि, तीर्थ स्थानमें नहीं किये हैं हे भीरु ! सुन पहले इन्द्रने गौतम ऋषिकी स्त्रीको ॥ ३७ ॥ देखकर कामवश हो गुप्तरूपसे उसके निकट जानेकी इच्छा करी उस उग्र पापका उसी समय फल मिला ॥ ३८ ॥ ऋषिकी स्त्रीके समीप गमन करनेसे इन्द्रका शरीर अति लज्जायुक्त होगया ॥ ३९ ॥ अर्थात् उसके स्वामीके शाप देनेके कारण उसके शरीरमें सहस्र भग होगये तब नीचेको मुखकर इन्द्र

प्रयागेविलयंयातिपापंतीर्थकृतंविना ॥ शृणुभीरुपुराशक्रोगौतमस्यमुनेर्वधूम् ॥ ३७ ॥ दृष्ट्वाकामवशंप्राप्तस्तां गतोगुप्तकामुकः ॥ उग्रेणतेनपापेनतंदैवजनितंफलम् ॥ ३८ ॥ ऋषिस्त्रीगंतुरिंद्रस्यतस्याश्वपुरतस्तदा ॥ कुत्सितंगर्हितंजातमितिलज्जाकरंवपुः ॥ ३९ ॥ तद्भर्तुःशापमाहात्म्यात्सहस्रभगाचिह्नितम् ॥ अधोमुखस्ततो भूत्वादेवराजोविनिर्गतः ॥ ४० ॥ निनिंदस्वकृतंकर्मसोऽभिभूतःसलज्जितः ॥ मेरोःशिरसितोयाढ्येशतयोजनविस्तृते ॥ ४१ ॥ तत्रगत्वाप्रविष्टस्तुहेमांभोरुहकोरके[1] ॥ तत्रस्थोगर्हयन्नित्यमात्मानंमन्मथंतथा ॥ ४२ ॥ धिक्तांकामात्मतांलोकेसद्यःपातकदायिनीम् ॥ ययाहिनरकंयातिसर्वलोकविगर्हितः ॥ ४३ ॥

वहांसे निकले ॥ ४० ॥ और लज्जित हो अपने कर्मकी निन्दा करने लगे सुमेरु पर्वतपर एक सुन्दर जलसे युक्त सौ योजनके विस्तारमें ॥ ४१ ॥ जहां सुवर्णके कमल खिल रहेथे वहां प्रविष्ट होगया, वहां स्थित हो अपनी और कामदेवकी निन्दा करने लगा ॥ ४२ ॥ तत्काल पातक देनेवाले कामात्माको लोकमें धिक्कार है, जिसके कारण सर्वलोकसे निन्दित हो

१ कोटरे इति पाठः ।

करनेवाली यह कामकी दुराचार रूपिणी आपत्ति

यह प्राणी नरकको जाता है ॥ ४३ ॥ आयु कीर्ति यश धर्म धैर्यका ध्वंस करता है ॥

स्थितही है ॥ ४४ ॥ यह देहमें स्थित असन्तुष्ट दुर्दम शत्रु अवश्य है इस प्रकार कमलमें छिपे हुए इन्द्र कथन ॥ ४६ ॥ शचीके

॥ ४५ ॥ हेभीरु ! परन्तु इन्द्रके विना देवलोककी शोभा नहीं है तब देवता गंधर्व लोकपाल किन्नर ॥ ४७ ॥ कहां हैं कहां

सहित आकर बृहस्पतिजीसे पूछने लगे कि, हे भगवन् ! इन्द्र कहां है ? यह वार्ता हम नहीं जान्ते हैं

देहस्थंदुर्दमंशत्रुमसं ॥ धिङ्मन्मथंदुराचारमापदांनियतंपदम् ॥ ४४ ॥

आयुःकीर्तियशोधर्मधैर्यध्वंसकरीतथा ॥ आखंडलंविनाभीरुदेवलोकोनशोभते ॥

तुष्टंसदावशम् ॥ इत्थंवादिनिप्रच्छन्नेवासवेपद्मसद्मनि ॥ ४५ ॥ भगवन्बलाभि

ततोदेवाःसगंधर्वालोकपालाःसकिन्नराः ॥ ४६ ॥ शच्यासहसमागम्यपप्रच्छुस्तेबृहस्पतिम् ॥

देवंनेवजानीमहेवयम् ॥ ४६ ॥ क्वतिष्ठतिगतःकुत्रकुत्रवामृगयामहे ॥ ननाकःशोभतेतेनाविनादेवगणैःसह ॥

॥ ४८ ॥ सुपुत्रेणविनायद्वत्कुलंश्रीमद्गुणान्वितम् ॥ उपायश्चिंत्यतांसद्यःस्वर्लोकोयेनशोभते ॥ ४९ ॥

सनाथःसुश्रियायुक्तोनविलंबोऽत्रयुज्यते ॥ इतितेषांवचःश्रुत्वगुरुर्वचनमब्रवीत् ॥ ५० ॥ जानेऽहंस्वापराधे

नलज्जयायत्रतिष्ठति ॥ रभसालब्धकार्यस्यभुंक्तेसमघवाफलम् ॥ ५१ ॥

गये कहां उनका खोज करें ? उनके विना स्वर्ग शोभित नहीं होता है ॥ ४८ ॥ जिस प्रकार सुपुत्रके विना श्रेष्ठ कुल शोभित

नहीं होता है, सो उपाय शीघ्र विचारो जिस्से स्वर्गलोककी शोभा हो ॥ ४९ ॥ जिससे यह लक्ष्मीयुक्त सनाथ हो जाय

अब विलम्ब करनेका काम नहीं है. उनके यह वचन सुन गुरु बोले ॥ ५० ॥ मैं जानताहूं जहां वह अपराधी होनेके

१ दुराचारं निर्लज्जं पापदायिनमिति पाठः । २ लक्ष्म्या विनागुणाइति पाठः । ३ युक्ता भवामहाधुनावयम् इति पाठः ।

कारण लज्जासे स्थित हैं, विना विचारे कार्य करनेका इन्द्र फल भोगते हैं ॥५१ ॥ नीति त्यागनेसे मनुष्योंको इसका भयंकर फल होता है, यह अपने राज्यमें मत्त हो कृत्य अकृत्यके विचारसे रहित रहा ॥५२॥ दृष्ट अदृष्ट क्षयकारी निंद्यकर्म करता रहा प्राणी दैवसे हतबुद्धि हो बड़े २ मूर्खताके कर्मको करते हैं ॥५३॥ यजमानके अपराधसे दोनों लोकके फल नष्ट होजाते हैं अब हम वहां जाते हैं जहां इन्द्र स्थित है ॥ ५४ ॥ ऐसे कह सब बृहस्पति आदि चले, सुवर्णके कमल खिले एक सरोवरका दर्शन

नृणांनीतिपरित्यागाद्विपाकाःस्युर्भयंकराः ॥ अहोराज्यमदैर्मत्तःकृत्याकृत्यमचिंतयन् ॥ ९२ ॥ कृतवान्निंद्य मानांहिदृष्टादृष्टक्षयंकरम् ॥ कुर्वंतिबालिशायत्रदैवोपहतबुद्धयः ॥ ९३ ॥ अपराधाद्यथाजन्मस्यादिहामुत्र निष्फलम् ॥ अधुनातत्रगच्छामोयत्रशक्रःसतिष्ठति ॥ ९४ ॥ इत्युक्त्वानिर्गताःसर्वेबृहस्पतिपुरोगमाः ॥ दृष्ट्वा सरसिविस्तीर्णस्वर्णपंकजकाननम् ॥ ९५ ॥ तुष्टुवुर्देवराजानंप्रबोधोयेनजायते ॥ ततोगुरोःप्रबोधेननिर्गतः पद्मकुड्मलात् ॥ ९६ ॥ दीनाननोविरूपस्तुव्रीडाकुंचितलोचनः ॥ जग्राहचरणाविंद्रोगुरोस्तस्याग्रजन्मनः ॥ ९७ ॥ त्राहिमांनिष्कृतिंब्रूहिपापस्यास्यबृहस्पते ॥ देवराजवचःश्रुत्वाजगौविप्रोबृहस्पतिः ॥ ९८ ॥ शृणुदेवेंद्रवक्ष्येहमुपायंपापनाशनम् ॥ प्रयागस्नानमात्रेणतत्क्षणादेवपातकात् ॥ ९९ ॥

किया ॥५५॥ वहां इन्द्रको प्रसन्न करने लगे जिससे उसको प्रबोध होय तब गुरुके प्रबोधसे कमलकलीसे इन्द्र निर्गत हुए ॥ ५६ ॥ हीन मुख रूपरहित लज्जासे कुंचितनेत्र इन्द्रने गुरुके चरण ग्रहण किये ॥ ५७ ॥ हे बृहस्पते गुरो ! मेरी रक्षा करो, इस पापसे मेरी निष्कृति कहो, देवराजके वचन सुन बृहस्पतिने कहा ॥ ५८ ॥ हे इन्द्र ! सुनो पापनाशका उपाय कहताहूं. प्रयागके

स्नान मात्रसे उसी समय पापसे ॥ ५९ ॥ छूट जाओगे सो तुम्हारे सहित हम वहां चलें. तब इन्द्र पुरोहितके साथ वहां गये
॥ ६० ॥ और प्रयागमें स्नान करनेसे बहुत शीघ्र पापोंसे मुक्त होगये, तब देव गुरुने प्रसन्न हो इन्द्रको वर दिया ॥ ६१ ॥
हेपापरहित ! तुम प्रयाग स्नानसे क्षीण पाप हुए हो, हे इन्द्र ! हमारे प्रसादसे क्षीण पाप होनेसे ॥ ६२ ॥ शरीरमें जो लज्जाके
चिह्न हैं यह सहस्र नेत्र होजांयगे. तब उसी समय ब्राह्मणके वाक्यसे इन्द्र शोभित हुए ॥ ६३ ॥ सहस्र नेत्र ऐसे शोभित हुए

मुच्यसेदेवराजत्वंतत्रयामःसहैवते ॥ अथपुरोधसासार्द्धमागत्यबलमर्दनः ॥ ६० ॥ सस्नौसितासितेतीर्थे
सद्योमुक्तोह्यघैस्ततः ॥ अथदेवगुरुस्तस्मैप्रसन्नस्तुवरंददौ ॥ ६१ ॥ प्रयागस्नानमात्रेणक्षीणपापंतवाऽनघ ॥
क्षीणपापस्यतेशक्रमत्प्रसादेनसत्वरम् ॥ ६२ ॥ सहस्रमेतद्योनीनांसहस्रंस्याद्दृशांतव ॥ तदैवद्विजवाक्येनशु
शुभेचशचीपतिः ॥ ६३ ॥ लोचनानांसहस्रेणपंकजैरिवमानसम् ॥ अथवृंदारकैःसर्वैर्ऋषिभिश्चाभिपूजितः ॥
॥ ६४ ॥ गंधर्वैःस्तूयमानस्तुगतःशक्रोमरावतीम् ॥ इत्थंसद्योविपापोऽभूत्प्रयागेपाकशासनः ॥ ६५ ॥
याहित्वमपिकल्याणिप्रयागंदेवसेवितम् ॥ सद्यःपापविनाशायतथास्वर्गतयेदृढम् ॥ ६६ ॥ इतितस्यवचः
श्रुत्वासेतिहासंसमंगलम् ॥ तदैवसंभ्रमापन्नानत्वापादौद्विजस्यतु ॥ ६७ ॥

जैसे कमलोंसे मानस सरोवर. तब सर्व देवता और ऋषियोंने उनकी पूजा की ॥ ६४ ॥ और गन्धर्वोंसे स्तुतिको प्राप्त हो इन्द्र
अमरावती पुरीको गये इस प्रकार प्रयाग स्नान करनेसे इन्द्र शीघ्रही पाप रहित होगया ॥ ६५ ॥ हे कल्याणि ! तूभी प्रयाग
सेवन करनेको जा शीघ्र पापनाश होकर स्वर्गकी प्राप्ति होगी ॥ ६६ ॥ इस प्रकार इतिहास सहित उसका सुमंगल नाम श्रवण

करके उसी समय ब्राह्मणके चरणोंको नमस्कार करके संभ्रमको प्राप्त हुई ॥ ६७ ॥ सब बंधुजन दास दासी और घरको त्यागन करके तथा सब पापोंको विषके ग्रासकी समान त्यागन करके ॥ ६८ ॥ हे राक्षस ! क्षणविध्वंसी शरीरको देख कर मैं घरसे निकली जो नरकरूप सागरका गिरानेवाला अग्निके समान लेलिहान ॥ ६९ ॥ हृदयरूपी निर्जीव दुःखरूप व्याघ्रसे तप्यमान हुई मैंने माघमासमें प्रयागमें जाकर स्नान किया ॥ ७० ॥ हे वृद्ध निशाचर ! सुन उस स्नानके माहात्म्यसे तीन दिनमें तो

त्यक्त्वाबंधुजनंसर्वान्दासदासीगृहंतथा ॥ सकलान्विषयान्रक्षोविषग्रासानिवस्फुटम् ॥ ६८ ॥ वपुश्च क्षणविध्वंसिपश्यंतीनिर्गताह्यहम् ॥ नरकार्णवसंपातदारुणांतरवह्निना ॥ ६९ ॥ हृदयेकुणपव्याघ्रतदातत्तप्यमानया ॥ मयागत्वाकृतंस्नानंमाघेमासिसितासिते ॥ ७० ॥ तस्यस्नानस्यमाहात्म्यंशृणुवृद्धनिशाचर ॥ त्र्यहात्पापक्षयोजातःसप्तविंशतिभिर्दिनैः ॥ ७१ ॥ शेषैर्मेयदभूत्पुण्यंतेनदेवत्वमागता ॥ रममाणातुकैलासेगिरिजायाःप्रियासखी ॥ ७२ ॥ जातिस्मरातथाजाताप्रयागस्यप्रभावतः ॥ स्मृत्वाप्रयागमाहात्म्यंमाघेमाघेव्रजाम्यहम् ॥ ७३ ॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेकांचनमालिनीरक्षःसंवादो नामद्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

मेरे पाप दूर होगये और सत्ताईस दिनके ॥ ७१ ॥ शेष पुण्यसे मैं देवता होगई. कैलासमें गिरिजाकी प्रिय सखी होकर विहार करूंगी ॥ ७२ ॥ और प्रयाग स्नानके कारणही मुझको जातिका स्मरण बनारहा. प्रयागका माहात्म्य स्मरण कर प्रत्येक माघमें स्नानको जाती हूं ॥ ७३ ॥ इति श्रीमाघमाहात्म्ये कांचनमालिनीरक्षःसम्वादो नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

कांचनमालिनी बोली, हे राक्षस ! विस्मित चित्तसे जो तैने पूछा सो मैंने तुम्हारी प्रीतिके निमित्त सब कहा ॥ १ ॥ हे राक्षस ! मेरी प्रीतिके निमित्त तुम अपना चरित्र कहो किस कर्मसे तुम भयंकर और विरूप हुए हो? ॥२॥ दाढी मूछोंवाले बड़ी-दाढ़ें क्रव्याद रूपसे पर्वतके गह्वरमें स्थित हो ? राक्षस बोला, जो इष्ट देता ग्रहण करता गुप्त कहता और पूछता है ॥ ३ ॥ हे भद्रे ! यह सज्जनोंकी प्रीतिहै, सो सब तुझमें स्थित है, हे वामलोचने ! मैं तुझसे अपनेको सत्कृत मानता हूं ॥ ४ ॥ तुझसे इस क्रूर कर्मकी

कांचनमालिन्युवाच ॥ ॥ इति राक्षसयत्पृष्टंत्वयाविस्मितचेतसा ॥ तन्मयाकथितंसर्वंचरितंप्रीतयेतव ॥१॥ मत्प्रीतयेचरित्रंस्वंत्वंब्रूहिममराक्षस ॥ कर्मणाकेनजातोसिविरूपोऽतिभयंकरः ॥ २ ॥ श्मश्रुलोदीर्घदंष्ट्रश्चक्रव्यादोगिरिगह्वरे ॥ राक्षसउवाच ॥ इष्टंददातिगृह्णातिगुह्यंवदतिपृच्छति ॥ ३ ॥ प्रीत्याहिसज्जनोभद्रे तच्चसर्वंत्वयिस्थितम् ॥ त्वयासंभावितोनूनंमन्येऽहंवामलोचने ॥ ४ ॥ भाविनीनिष्कृतिःसद्यस्त्वत्तोस्यक्रूरकर्मणः॥अतोवक्ष्यामितेभद्रेदुष्कृतंयत्स्वयंकृतम् ॥५॥ निवेद्यसज्जनेदुःखंततःसर्वःसुखीभवेत् ॥ शृणुसुश्रोण्यहंकाश्यांबह्वृचोवेदपारगः ॥ ६ ॥ जातःपुराद्विजःश्रेष्ठःकुलेमहतिनिर्मले ॥ राज्ञांदुष्कृतिनांभीरुशूद्राणांचयथाविशाम् ॥ ७ ॥ वाराणस्यांकृतोघोरोमयादुष्टप्रतिग्रहः ॥ बहुधाबहुधानारंनिषिद्धःकुत्सितोबहु ॥ ८ ॥

निष्कृति होनी है हे भद्रे ! तुझसे मैं अपने दुष्कृतको कहताहूं जो मैंने स्वयं किया है ॥ ५ ॥ सज्जनसे दुःख निवेदन करके मनुष्य सुखी होता है. हे सुश्रोणि ! सुनो मैं काशीका बह्वृच वेदपारगामी ॥ ६ ॥ निर्मल ब्राह्मणके कुलमें उत्पन्न हुआहूं, हे भीरु ! राजा दुष्कृती शूद्र तथा वैश्य ॥ ७ ॥ इनसे काशीमें मैंने घोर परिग्रह लिया, बहुतवार निषिद्ध कुत्सित वस्तु ग्रहण

की ॥ ८ ॥ दुष्टप्रतिग्रह मैंने चाण्डालकाभी त्यागन नहीं किया, औरभी मुझ मूढमतिसे अनेक पातक हुए ॥ ९ ॥ ऐसा कोई पापकर्म नहीं जो मैंने न कियाहो; हे वरवर्णिनी ! और क्षेत्रका दोष श्रवण करो ॥ १० ॥ अविमुक्तक्षेत्रमें अणुमात्र पाप करनेसे मेरुकी तुल्य होजाता है, उस जन्ममें मैंने कुछभी धर्म संचित नहीं किया ॥ ११ ॥ हे शोभने ! बहुत दिनोंके उपरान्त वहीं मृत्युको प्राप्त हुआ, काशी क्षेत्रके प्रभावसे मैं नरकको नहीं गया ॥ १२ ॥ अविमुक्तमें मरनेवाला कोईभी पापी नरकको नहीं

चांडालस्यापिनत्यक्तोमयादुष्टप्रतिग्रहः ॥ अन्यच्चपातकंतत्रममाभून्मूढचेतसः ॥ ९ ॥ तत्रास्तिदुष्कृतंकर्म मयायत्रनयत्कृतम् ॥ अन्यच्चश्रूयतांदोषःक्षेत्रस्यवरवर्णिनि ॥ १० ॥ अविमुक्तेऽणुमात्रंयत्तदघंमेरुतांव्रजेत् ॥ नधर्मस्तुमयाकश्चित्संचितस्तत्रजन्मनि ॥ ११ ॥ ततोबहुतिथेकालेमृतस्तत्रैवशोभने ॥ अविमुक्तप्रभावेणनचाहंनरकंगतः ॥ १२ ॥ अविमुक्तेमृतःकश्चिन्नरकंनैतिकिल्बिषी ॥ अविमुक्तेकृतंकिंचित्पापंवज्रीभवेद्दृढम् ॥ १३ ॥ वज्रलेपेनपापेनतेनमेजन्मराक्षसम् ॥ रौद्रङ्क्रूरतरंपापंसंभूतंहिमपर्वते ॥ १४ ॥ द्विर्जातो गृध्रयोनौप्राक्त्रिर्व्याघ्रोद्विःसरीसृपः ॥ एकवारमुलूकस्तुविड्वराहस्ततः परम् ॥ १५ ॥ इदंतुदशमंजन्मराक्षसं ममभामिनि ॥ अतीतानिसहस्राणिवर्षाणिममजन्मनः ॥ १६ ॥

जाता है और इस अविमुक्तक्षेत्रमें किया हुआ किंचित् पापभी वज्रके समान दृढ होजाता है ॥ १३ ॥ उस वज्रलेप पापके कारण मेरा जन्म राक्षस हुआ, रौद्र क्रूर पापसे युक्त इस हिमवान् पर्वतमें हुआ ॥ १४ ॥ इससे पहले दोवार गृध्र, तीन वार व्याघ्र, दोवार सरीसृप हुआ; एकवार उलूक, एकवार विड्वराह हुआ ॥ १५ ॥ हे भामिनि ! यह दशमा जन्म मेरा राक्षस का

वर्षाणां पञ्चसप्ततिरिति पाठः ।

है, मेरे जन्मको सहस्रों वर्ष बीतगये ॥ १६ ॥ हे भद्रे ! इस दुःखसागरसे मेरा निस्तारा नहीं है. हे सुभ्रू ! तीन योजनतक
यह स्थान मैंने जन्तुओंसे हीन करदिया है ॥ १७ ॥ विनापराध बहुतसे जन्तुओंका क्षय किया है, हे सुभ्रू ! इस कर्मसे सदा
मेरा अन्तर जलता रहताहै ॥ १८ ॥ तुम्हारे दर्शनरूप सुधाके सिंचनसे मेरे मनका शीत गया, तीर्थ कालमें फल देते हैं साधु
समागम शीघ्र फल देता है ॥ १९ ॥ हे सुभ्रू ! इससे महात्मा सत्संगतिकी प्रसंशा करते हैं, यह मैंने अपने हृदयका सब दुःख

नास्तिमेनिष्कृतिर्भद्रेएतस्माद्दुःखसागरात् ॥ अत्रत्रियोजनंसुभ्रूर्निर्जंतुर्हिमयाकृतम् ॥ १७ ॥ अनागसां
चभूतानांबहूनांचकृतःक्षयः ॥ कर्मणातेनमेसुभ्रूर्दह्यतेसततंमनः ॥१८॥ त्वद्दर्शनसुधासिक्तंगतंशैत्यंमनोमम॥
तीर्थंफलतिकालेनसद्यःसाधुसमागमः ॥ १९ ॥ अतःसत्संगतिंसुभ्रूःप्रशंसंतिमनीषिणः ॥ एतत्तेकथितंसर्वं
स्वदुःखंत्वद्धृतंमया ॥२०॥ विरलःसज्जनःसुभ्रूःस्वात्मायस्यनखिद्यते ॥ जानास्यत्रोचितंत्वंहिकिंचिन्नोवक्ष्यतः
परम् ॥ २१ ॥ अस्यदुःखोदधेःपारंकथंयामीतिचिंतयन् ॥ सज्जनानांसमाभूतिःसर्वेपामुपजीवनम् ॥ २२ ॥
क्षीरार्णवःपयोदत्तेहंसायनबकायकिम् ॥ ॥ श्रीदत्तात्रेयउवाच ॥ ॥ इतितस्यवचःश्रुत्वादयार्द्रीकृतमानसा
॥ २३ ॥ धर्मदाने मतिंकृत्वाजगौकांचनमालिनी ॥ करिष्येनिष्कृतिंरक्षइदानींखलुमाशुचः ॥ २४ ॥

तुमसे कहा है ॥ २० ॥ हे सुभ्रू ! ऐसे कोई विरलेही हैं जिनकी आत्मा खेदित न हो, इसका उत्तर तुम जानतीहो जो उचित है
इस कारण मैं कुछ नहीं कहताहूं॥ २१ ॥उस दुःखसागरसे कैसे पार हूंगा इसी प्रकार विचार करता हुआ रहताहूं, सज्जनोंका ऐश्वर्य
दूसरोंके उपकारके मिमित्त होता है ॥ २२ ॥ क्षीरसागर दूध हंसके निमित्त देता है. क्याबकके निमित्त नहीं? श्रीदत्तात्रेय बोले उसके
इस प्रकार वचन सुन दयासे आर्द्र मन होकर ॥ २३ ॥ धर्म दानमें मति कर कांचनमालिनीने कहा, हे राक्षस ! मैं तेरा निस्तार

१ यामिसुलोचने इतिपा० ।

करूंगी तू शोच मतकरै ॥ २४ ॥ दृढ प्रतिज्ञा कर तेरी मुक्तिके निमित्त यत्न करूंगी मैंने प्रत्येक वर्षमें यथाविधि बहुतसे माघ किये हैं ॥ २५ ॥ हे भद्र ! श्रद्धापूर्वक प्रयाग ब्रह्मक्षेत्र सेवन किये हैं, हे राक्षस ! उस धर्मकी संख्या कथन करतीहूं ॥ २६ ॥ पंडित जनोंने कहा है धर्मको गूढरूपसे करना चाहिये, दुःखीको दान करनेकी वेदवादियोंने प्रसंशा की है ॥ २७ ॥ हे भद्रे ! समुद्रमें वर्षनेसे मेघका क्या फलहोता है ? हे राक्षस ! उस पुण्यका फल मैंने स्वयं अनुभव किया है ॥ २८ ॥ हे मित्र ! वह

प्रतिज्ञांतुदृढांकृत्वायतिष्येतवमुक्तये ॥ बहवोहिकृतामाघावर्षेवर्षेयथाविधि॥२५॥ श्रद्धापूर्वमयाभद्रब्रह्मक्षेत्रेसितासिते ॥ तांवदामितुसंख्यांतितस्यधर्मस्यराक्षस ॥ २६ ॥ गूढोधर्मोहिकर्तव्यइत्यूचुर्विबुधाजनाः ॥ आर्तेदानंप्रशंसंतिमुनयोवेदवादिनः ॥२७॥ सागरेवर्षतोभद्रकिंमेघस्यफलंभवेत् ॥ अनुभूतंमयारक्षःस्वयंतत्पुण्यजंफलम् ॥२८॥ तत्तुदास्यामितोमित्रसद्यःपापविनाशनम् ॥ निष्पीड्याथततोवस्त्रंजलंकृत्वाकरांबुजे ॥२९॥ ददौसामाघजंपुण्यंतस्मैवृद्धायरक्षसे ॥ शृणुराजन्विचित्रंहिप्रभावंमाघधर्मजम् ॥ ३० ॥ तदैवंप्राप्यतत्पुण्यंविमुक्ताराक्षसीतनुः ॥ संभूतोदेवताकारस्तेजोभास्करविग्रहः ॥ ३१ ॥ देवयानंसमारूढःसहर्षोत्फुल्ललोचनः द्योतमानस्तदाव्योम्निभासयन्प्रभयादिशः ॥ ३२ ॥

पापनाशी पुण्यफल मैं शीघ्र तुझको देतीहूं तब वस्त्रको निचोड़ उसका जल हाथमें लेकर ॥ २९ ॥ उस वृद्धराक्षसके निमित्त उसने माघका पुण्य दिया, हे राजन् ! सुनो माघस्नानका फल विचित्र है ॥ ३० ॥ उस पुण्यको प्राप्त हो वह राक्षसी शरीरसे मुक्त हुआ, देवताके आकार तेजमें सूर्यकी समान हुआ ॥ ३१ ॥ देवताओंके विमानमें चढा प्रसन्नतासे फूले नेत्र आकाशमें प्रकाश

१ नानुवक्तुं समर्थोहं संख्यां धर्मस्य राक्षसेति पाठान्तरम् ।

मान कान्तिसे दिशाओंको प्रकाश करता ॥ ३२ ॥ दिव्य रूपधारे दूसरे सर्यकी समान शोभित हुआ. तब उस कांचनमालिनीकी बड़ाई करने लगा ॥ ३३ ॥ हे भद्रे ! कर्मका फलदाता ईश्वरही इस बातको जानता है, तैंने वह उपकार किया जिस्से मेरी निष्कृति नहीं होती ॥ ३४ ॥ अबभी कृपा करके मेरे ऊपर प्रसन्न हो अनुग्रह कर. हे देवी ! सर्वनीतिकी भरी परम पवित्र शिक्षा हमको दीजिये ॥ ३५ ॥ जो सब धर्मकी करनेवाली हो; जिससे मैं फिर पातकको न करूं, तुम्हारी आज्ञा पाय उसे सुनकर

दिव्यरूपधरोरेजेद्वितीयइवभास्करः ॥ ततोऽभिनंदयामाससतांकांचनमालिनीम् ॥ ३३ ॥ भद्रेवेत्तीश्वरोदेवः कर्मणांयःफलप्रदः ॥ तत्त्वयोपकृतंसर्वंयत्रमेनास्तिनिष्कृतिः ॥३४॥ इदानीमपिकारुण्यात्प्रसादानुग्रहंकुरु ॥ शिक्षांविधेहिमेदेविसर्वनीतिमयींशुभाम् ॥ ३५ ॥ सर्वधर्मकरीनूनंनकुर्वेपातकंयथा ॥ तांश्रुत्वात्वदनुज्ञातः पश्चाद्यामिसुरालयम् ॥ ३६ ॥ ॥ श्रीदत्तात्रेय उवाच ॥ ॥ एतन्निशम्यतेनोक्तंप्रियंधर्ममयंवचः ॥ अतिप्रीत्याऽब्रवीद्धर्मंराजन्कांचनमालिनी ॥ ३७॥ धर्मंभजस्वसततंत्यजभूतहिंसांसेवस्वसाधुपुरुषाञ्जहिकामशत्रुम् ॥ अन्यस्यदोषगुणकीर्तनमाशुहित्वासत्यंवदार्चयहरिंव्रजदेवलोकम् ॥ ३८ ॥ देहेऽस्थिमांसरुधिरेस्वमतिंत्यजत्वंजायासुतादिषुसदाममतांविमुंच ॥ पश्यानिशंजगदिदंक्षणभंगुरंहिवैराग्यभावरसिकोभवयोगनिष्ठः॥३९ ॥

फिर देवस्थानको जाऊंगा ॥३६॥ श्रीदत्तात्रेय बोले—यह उसके प्रिय ओर धर्ममय वचन सुनकर हे राजन् ! कांचनमालिनी बड़े प्रेमसे धर्म कथन करने लगी ॥ ३७ ॥ सदा धर्मका सेवन करो, प्राणियोंकी हिंसा त्यागो, साधु पुरुषोंका सेवन करो, काम शत्रुको जीतो, दूसरेके गुणदोष कहना त्यागो, सत्य बोलो, नारायणकी अर्चा कर देवलोकको जाओ ॥ ३८ ॥ देह अस्थि मांस

रुधिरमें आत्म मतिको त्यागन करो, स्त्री पुरुषमें ममताको त्यागो, इस जगत्को रातदिन क्षणभंगुर देखो, वैराग्यके भावमें रसिक होकर योगनिष्ठावाले हो ॥ ३९ ॥ यह प्रीतिसे मैंने तुमसे धर्ममार्ग कहा यह सब चित्तमें रखकर शीलयुक्त हो, और राक्षसशरीर त्याग देवतादेह धारणकर यथासुख ज्योतिर्मय स्वर्गको गमन करो ॥४०॥ यह धर्म सुन सन्तुष्ट हो राक्षस बोला, तू सदा प्रसन्न हो तुझको सदा मंगल हो॥४१॥चन्द्रसूर्यकी स्थितितक कैलासमें शिवके समीप रमणकर हे वरवर्णिनि ! पार्वतीमे तेरा अखण्ड प्रेमहो ॥४२॥

प्रीत्यामयानिगदितंतवधर्ममार्गंचित्तेनिधेहिसकलंभवशीलयुक्तः ॥ संत्यज्यराक्षसतनुंधृतदेवदेहोज्योतिर्मयो व्रजयथासुखमाशुनाकम् ॥ ४० ॥ श्रुत्वाधर्मंततोहृष्टःसंतुष्टोराक्षसोऽब्रवीत् ॥ भवप्रमुदितानित्यंसर्वदाशिव मस्तुते ॥ ४१ ॥ आचन्द्रार्कंरमस्वत्वंकैलासेशिवसन्निधौ ॥ उमयाऽखंडितंप्रेमतवास्तुवरवर्णिनि ॥ ४२ ॥ धर्मनिष्ठातपोनिष्ठामातस्त्वंभवसर्वदा ॥ मास्तुलोभःशरीरेतेआपन्नार्तिसदाहर ॥ ४३ ॥ इत्युक्त्वातुप्रणम्या थसतांकांचनमालिनीम् ॥ जगामराक्षसःस्वर्गंगंधर्वैर्बहुभिःस्तुतः ॥ ४४ ॥ देवकन्यास्तदागत्यववर्षुःपुष्पवृ ष्टिभिः ॥ तस्याःकांचनमालिन्यामूर्ध्निहर्षसमाकुलाः ॥ ४५॥ तामालिंग्यततः प्रोचुःकन्यकास्तुप्रियंवचः ॥ कृतंभद्रेत्वयाचित्रंराक्षसस्यविमोक्षणम् ॥ ४६ ॥

हे मातः ! तुम सदा धर्म और तपमें निष्ठावाली हो तेरे शरीरमें लोभ न हो सदा दुःख दूर करनेवाली हो ॥ ४३ ॥ ऐसा कहकर वह कांचनमालिनीको प्रणामकर गन्धर्वोंसे स्तुतिको प्राप्त हो स्वर्गको गया ॥ ४४ ॥ देवकन्याओंने आकर हर्ष युक्तहोकर उस कांचनमालिनीके ऊपर प्रेमसे पुष्पवर्षा की ॥ ४५ ॥ उसको आलिंगन कर देवकन्या प्रेमसे बोलीं—हे भद्रे !

तैने राक्षसकी विचित्र मुक्ति की॥४६॥इस दुष्टके भयसे कोई इस वनमें प्रवेश नहीं करता था, अब हम निर्भय हो यथासुखसे
विचरण करेंगी ॥ ४७ ॥ हे राजन् ! कांचनमालिनी उनके वचन सुनकर उस दानसे प्रसन्न हो कृतकृत्य हुई ॥ ४८ ॥ कांचन
मालिनी गन्धर्वकन्या उस राक्षसकी मुक्तिकरके क्रीडा करती हुई शिवके स्थानको गई और परोपकारसे पूर्ण प्रीतिको प्राप्त हुई ॥
॥ ४९ ॥ इस कन्याओंके सम्वादको जो मनुष्य परमभक्तिसे सुनते हैं वह राक्षसोंसे बाधाको प्राप्त नहीं होते, और उनकी धर्ममें

दुष्टस्यास्यभयात्कश्चिद्विशत्यस्मिन्नकानने ॥ अधुनानिर्भयाह्यत्रविचरामोयथासुखम् ॥ ४७ ॥ श्रुत्वातद्वचनं
राजंस्तासांकांचनमालिनी ॥ हृष्टातेनैवदानेनकृतकृत्यातदासती ॥४८॥ तंराक्षसंकांचनमालिनीवरागन्धर्व
कन्यापरिमोच्यसत्वरम् ॥ क्रीडंत्यमूभिःप्रययौहरालयंप्रीत्यासपूर्णाचपरोपकारया ॥ ४९ ॥ संवादमेनंवरक
न्यकेरितंभक्त्यापरंयःशृणुयाच्चमानवः ॥ नबाध्यतेजातुसदासराक्षसैर्धर्मेमतिस्तस्यभृशंहिजायते ॥ ५० ॥
इति श्रीपद्मपुराणेमाघमासमाहात्म्येदिलीपवसिष्ठसंवादेराक्षसमोक्षोनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ वसिष्ठ
उवाच ॥ ॥ कथितंमाघमाहात्म्यंदत्तात्रेयेणभाषितम् ॥ अधुनाऽहंप्रवक्ष्यामिमाघस्नानस्ययत्फलम् ॥ १ ॥
सर्वक्रतुवरिष्ठंतुसर्वदानफलप्रदम् ॥ सर्वव्रततपस्तुल्यंमाघस्नानंपरंतप ॥ २ ॥

मति सदा होती है ॥ ५० ॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे माघमाहात्म्ये पंडित ज्वालाप्रसादमिश्रकृतभाषाटीकायां राक्षसमोक्षोनाम
त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ ॥ वसिष्ठजी बोले—श्रीदत्तात्रेयका कहा माघमाहात्म्य वर्णन किया, अब माघस्नानका फल कहताहूं
॥ १ ॥ सब यज्ञोंमें श्रेष्ठ सब दानोंका फल देनेवाला हे परंतप ! यह माघस्नान सम्पूर्ण व्रत और तपकी तुल्य है ॥ २ ॥

माघस्नानसे विशुद्ध मन होकर दोनों कुलके पितरोंको स्वर्गमें स्थापन करके स्वयं उज्ज्वल मुख होकर स्वर्गको जाते हैं सुन्दर मनोहर कामगामी विमानोंपर स्थित होते हैं ॥ ३ ॥ जो मनुष्य सदा पाप करते हैं दुराचारी कुमार्गी हैं वे भी माघस्नानकर नारायणका अर्चन करनेसे महापापसे छूट जाते हैं ॥ ४ ॥ जो सत्यसे हीन माता पिताके दुःख देनेवाले आश्रम और कुलके धर्मसे वर्जित हैं जो पाखंडी पापी हैं वेभी स्नानसे श्रेष्ठ गतिको प्राप्त होते हैं ॥ ५ ॥ माघमासमें पुण्य तीर्थोंमें स्नान मिलना भूमिमें परम दुर्लभ

स्नानेनमाघस्यविशुद्धमानसाः पितॄन्दिविस्थाप्यकुलद्वयस्यवै ॥ स्वर्गंप्रयांतिस्वयमुज्ज्वलाननावरैर्विमानै रुचिरैश्चकामगैः ॥ ३ ॥ येमानवाःपापकृतोपिसर्वदासदादुराचाररताविमार्गगाः ॥ स्नात्वाहिमाघेहरिमर्चयंतियेमुंचंतितेपीहमहाघसंचयम् ॥ ४ ॥ सत्येनहीनाःपितृमातृदुःखदाह्यनाश्रमस्थाःकुलधर्मवर्जिताः ॥ येदांभिकास्तेपिनराःसतांगतिंस्नानैःप्रयांत्यत्रहिमाघसंभवैः ॥ ५ ॥ पुण्येषुतीर्थेषुचमाघमासेस्नानंनराणामतिदुर्लभंभुवि ॥ तस्माद्यतोत्रब्रह्मविदांपदंनरैः संप्राप्यतेनात्रविचारणामम ॥ ६ ॥ माघेतपोदानजपप्रसेवनं स्थानंहरेःपूजनमक्षयंनृप ॥ तस्माद्यथाशक्तिनरैःप्रयत्नतःस्नात्वाप्रदेयंवसनान्नकांचनम् ॥ ७ ॥ माघेऽन्नदाताऽमृतपःसुरालयेहेम्नश्चदातावलभित्समीपगः ॥ दीपाग्निवासांसिददन्नरःसदासूर्यस्यलोकेवसतिप्रभामयः ॥ ८ ॥

है इससे मनुष्योंको ब्रह्मविदोंका पद प्राप्त होता है इसमें सन्देह वा विचारकी बात नहीं है ॥ ६ ॥ माघमें तप दान जपका करना हरिका पूजन स्नान अक्षय होता है, इस कारण स्नान करके यथाशक्ति मनुष्योंको वस्त्र अन्न सुवर्ण देना चाहिये ॥ ७ ॥ माघमें अन्नदान करनेवाला देवलोकमें अमृत पाता है, सुवर्णका देनेवाला इन्द्रके समीप जाता है, दीप अग्नि वस्त्रका देनेवाला

१ अत्रचरणाधिक्यं ',दिनानि सप्तापिचपंचमानवाः ' इति केषुचित्पुस्तकेषु लभ्यते। २ वसनाग्निकांचनम्–इ० पा० ।

सूर्यके समीप कान्तिमान् होकर निवास करता है ॥८॥ यज्ञ दान और उज्ज्वल तप करके ब्रह्मचर्य अर्चा योग सेवासे प्राणी ऐसे
शुद्ध नहीं होते जैसे माघके स्नान करनेसे प्राणी शुद्ध होते हैं ॥९॥ जो असह्य यातनासे दुःखी होकर वे यमयातनाको प्राप्त नहीं
होते जो माघमासमें श्रेष्ठ तीर्थमें मज्जन करते हैं जब कि, सूर्यबिम्ब आधा उदित होता है ॥ १० ॥ माघमासमें स्नान करके जो
नारायणको अर्चन करते हैं वे स्वर्गसे च्युत होकर राजा होते हैं. श्रेष्ठ सुरूप सुभग प्यारे बोलनेवाले धर्मयुक्त बड़े धनी सौवर्षवाले

यज्ञैःसुदानैःसुतपोभिरुज्वलैःसुब्रह्मचर्यार्चनयोगसेवया॥ शुद्धाभवंतीदतथानपापिनःस्नानैर्यथापुण्यंभवैस्तुमा
घजैः ॥ ९ ॥ दुःखोवसंततिमसह्ययातनांयाम्यांनतेयांत्यपिपापकारिणः ॥ येमाघमासेवरतीर्थमज्जनंकुर्व
तिचार्धोदितसूर्यमंडले ॥ १० ॥ स्नात्वाचमाघे हरिमर्चयंतियेस्वर्गच्युताभूपतयोभवंति ॥ भव्याःसुरूपाः
सुभगाःप्रियंवदाधर्मान्विताभूरिधनाःशतायुषः ॥ ११ ॥ दीप्तानले काष्ठचयोयथाहुतोभस्मावशेषोभवती
हतत्क्षणात्॥ स्नानेनमाघस्यतथाविलीयतेक्षुद्रोपिपापौघमहाघसंचयः ॥ १२ ॥ कायेनवाचामनसापिपातकं
ज्ञातंयदज्ञातमलंकृतंनरैः ॥ स्नानंचमाघेवरतीर्थसंभवंसर्वंदहेद्विष्णुरिवाशुहृद्गतः ॥ १३ ॥ संभुज्यमानाघफलं
हिपार्थिवप्रमादतोपीहनृणांकदाचन ॥ स्नानंहिमाघस्ययतःप्रसज्यतेतदैवतत्संक्षयमेतिनिश्चितम् ॥ १४ ॥

होते हैं ॥ ११ ॥ दीप्ताग्निमें जिसप्रकार काष्ठसमूहकी आहुति दी जाती है और वह तत्काल भस्म होती है इसी प्रकार माघस्ना
नसे छोटे बड़े सब पाप क्षय हो जाते हैं ॥ १२ ॥ वचन मन कायाके पाप जानकर अथवा अनजानकर वा अज्ञात जो मनुष्योंने
किये हैं वह माघमासमें कहीं तीर्थमें स्नान करनेसे विष्णु भगवान् हृदयमें प्राप्त हुए सब भस्म कर देते हैं ॥ १३ ॥ हे राजन् !

१ तीर्थभवैश्च माघजैः--इ०पा० ।

पापके फलके भोगनेवाले कभी प्रमादसेभी माघस्नान करले तों उनके सब पाप कट जाते हैं ॥ १४ ॥ हे नृप ! गन्धर्वकी कन्या शापसे पापके महाफलको भोगती हुई माघमासमें स्नानकर लोमशके वचन मान पापसे मुक्त होगई ॥ १५ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे माघमाहात्म्ये भाषाटीकायां चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ ॥ सूतजी बोले राजाने यह सुन प्रसन्न हो गुरुके चरणोंको प्रणामकर परम श्रद्धासे नम्र होकर पुरोहितसे यह कहा ॥ १ ॥ हे भगवन् ! कहिये कन्याओंको शाप

गंधर्वकन्याःपृथिवीशशापजंसंभुज्यमानावफलंदुरत्ययम् ॥ स्नानाद्विमुक्ताःखलुमाघमासजाद्वाक्यात्पुरालोमशजातमद्भुतम् ॥ १५ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ श्रुत्वैतत्पार्थिवःप्रीत्यानत्वातत्पादपंकजम् ॥ श्रद्धयापरयानम्रस्तंपप्रच्छपुरोधसम् ॥ १ ॥ भगवन्ब्रूहिकन्याभिःशापोह्यभिगतःकुतः ॥ कस्यापत्यानितास्तासांनामकिंकीदृशंवयः ॥ २ ॥ कथंलोमशवाक्येनविपाकाच्छापसंभवात् ॥ विमुक्ताः कुत्रताः सस्नुर्मासंताःकतिसंख्यया ॥ ३ ॥ वसिष्ठउवाच ॥ श्रूयतांराजशार्दूलधर्मगर्भांकथांपराम् ॥ यथाऽरणिर्वह्निगर्भाधर्मसूर्वह्निसुरिव ॥ ४ ॥ गंधर्वःसुखसंगीतिस्तस्य कन्याप्रमोदिनी ॥ सुशीलस्यसुशीलाचसुस्वरास्वरवेदिनः ॥ ५ ॥

कहां हुआ ? वह किसकी कन्यार्थी और उनके क्या नाम थे ? कितनी उमर थी ? ॥ २ ॥ लोमशके वाक्यसे किस प्रकार शापान्तको प्राप्त हुई ? वे कह स्नानकर मुक्त हुई और कितनी थीं ? ॥ ३ ॥ वसिष्ठजी बोले, हे राजन् ! सुनो मैं धर्मयुक्त कथा तुमसे कहताहूं जैसे अरणीके गर्भमें अग्नि ऐसे धर्म सन्तानकी उत्पादकहै ॥ ४ ॥ सुखसंगीती गन्धर्व

स्वरवेदीकी सुस्वरा थी ॥ ५ ॥ चन्द्रकान्तिकी सुतारा, सुप्रभकी चन्द्रिका ह
की प्रमोदिनी कन्या थी सुशीलकी सुशीला आर स्वरवेदीकी सुस्वरा थी चन्द्रमासे निकली हुई चन्द्रिकाके समान
राजन् ! उन अप्सराओंके ये श्रेष्ठ नाम थे ॥ ६ ॥ ये पांचों कुमारी अवस्थामें समान थीं नेत्रोंको आनंद करनेवाली थीं जैसे बबूलोंको कौमुदी
उज्ज्वल थीं ॥ ७॥ चन्द्रमुखी सुकेशी चन्द्रके अमृतके समान रसयुक्त मनोहर उठे कुचकुंभवाली वैशाखमें खिली कमलिनीकी समान
॥ ८ ॥ लावण्य (सुन्दरता) के पिण्डसे सम्भूत सुन्दररूपवाली

कुमार्यः पंचसर्वा ॥ ६ ॥
सुताराचंद्रकांतस्यचंद्रिकासुप्रभस्यच ॥ इमानिवरनामानितासामप्सरसांनृप ॥ ६ ॥ कुमार्यःपंचसर्वा
स्तावयसासुसमाःपुनः ॥ चंद्रादिवविनिष्क्रांताश्चंद्रिकेवसमुज्ज्वलाः ॥ ७ ॥ चंद्राननाःसुकेशिन्यश्चंद्रामृत
रसाधराः ॥ नेत्रेष्वानंदकारिण्यःकौमुदीकुमुदेष्विव ॥ ८ ॥ लावण्यपिंडसंभूताश्चारुरूपामनोहराः ॥ उद्भिन्न
कुचकुंभिन्यःपद्मिन्यइवमाधवे ॥ ९ ॥ उन्मील्ययौवनंकांतवल्लीवनवपल्लवैः ॥ हेमगौराश्चहेमाभाहेमालंकार
भूषिताः ॥ १० ॥ हेमचंपकमालिन्योहेमच्छविसुवाससः ॥ स्वरग्रामावलीहासुविविधामूर्च्छनासुच ॥११ ॥
तालदानविनोदेषुवेणुवीणाप्रवादने ॥ मृदंगनादसंभिन्नलास्यमार्गलवेषुच ॥ १२ ॥ चित्रादिषुविनोदेषुकला
सुचविशारदाः ॥ एवंभूतास्तुताःकन्यामुमुदुःक्रीडनेवने ॥ १३ ॥

शोभित थीं ॥ ९ ॥ मनोहर यौवनसे उठी मानों वनके पल्लवोंकी लता है, सुवर्णके समान गौरवर्ण सुवर्णहीकी कान्तिवाली
सुवर्णके अलंकारोंसे भूषित ॥ १० ॥ सुवर्णके चम्पोंकी माला पहरे सुवर्णकी छविके वस्त्र पहरे स्वरग्राम लीला मूर्च्छना
॥ ११ ॥ तालविनोद वीणाबजाना मृदंगनाद लास्यनृत्य विशेष मार्ग लव ॥ १२ ॥ चित्र विचित्र विनोद और कलाओंमें सब

कुशल थीं. इस प्रकारकी वे कन्या वनमें वारंवार क्रीडा करती थीं ॥ १३ ॥ पिताओंसे लालित हुई कुबेरके स्थानमें विचरती थीं एक समय वैशाखमासमें सब कौतुकसे मिलकर इस वनसे उस वनमें मंदारके फूलोंको तोडतीं ॥ १४ ॥ गौरीके आराधन करनेको वे श्रेष्ठ अंगना अच्छे जलके अच्छोद सरोवरके निकट गईं. सुवर्णकमल और जल कमलोंको लेकर ॥ १५ ॥ वैडूर्यमणिके समान शुद्ध स्फटिक छविवाले तथा मूंगे जड़े सरोवरमें स्नान करके वस्त्र पहर मौन होकर स्थल पिण्डिकाकी अर्थात् सुवर्णसिकताकी

पितृभिर्लालिताःसत्यश्रेरुश्चधनदालये ॥ कौतुकादेकदापंचमिलित्वामासिमाधवे ॥ कन्यामंदारपुष्पाणिविचिन्वंत्योवनाद्वनम् ॥ १४ ॥ गौरींसमाराधयितुंवरांगनाःकदाचिदच्छोदसरोवरंययुः ॥ हेमांबुजानिप्रवराणिताःपुनस्तस्मादुपादायवरोत्पलैःसह ॥ १५ ॥ वैडूर्यशुद्धस्फटिकाच्छविद्रुमेस्नात्वातडागेपरिधायचांबरम् ॥ मौनेनचस्थंडिलपिंडिकामयींस्वर्णस्यसिक्ताभिरुमांविनिर्ममुः ॥१६॥ समार्चितांचन्दनचंद्रकुंकुमैरभ्यर्च्यगौरींवरपंकजादिभिः ॥नानोपचारैश्चसुभक्तिभावितास्तालप्रयोगैर्ननृतुःकुमारिकाः॥१७॥ गांधारमाश्रित्यवरंस्वरंततोगेयंसुतारध्वनिभिःसुमूर्च्छितम्॥एणीदृशस्ताःप्रजगुःकलाक्षरंचारुप्रबंधंगतिभिस्तुसुस्वरम्॥१८॥तस्मिन्सुनादेरसवर्षहर्षदेकन्यास्वलंनिर्भरनृत्यवृत्तिषु॥अच्छोदतीर्थप्रवरेतदागतःस्नातुंमुनेर्वेदनिधेःसुतोऽग्निपः॥१९॥

गौरीकी मूर्ति बनाई ॥ १६ ॥ चंद्र चन्दन कुंकुम कमलादिसे गौरीका पूजनकर अनेक उपचार कर सुन्दर भक्तिमें भावित होकर तालप्रयोगसे वे कुमारी नृत्य करने लगीं ॥ १७ ॥ फिर गांधार स्वरका आश्रय करके उच्च ध्वनीसे मूर्च्छनाके सहित गान करने लगीं. इस प्रकार ये मृगलोचनी मनोहर अक्षरोंसे गाने लगीं जो कि, सुन्दर बंध और मनोहर गतिसे सुस्वर राग था

स्थानमें वेदनिधि मुनिके पुत्र अग्निप ऋषि थे ॥ १९ ॥ रूपमें सीमारहित अनन्त सुन्दर मुखकमल लोचन चौड़ी छाती युवा सुन्दर भुजा श्याम छवि दूसरे कामदेवके समान सुन्दर ॥ २० ॥ शिखा सहित वह ब्रह्मचारी विराजमान हो रहेथे. दण्डसे युक्त धनुष लिये कामदेवके समान मृगचर्म ओढ़े सुन्दर सूत्र यज्ञोपवीत धारण किये सुवर्णके समान मूंजकी कटिसूत्र और मेखला धारण कियेथे ॥ २१ ॥ उन ब्राह्मणको देखकर वे सब बाला सरोवरके किनारे कौतुकको प्राप्त हो प्रसन्न हुई यह हमारे नैनोंको

रूपेणानिःसीमतरोवराननःसरोजपत्रायतलोचनोयुवा ॥ विशालवक्षाःसुभुजोऽतिसुंदरःश्यामच्छविःकामइवापरोहिसः ॥ २० ॥ सब्रह्मचारीसशिखोविराजतेदंडेनयुक्तोधनुषेवमन्मथः ॥ एणाजिनप्रावरणःसुसूत्रधृग्घेमाभमौंजीकटिसूत्रमेखलः॥२१ ॥ तंदृष्ट्वाब्राह्मणं बालास्तास्तत्रसरसस्तटे ॥ जहृषुःकौतुकाविष्टाः कोयंनोनयनातिथिः ॥२२॥ संत्यक्तनृत्यगीतास्तास्तस्यालोकनतत्पराः॥हरिण्योलुब्धकेनेवविद्धाःकामेनसायकैः॥२३॥ पश्यपश्येतिजल्पंत्योमुग्धाःपंचसुसंभ्रमम् ॥ तास्मिन्विप्रवरेयूनिकामदेवभ्रमंययुः ॥ २४ ॥ पुनःपुनस्तमभ्यर्च्यनयनैःपंकजैरिव ॥ पश्चाद्विचारयामासुस्ताश्चकन्याःपरस्परम् ॥ २५ ॥ यद्ययंकामदेवोहिरतिहीनःकथंव्रजेत् ॥ अथायमाश्विनौदेवौतौनूनंयुग्मचारिणौ ॥ २६ ॥

कौन अतिथि प्राप्त हुआ ? ॥ २२ ॥ वह गीत नृत्यको त्यागकर उन्हींको देखने लगीं; जैसे हरिणी कामरूपी लुब्धकके बाणसे विद्ध हो जाती हैं ॥ २३ ॥ वे पांचों मुग्धा संभ्रमसे कहने लगीं कि अरी ! देखो तो, "उस युवा ब्राह्मणमें उनको कामदेवका भ्रम होगया" ॥ २४ ॥ नेत्ररूपी कमलोंसे मानों उसको वारंवार अर्चनाकी पीछे वह कन्या विचार करने लगीं ॥ २५ ॥ जो यह कामदेव है तो रतिके विना कैसे गमन करेगा ? जो यह देव अश्विनीकुमार होते तो दोनों साथ होते ॥ २६ ॥

यह कोई गन्धर्व किन्नर वा सिद्ध कामरूप बनाये हैं, अथवा कोई ऋषि वा मनुष्यका पुत्र है ॥ २७ ॥ अथवा कोई हो इसे विधाताने हमारे निमित्त बनाया है जैसे भाग्यवानोंको पूर्वकर्मसे धन मिलता है ॥ २८ ॥ इसी प्रकार, हम कुमारियोंको गौरीने यह वर प्राप्त किया है करुणा जलकी तरंग और प्लवसे गीले चित्तवाली ॥ २९ ॥ उनके यह वचन कि, मैंने वरा तैंने वरा तुम मुझसे यह वरागया. इस प्रकार पांचो कन्याओंनें कहा ॥ ३० ॥ हे राजन् ! उनके वचन सुनकर ऋषिकुमार मध्याह्नकी

गंधर्वः किन्नरोवाथसिद्धोवाकामरूपधृक् ॥ ऋषिपुत्रोथवाकश्चित्कश्चिद्वामानुपोत्तमः ॥ २७ ॥ अस्तुवाकश्चिदेवायंधात्रासृष्टोहिनः कृते ॥ यथाभाग्यवतामर्थेनिधानंपूर्वकर्मभिः ॥ २८ ॥ तथाऽस्माकंकुमारीणांगौर्यानीतोवरोत्तमः ॥ करुणाजलकल्लोलप्लुवार्द्रीकृतचित्तया ॥ २९ ॥ मयावृतस्त्वयाचायंत्वयावृत्तस्तथामया ॥ एवंपंचसुकन्यासुवदंतीपुनृपोत्तम ॥ ३० ॥ श्रुत्वातद्वचनंतत्रकृत्वामाध्याह्निकीः क्रियाः ॥ आलोच्यहृदये सोपिविघ्नमेतदुपस्थितम् ॥३१ ॥ब्रह्मविष्णुगिरिशादयःसुरायेच सिद्धमुनयःपुरातनाः ॥ तेपियोगवलिनोविमोहितालीलयातदवलाभिरद्भुतम् ॥ ३२ ॥योषितांनयनतीक्ष्णसायकैर्भ्रूलतासुदृढचापनिर्गतैः ॥ धन्विनामकरकेतुनाहतःकस्य नोपततिहामनोमृगः ॥ ३३ ॥ तावदेवनयधीर्विराजतेतावदेवजनताभयंभजेत् ॥ तावदेवदृढचित्तताभृशंतावदेवगणनाकुलस्यच ॥ ३४ ॥

क्रिया करके मनमें विचारा कि, यह बड़ा विघ्न आनकर उपस्थित हुआ ॥ ३१ ॥ ब्रह्मा विष्णु गिरीश आदि देवता और जो पुरातन सिद्ध मुनि हैं वेभी लीलासेही अबलाओंपर मोहित होगये. यह अद्भुत है ॥ ३२ ॥ स्त्रियोंके नयनही तीक्ष्ण बाण भ्रूलतारूप दृढ धनुषसे निकले हुए कामरूपी धन्वीके छोड़े बाणोंसे किनकामी जनोंका मनरूपी मृग नहीं विद्ध होताहै ? ॥ ३३ ॥ जभीतक नीति

और बुद्धि है तभीतक जनोंका भय है और तभीतक दृढ चित्तता है तभीतक कुलकी गणना है ॥ ३४ ॥ तभीतक तपकी प्रगल्भता है तभीतक मनुष्योंको यमादिकी धारणा है जबतक स्त्रीके तीक्ष्ण बाणोंसे मनुष्यका मन नहीं मोहित होता ॥ ३५॥ यह रागियोंको मोहित और मदयुक्त करती है इनके मनोहर विलास हैं यह मुझे भी मोहितकर,मदता करती हैं किन गुणोंसे धर्मकी रक्षा होगी ॥ ३६ ॥ मांस वीर्य मल मूत्र सेवने निर्घृण अपवित्र स्त्रियोंके शरीरमें कामीजन मनोहरताकी

तावदेवतपसःप्रगल्भतातावदेवयमधारणंनृणाम् ॥ यावदेववनितेक्षणबाणैर्मोहमेत्युरुमदैर्नमानुपः ॥ ३५ ॥
मोहयंतुमदयंतुरागिणांयोपितःसुललितैर्मनोहरैः॥मोहयंतिमदयंतिमामिमंधर्मरक्षणपरंहिकैर्गुणैः ॥ ३६॥ मांस
शुक्रमलमूत्रनिर्मितेयोपितांवपुषिनिर्घृणेशुचौ ॥ कामिनश्वपरिकल्प्यचारुतांमारमंतुसुविमूढचेतसः ॥ ३७ ॥
दारुणोहिपरिकीर्तितोंगनासन्निधिर्विमलबुद्धिभिर्बुधैः ॥ यावदत्रनसमीपगाइमास्तावदेवहिगृहंव्रजाम्यहम्
॥ ३८ ॥ समीपंतस्ययावद्धिनागच्छंतिवरांगनाः ॥ वैष्णवेनप्रभावेणतावदंतर्दधेद्विजः ॥ ३९ ॥ तस्ययोगव
लाद्रूपगतस्यादर्शनंतदा ॥ दृष्ट्वातदद्भुतंकर्मऋपिपुत्रस्यधीमतः ॥४० ॥ वित्रस्तनयनाबालाःकुरंग्यइवकातराः
॥ संभ्रांतनयनाःशून्यादहशुस्तादिशोदश ॥ ४१ ॥

कल्पना करके मूढ चित्त हो रमण न करें तो अच्छा है ॥ ३७ ॥ बुद्धि सम्पन्न निर्मल चित्तवालोंके निकट स्त्रियोंका रहना महात्माओंने दारुण कहा है जबतक यह धीरे न आवें तबतक मैं घरको चला जाऊं ॥ ३८ ॥ जबतक उनके समीप वे सुहासिनी न आवें तबतक वैष्णव प्रभावसे ब्राह्मण अन्तर्धान होगये ॥ ३९ ॥ हे राजन् ! जब यह योगबलसे अदृष्ट हुए तब ऋषिपुत्रका यह अद्भुत कर्म देखकर ॥ ४० ॥ घबडाये नेत्रवाली वे बाला हरिणीकी समान कातर होगई संभ्रान्त नेत्रवाली दशों दिशा

शून्य देखने लगीं ॥ ४१ ॥ यह इन्द्रजाल अथवा मायाको जानता है यह देखनेसे कैसे अदृष्टरूप हुए इस प्रकार परस्पर बोलीं ॥ ४२ ॥ विरहाग्निसे उनका हृदय सदा व्याप्त रहने लगा वह स्निग्ध और सघन वन जब जलता सा दीखने लगा ॥४३ तब बोलीं हे कान्त इन्द्र ! जालकी विद्याको त्यागकर शीघ्र दर्शन दो पहलेही ग्रासमें मक्षिकाकी समान तुम अपनेको हमसे पृथक् मतकरो ॥ ४४ ॥ हा ! कष्ट है विधाताने तुमको दिखाकर फिर क्यों छिपा दिया जाना तुमसे हमको सन्ताप पाना

इंद्रजालंस्फुटंवेत्तिमायांजानातिवापुनः॥ दृष्टोऽप्यदृष्टरूपोऽभूदित्यूचुश्चपरस्परम् ॥ ४२॥ व्याप्तंतुहृदयंतासांसदैवविरहाग्निना ॥ ज्वलद्दावानलेनेवसुस्निग्धंसांद्रकाननम् ॥ ४३॥ त्यक्त्वेंद्रजालिकींविद्यांकांतदर्शयसत्वरम्॥ स्वात्मानंनोमनोयुक्तंप्राग्ग्रासेमाक्षिकोपमम् ॥ ४४ ॥ हाकष्टंदर्शितःकस्माद्धात्रात्वं घटितःपुनः॥ज्ञातंमहानुसंतापहेतोर्नस्त्वंविनिर्मितः ॥ ४५ ॥ कच्चित्तेनिर्दयंचेतःकच्चिदस्मासुनोमनः ॥ कच्चिद्धूर्तोसिहेकांतकच्चिन्मुष्णासिनोमनः ॥ ४६ ॥ कच्चिन्नप्रत्ययोऽस्मासुकच्चिदस्मान्परीक्षसे॥कच्चिन्नर्मकलाशीलःकच्चिन्मायाविशारदः॥७॥ कच्चिच्चित्तेप्रवेष्टुंचवेत्सिविज्ञानलाघवम् ॥ कच्चिन्निष्क्रमणोपायंनजानासिकुतःपुनः ॥ ४८ ॥ कच्चिद्विनाऽपराधंतुत्वमस्मासुप्रकुप्यसे ॥ कच्चिद्दुःखंविजानासिपरेषांविप्रलंभनम् ॥ ४९ ॥

निमित्त किया है ॥ ४५ ॥ या तुम्हाराचित्त निर्दयी है या हमपर तुम्हारा मन नहीं है हे कान्त ! क्या धूर्त हो जो हमारे मनको चुरातेहो ॥ ४६ ॥ या हमारा विश्वास नहीं या हमारी परीक्षा लेतेहो क्या तुम मनोहर कलावान् या मायामें विद्वानहो ॥४७ ॥ या चित्तमें प्रवेश करनेसे विज्ञानमें लघुता समझते हो फिर क्या निकलनेका उपाय नहीं जानते ॥ ४८ ॥ क्या विना

हे प्राणेश्वर! इस समय तुम्हारे दर्शन के बिना
अपराध तुम हमसे कुपित होते हो क्या दूसरोंके वंचितकरने का दुःख जानते हो ? ॥ ४९ ॥ हमकोभी शीघ्र वहां लेजाओ जहां तुम गये हो विधाताने तुम्हारा दर्शन हरकर
हम नहीं जियेंगी, तो तुम्हारे दर्शन दो ॥ ५० ॥ सज्जन मनुष्य अन्तावस्था को नहीं देखते हैं ॥ ५२ ॥ इस प्रकार
हमे शूल दिया ॥ ५१ सब प्रकार दया कर हमको दर्शनदो पिताके भयसे शीघ्रतासे घरको चलने लगीं ॥ ५३ ॥ उसके प्रेमरूपी निगड
वह कन्या विलापकर और बहुतकाल प्रतीक्षा कर फिर

त्वद्दर्शनंविनानूनंहृदयेश्वरसांप्रतम् ॥ नजीवामोथजीवामःपुनस्त्वद्दर्शनाशया ॥ ५० ॥ अस्मांश्चनीयतां
तत्रयत्रशीघ्रंगतोभवान् ॥ त्वद्दर्शनहरोधाताव्यदधादंकुराच्छिदम् ॥ ५१ ॥ सर्वथादर्शनंदेहिकारुण्यंभजसर्व
था ॥ पर्यंतंनप्रपश्यंतिसर्वथासज्जनाजनाः ॥ ५२ ॥ इत्थंविलप्यताःकन्याःप्रतीक्ष्यचबहुक्षणम् ॥ पितुर्भि
यागृहंगंतुंशीघ्रमारेभिरेगतिम् ॥ ५३ ॥ तत्प्रेमनिगडैर्बद्धाभृशंविरहविक्लवाः ॥ कथंचिद्धैर्यमालंब्यताःस्वंस्वं
गृहमागताः ॥ ५४ ॥ आगत्यपतिताःसर्वाजलयंत्रसमीपतः ॥ किमेतन्मातृभिः पृष्टाःकुतःकालात्ययोऽभ
वत् ॥ ५५ ॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमाहात्म्येदिलीपवसिष्ठसंवादेगंधर्वकन्याविरहप्राप्तिर्नामपंचदशोऽ
ध्यायः ॥ १५ ॥ ॥ कन्याऊचुः ॥ ॥ क्रीडंत्यःकिन्नरीभिस्तुसार्धंसंगीतकंमुदा ॥ ॥ संस्थितास्ते
ननज्ञातंदिवसादिसरोवरे ॥ १ ॥

से बंधी और अत्यन्त विरहसे व्याकुल किसी प्रकार धैर्यको धारण कर वे अपने २ घरको गईं ॥ ५४ ॥ और आकर सब
फुहारेके समीप गिर पड़ीं यह क्या ऐसा उनकी माताओंने पूंछा कि तुमको इतना विलम्ब क्यों हुआ ॥ ५५ ॥ ॥ इति श्रीप०
भा० टी० गन्धर्वकन्याविरहप्राप्तिर्नाम पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ ॥ कन्या बोलीं गंधर्वियोंके संग आनंदसे संगीतकी

क्रीडा करते स्थित होने से हमने समय न जाना ॥ १ ॥ हे माता ! हम मार्गसे श्रान्तहैं इस कारण हमारे तनमें संताप हुआ है मोहसे हम कुछभी कहने का उत्साह नहीं करतीं ॥ २ ॥ ऐसा कह वे कुमारी मणिभूमिमें लोटने लगीं और आकार छिपाकर माताओंसे जल्पना करने लगीं ॥ ३ ॥ कोई क्रीडा करके मयूरों से नहीं खेलतीथीं कोई कुतूहल से पींजरे के तोतेभी न पढाती थीं ॥ ४ ॥ नकुल का लालन सारिकाका उल्लास छोड दिया और अति मुग्धा होकर सारसोंसे क्रीडा नहीं करती हैं॥ ५ ॥ नवि

पथिश्रांतावयंमातःसंतापस्तेननस्तनौ ॥ मोहेनमहतावक्तुंनकेनाप्युत्सहामहे ॥ २ ॥ इत्युक्त्वालुलुठुस्तत्रम णिभूमौकुमारिकाः ॥ आकारंगोपयंत्यस्तामुग्धाजल्पंतिमातृभिः ॥ ३ ॥ काचिन्नर्तयतिक्रीडामयूरंनमु दातदा ॥ नपाठयतितंकीरंपंजरेऽन्याकुतूहलात् ॥ ४ ॥ लालयेन्नकुलंनान्यानोल्लासयतिसारिकाम् ॥ अप रातीवसंमुग्धानैवक्रीडातिसारसैः ॥ ५ ॥ भेजिरेनविनोदांस्तारेमिरेनैवमंदिरे ॥ ऊचिरेबांधवैर्नालंवीणावाद्यं नचक्रिरे ॥ ६ ॥ कल्पद्रुमप्रसूनंयद्रसवत्तुसुधोपमम् ॥ मंदारकुसुमामोदिनपपुर्मधुरंमधु ॥ ७ ॥ योगिन्यइ वताःकन्यानासाग्रन्यस्तलोचनाः ॥ अलक्ष्यध्यानसंतानाःपुरुषोत्तममानसाः ॥ ८ ॥ चंद्रकांतमणिच्छन्ने स्रवद्वारिकणद्रवे ॥ क्षणंवातायनेस्थित्वाजलयंत्रेक्षणंक्षणात् ॥ ९ ॥

नोद करती और न मंदिरमें रमण करतीथीं न बांधवोंसे बोलती न वीणा बजातीथीं ॥ ६ ॥ जो कल्प वृक्षके फल रस वाले अमृत की समान तथा मंदारके फूलों की गंधि और मधुभी पान नहीं करती थीं ॥ ७ ॥ योगिनीकी समान वे कन्या नासाके अग्र भागमें नेत्र रक्खे अलक्ष्य ध्यान किये उस पुरुष श्रेष्ठमें मन लगाये॥ ८॥ चन्द्रकान्तमणिसे छन्न वारी कण पसीना जिनके

चूरहा, क्षण मात्रको झरोखोंमें और क्षण मात्रको फुहारे के समीप स्थित होतीथीं ॥ ९ ॥ क्षण मात्रमें कमलिनी दलों शय्या रचतीथीं सखी उनकी शीतल कदली दल से बयार करती थीं ॥ १० ॥ इस प्रकार उन्होंने उस रात्रिको युगकी समान जाना किसी प्रकार धीरताको धारण कर विह्वल ज्वर की समान ॥ ११ ॥ प्रातःकाल सूर्यको देख अपना जीवन मान कर अपनी २ माताओंसे पूंछकर गौरी पूजनको चलीं ॥ १२ ॥ उसी विधिसे स्नान कर फूल गंधसे यथा तथा पूजा कर गान

रचयंतिक्षणंशय्यांदीर्घिकांभोजिनीदलैः ॥ वीज्यमानाःसखीभिस्ताःशीतलैःकदलीदलैः ॥ १० ॥ इत्थंयुगसमां रात्रिमन्वानास्तावरस्त्रियः ॥ कथंचिद्धीरतांकृत्वाविह्वलाःसज्वराइव ॥ ११ ॥ प्रातर्व्योममणिंदृष्ट्वामन्यमानाः स्वजीवितम् ॥ विज्ञाप्यमातरंस्वांतुगौरींपूजयितुंगताः ॥ १२ ॥ स्नात्वातेनविधानेनपुष्पैर्धूपैर्यथातथा ॥ विधायपूजनंदेव्यागायंत्यस्तत्रताःस्थिताः ॥ १३ ॥ एतस्मिन्नंतरेविप्रःस्नातुंसोपिसमागतः ॥ पित्राश्रमपदा त्तस्मादच्छोदेचसरोवरे ॥ १४ ॥ मित्रंदृष्ट्वैवरात्र्यंतेनालिन्यइवकन्यकाः ॥ उत्फुल्लनयनाजातास्तंदृष्ट्वाब्रह्मचा रिणम् ॥ १५ ॥ गत्वातदैवताःकन्याःसमीपंब्रह्मचारिणः ॥ सव्यापसव्यबंधेनभुजपाशंचचक्रिरे ॥ १६ ॥ गतोसिधूर्तपूर्वेद्युर्गंतुमद्यनशक्यते ॥ वृतस्त्वंनूनमस्माभिर्नात्रतेस्तुविचारणा ॥ १७ ॥

करने लगीं ॥ १३ ॥ इस समय वह ब्राह्मण भी स्नान करनेको अपने पिताके आश्रम से अच्छोदके समीप आये ॥ १४ ॥ उस मित्रको देखकर रात्रिके अन्तमें खिली कमलिनीकी समान प्रसन्न हुई उस ब्रह्मचारीको देख उनके नेत्र फूलगये ॥ १५ ॥ उसी समय वे कन्या उस ब्रह्मचारीके समीप गईं और चारों ओरसे उनको घेरलिया ॥ १६ ॥ हे धूर्त ! कल तो तुम चलेगये

आज जा नहीं सकोगे हमने तुमको वरण किया है अब इसमें तुमको विचार करना नहीं चाहिये ॥ १७ ॥ यह सुनकर वह ब्राह्मण हँसते हुए बोले हे भद्रे ! तुम अनुकूल और प्रियवचन कहती हो ॥ १८ ॥ परन्तु मैं प्रथम आश्रममें निष्ठा वालाहूं यह मेरा व्रत नहीं हैं गुरुकुलमें रहकर पहले वेदाभ्यासके पार होते हैं ॥ १९ ॥ जिस आश्रमका जो धर्म है विद्वानोंको उसकी रक्षा करनी चाहिये हे कन्यकाओ ! इस कारण इस समय मैं विवाह करना धर्म नहीं मानता ॥ २० ॥ उनके वचन सुन वे कन्या

इत्युक्तोब्राह्मणःप्राहप्रहसन्बाहुपाशगः ॥ युष्माभिरुच्यतेभद्रमनुकूलंप्रियंवचः ॥ १८ ॥ प्रथमाश्रमनिष्ठस्य किंतुनाद्यापिमेव्रतम् ॥ वेदाभ्यसनशीलस्यपारंयातिगुरोःकुले ॥ १९ ॥ आश्रमेयत्रयोधर्मोरक्षणीयः स पंडितैः ॥ विवाहोऽयमतोमन्येनधर्मइतिकन्यकाः ॥ २० ॥ आकर्ण्यतस्यवाक्यानितमूचुस्तावचस्ततः ॥ सकलध्वनिसोत्कंठाःकोकिलाइवमाधवे ॥ २१ ॥ धर्मादर्थोर्थतःकामःकामाद्धर्मफलोदयः ॥ इत्येवंनिश्चितंशास्त्रं वर्णयंतिविपश्चितः ॥ २२ ॥ सकामोधर्मबाहुल्यात्पुरस्तेसमुपागतः ॥ सेव्यतांविविधैर्भोगैःस्वर्गभूमिरियं ततः ॥ २३ ॥ श्रुत्वातद्वचनंतासांप्राहगंभीरयागिरा ॥ तथ्यंवोवचनंकिंतुसमाप्येहस्वकंव्रतम् ॥ २४ ॥ प्राप्यानुज्ञांगुरोःसर्वंवैवाहंकर्मनान्यथा ॥ इत्युक्तापुनरूचुस्ताःस्फुटंमूढोसिसुन्दर ॥ २५ ॥

बोलीं मानो वैशाखमें कोकिला बोलती हो ॥ २१ ॥ धर्म से अर्थ अर्थ से काम काम से धर्म फलका उदय होता है इस कारण बुद्धिमान् निश्चित शास्त्रका वर्णन करते हैं ॥ २२ ॥ हम सकाम और धर्म की अधिकता से तुम्हारे समीप आकर प्राप्त हुई हैं अनेक भोगोंसे इस स्वर्ग भूमिकी सेवा करो ॥ २३ ॥ उनके यह वचन सुन ब्राह्मण गंभीर वाणीसे बोले यह तुम्हारा वचन सत्य है किंतु मैं अपना व्रत समाप्त करके ॥ २४ ॥ गुरुकी आज्ञा लेकर सबसे विवाह करूंगा इसमें अन्यथा नहीं है यह

सुनकर वे बोलीं, हे सुन्दर ! तुम अवश्यही अज्ञ हो ॥ २५ ॥ दिव्य ओपधि दिव्य रसायन सिद्धि निधि साधु कला सुन्दर स्त्री मंत्र तथा धर्म सिद्धि यह आनेपर इनका निषेध किसीको करना न चाहिये ॥ २६ ॥ दैवसे यदि कार्य सिद्धि हो जाय नीति जाननेवालेको उसकी उपेक्षा करनी न चाहिये क्योंकि उपेक्षा करनेसे फल नहीं मिलता इस कारण उपेक्षा न करै ॥ २७ ॥ घने अनुराग वली कुल जन्मसे निर्मल स्नेहसे आई चित्त सुन्दरी वाणीवाली स्वयंवरकी इच्छावाली स्वरूपवान् यौवनवाली रूपवती

दिव्यौपधंब्रह्मरसायनंचसिद्धिर्निधेःसाधुकलावरांगनाः॥ मंत्रस्तथासिद्धिरसश्चधर्मतोनेमानिषेध्याःसुधियास मागताः ॥ २६ ॥ कार्यंहिदैवाद्यदिसिद्धमागतंतस्मिन्नुपेक्षन्नचयातिनीतिगः ॥ यस्मादुपेक्षानपुनःफलप्रदात स्मान्नदीर्घीकरणंप्रशस्यते ॥ २७ ॥ सांद्रानुरागाकुलजन्मनिर्मलाःस्नेहार्द्रचित्ताःसुगिरःस्वयंवराः ॥ कन्याः सुरूपाःखलुचारुयौवनाधन्यालभंतेत्रनरास्तुनेतरे ॥ २८ ॥ क्ववयंवरसुन्दर्यःक्वचायंतापसोबटुः ॥ दुर्दै टस्यविधानेहिमन्येधातातिपंडितः ॥ २९ ॥ तस्मादस्मादिदानींतुस्वीकुर्यान्मंगलं भवान् ॥ गांधर्वेणविवाहे नह्यन्यथानोनजीवितम् ॥ ३० ॥ श्रुतवाक्यस्ततःप्राहब्राह्मणोधर्मवित्तमः ॥ भोमृगाक्ष्यःकथंत्याज्योधर्मो धर्मधनैर्नरैः ॥ ३१ ॥ धर्मश्चार्थश्चकामश्चमोक्षश्चैतच्चतुष्टयम् ॥ यथोक्तंसफलंज्ञेयंविपरीतंतुनिष्फलम् ॥३२॥

कन्या धन्य पुरुषही प्राप्त करते हैं दूसरे नहीं ॥ २८ ॥ कहां हम सुन्दरी और कहां यह तपस्वी बटु दुर्दैवके विधानमें ही हम जानते हैं विधाता पंडित है ॥ २९ ॥ इस कारण आप हमारे इस मंगलको स्वीकार करो गन्धर्व विवाह करो अन्यथा हमारा जीवन न होगा ॥ ३० ॥ उनके यह वचन सुन धर्मात्मा ब्राह्मण बोले, हे मृगलोचनीयो ! धर्मात्मा मनुष्य अपना धर्म कैसे त्यागन कर सकते हैं ॥ ३१ ॥ धर्म अर्थ काम मोक्ष यह चार यथोक्त कर सफल होते हैं और विपरीततासे निष्फल होते

है ॥ ३२ ॥ विना समय मैं व्रतके कारण स्त्री परिग्रह नहीं करूंगा जो क्रिया के समयको नहीं जानता वह क्रिया के फलको नहीं प्राप्त होता ॥ ३३ ॥ इस कारण मेरा मन धर्म विचारमें लगाहै इस कारण हे कन्याओ ! सुनो मैं स्वयंवरकी इच्छा नहीं करता ॥ ३४ ॥ यह उसका आशय जानकर वे परस्पर एक दूसरीको देखने लगीं हाथसे हाथ छोडकर उनके चरण पकड लिये ॥ ३५ ॥ और उन सुशीलाओंने आतुर होकर उनकी भुजा ग्रहण करलीं सुताराने आलिंगन कर उसका चन्द्रमुख चूम लिया

नाकालेऽहंव्रतीकुर्यामतोदारपरिग्रहम् ॥ नक्रियाफलमाप्नोतिक्रियाकालंनवेत्तियः ॥ ३३ ॥ यतोधर्मविचारेस्मिन्प्रसक्तंममामानसम् ॥ तस्माच्छृणुतहेकन्यानसमीहेस्वयंवरम् ॥ ३४ ॥ एवंज्ञात्वाशयंतस्यसमीक्ष्यैताःपरस्परम् ॥ करात्करंविमुच्याथजग्राहांघ्रीप्रमोदिनी ॥ ३५ ॥ भुजौजग्राहतुस्तस्यसुशीलासुस्वरातथा ॥ आलिलिंगसुताराचचुचुंबचंद्रिकामुखम् ॥ ३६ ॥ तथापिनिर्विकारोसौप्रलयानलसन्निभः ॥ शशापब्रह्मचारीताःक्रोधेनात्यंतमूर्च्छितः ॥ ३७ ॥ पिशाच्यइवमांलग्नास्तत्पिशाच्योभविष्यथ ॥ एवंतेनाशुशप्तास्तास्तंसंत्यज्यपुरःस्थिताः ॥ ३८ ॥ किमेतच्चेष्टितंपापह्यनागसिजनेत्वया ॥ प्रियेकृत्येऽप्रियंकृत्वाधिक्तांधर्मज्ञतांतव ॥ ३९ ॥ अनुरक्तेपुभक्तेपु मित्रेपुद्रोहकारिणः ॥ पुंसोलोकद्वयेसौख्यंनाशंयातीतिनःश्रुतम् ॥ ४० ॥

॥ ३६ ॥ तो भी यह प्रलय अग्निके समान निर्विकार रहे तब ब्रह्मचारीने क्रोध से मूर्च्छित होकर उनको शाप दिया ॥ ३७ ॥ तुम पिशाचियों की समान मुझे लिपटी हो इस कारण पिशाचिनी होगी ऐसा शाप देतेही वे उसे छोडकर सन्मुख स्थित हुईं ॥ ३८ ॥ हे पापिष्ठ ! निरपराध जनोंको क्यों शाप दिया यह तुम्हारी क्या चेष्टा है, प्रियकरनेमें अप्रिय किया तुम्हारी धर्मज्ञताको धिक्कार है ॥ ३९ ॥ अनुरक्त भक्तों और मित्रों में जो द्रोह करते हैं उन पुरुषों के दोनों लोक नष्ट होते हैं ऐसे हमने सुना है ॥ ४० ॥

इसकारण तुमभी हमारे शापसे पिशाच होंगे, इस प्रकार कह वह बाला निवृत्त हुई और क्षुधाके कारण श्वास लेने लगीं ॥ ४१ ॥
हे राजन् ! फिर उस सरोवरमें एक दूसरेके संरंभसे वह कन्या और ब्रह्मचारी पिशाच और पिशाचनी हुए ॥ ४२ ॥
वह पिशाच पिशाचिनी दारुण शब्द करने लगे और उस अपने कर्मका विपाक विताने लगे ॥ ४३ ॥ पूर्व उपार्जन किया कर्म
समय पर ही फलता है और हे राजन् ! वह अपनी इच्छासे होता है देवताभी इसको निवृत्त नहीं करसकते ॥ ४४ ॥ उनके

तस्मात्त्वमपिनःशापात्पिशाचोभवसत्वरम् ॥ इत्युक्त्वोपरताबालानिःश्वसंत्यःक्षुधाकुलाः ॥४१॥ तदाचान्यो
न्यसंरंभात्तस्मिन्सरसिपार्थिव ॥ ताःकन्याब्रह्मचारीससर्वेपैशाचमागताः ॥ ४२ ॥ पिशाच्यःसपिशाचश्चक्रं
दमानाःसुदारुणम् ॥ क्षपयंतिविपाकंतंपूर्वोपात्तस्यकर्मणः ॥४३॥ स्वकालेतुफलत्येवपूर्वोपात्तंशुभाशुभम् ॥
स्वच्छायाइवदुर्वारंदेवानामपिपार्थिव ॥ ४४ ॥ क्रंदंतिपितरस्तासांमातरस्तत्रतस्यच ॥ अप्रमादश्चबालानांदै
वंहिदुरतिक्रमम् ॥ ४५ ॥ ततऊर्ध्वंपिशाचास्तेआहारार्थंसुदुःखिताः ॥ इतस्ततश्चधावंतोवसंतिसरसस्तटे ॥
॥ ४६ ॥ एवंबहुतिथेकालेलोमशोमुनिसत्तमः ॥ पौषेमासिचतुर्दश्यामच्छोदेस्नातुमागतः ॥ ४७ ॥ दृष्ट्वातं
ब्राह्मणंसर्वेपिशाचाः क्षुत्समाकुलाः ॥ धावंतोहंतुकामास्तेमिलित्वायूथवर्तिनः ॥ ४८ ॥

माता पिता जहां तहां विलाप करने लगे, बालाओंका प्रमाद नहींथा परन्तु प्रारब्धको कोई मेट नहीं सकता ॥ ४५ ॥ तब वे
पिशाच भोजनके निमित्त बडे दुःखी हुए इधर उधर धावमान हो सरोवरके किनारे रहते थे ॥ ४६ ॥ इस प्रकार बहुत दिन
बीतनेपर मुनिश्रेष्ठ लोमशजी पौषमासकी शुक्ल चतुर्दशीको अच्छोद सरोवरको स्नान करनेके निमित्त आये ॥ ४७ ॥ उन
ब्राह्मणको देखकर वे सब पिशाच पिशाचिनी भूखसे व्याकुल हो इकठ्ठे हो उनके मारनेकी इच्छासे धावमान हुए ॥ ४८ ॥

परन्तु लोमशके तेजसे वे दह्यमान होने लगे आगे आनेको असमर्थ हो दूर स्थित हुए ॥ ४९ ॥ वेदनिधि ब्राह्मण उसी समय वहां आये लोमशको देखकर उसने साष्टांग प्रणाम किया ॥ ५० ॥ शिरपर अंजली बांध मनोहर वचन कहे अहो भाग्यसेही आज महात्माकी संगतिहुईहै ॥ ५१ ॥ जो मनुष्य सदा गंगादि तीर्थमें स्नान करता है और जो सत्संगति करताहै उस में सत्संगति श्रेष्ठ है ॥ ५२ ॥ हे भगवन्! गुरुजनों की संगति भूमिमें दृष्टादृष्ट फलदायक स्वर्गदायक रोगहारक है किन्तु कुछ उपद्रव युक्त

दह्यमानाःसुतीव्रेणतेजसालोमशस्यच ॥ असमार्थाःपुरःस्थातुंसर्वेतेदूरतःस्थिताः ॥ ४९ ॥ तत्रवेदनिधिर्वि प्रस्तदेवहिसमागतः ॥ समीक्ष्यलोमशंराजन्साष्टांगंप्रणिपत्यसः ॥ ५० ॥ उवाचसूनृतांवाचंबद्धाशिरसिचां जलिम् ॥ महाभाग्योदयेविप्रसाधूनांसंगतिर्भवेत् ॥ ५१ ॥ गंगादिसर्वतीर्थेपुयोनरःस्नातिसर्वदा ॥ यःकरोति सतांसंगंतयोःसत्संगतिर्वरा ॥ ५२ ॥ गुरूणांसंगमोविप्रदृष्टादृष्टफलोभुवि ॥ स्वर्गदोरोगहारीचाकिंतुसोपद्रवो मतः ॥ ५३ ॥ इत्युक्त्वाकथयामासपूर्ववृत्तांतमद्भुतम् ॥ इमागंधर्वकन्यास्तावद्बुःसोयंममात्मजः ॥ ५४ ॥ सर्वेपिशाचरूपेणामिथःशापविमोहिताः ॥ दीनाननास्तुतिष्ठंतितवाग्रेमुनिसत्तम ॥ ५५ ॥ त्वद्दर्शनेनबालानां निस्तारोऽद्यभविष्यति ॥ सूर्योदयेतमःस्तोमःकिंनलीयेतगह्वरे ॥ ५६ ॥

है ॥ ५३ ॥ ऐसा कहकर पूर्व अद्भुतवृत्तान्तको वर्णन किया कि यह वह गंधर्वकी कन्याहैं, और यह वो मेरा पुत्र ब्रह्मचारीहै ॥ ५४ ॥ यह सब परस्पर शापदेनेके कारण पिशाचरूपसे मोहितहैं हे मुनिश्रेष्ठ! तुम्हारे सन्मुख दीन हुए खडे हैं ॥५५॥ तुम्हारे दर्शन से इसबालकोंका आज निस्तार होजायगा, जैसे सूर्यके उदय होनेसे अंधकार समूह गुहाओंमें लीन होजाता है ॥ ५६ ॥

हे राजन् ! लोमशजी यह बात सुन दयासे आर्द्र चित्तहो वह महा तेजस्वी पुत्रके दुःखी ब्राह्मणसे बोले ॥ ५७ ॥ मेरे प्रसाद
इन बालकोंको शीघ्रही स्मृति होगी और वह धर्म कहताहूं जिस्से इनका शाप परस्पर लोप होजायगा॥५८॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघ
माहात्म्यभाषाटीकायां पोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ ॥ वेदनिधि बोले हे महर्पे ! वह धर्म कहो जिस्से बालक शापसे मुक्तिको
प्राप्त होजांय यह समय देरका नहीं कारण कि शापाग्नि बडी दारुण है॥ १॥ लोमशजी बोले ! यह मेरे साथ विधिसे माघस्नान करें

श्रुत्वातल्लोमशोराजन्कृपार्द्रीकृतमानसः ॥ प्रत्युवाच महातेजास्तंमुनिंपुत्रदुःखितम् ॥ ८७ ॥ मत्प्रसादाच्चबा
लानांस्मृतिःसपदिजायताम् ॥ धर्मंचवच्मितंयेनामिथःशापोलयंव्रजेत् ॥ ८८ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमा
हात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेगंधर्वकन्याशापवर्णनंनामपोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ ॥ वेदनिधिरुवाच ॥
महर्पेकथ्यतांधर्मोमुच्यंतेयेनबालकाः ॥ नायंकालोविलंबस्यशापाग्निर्दारुणोयतः ॥ १॥ ॥ लोमशउवाच ॥
मयासार्धंप्रकुर्वंतुमाघस्नानंविधानतः ॥ शापान्मुच्यंतिमाघांतेनान्यथानिष्कृतिर्भवेत् ॥ २ ॥ शापःपापफलं
विप्रपापनाशोभवेन्नृणाम् ॥ माघस्नानेनतीर्थेचइतिमेनिश्चितामतिः ॥ ३ ॥ सप्तजन्मकृतंपापंवर्तमानंचपात
कम् ॥ माघस्नानंदहेत्सर्वंपुण्यतीर्थेविशेपतः ॥ ४ ॥ प्रायश्चित्तंनपश्यंतियस्मिन्पापेमुनीश्वराः ॥ पातकंपु
ण्यतीर्थेपुनश्येत्तदपिमाघतः ॥ ५ ॥

तो माघके अन्तमें इनका उद्धार होजायगा और प्रकारसे निष्कृति न होगी ॥ २ ॥ हे विप्र ! पापका फल और शाप माघस्नानसेही
दूर होते हैं और प्रकार नहीं यह मुझे निश्चय है ॥ ३ ॥ सात जन्मका किया पाप और वर्तमान जन्मका पाप यह सब माघका
स्नान नष्ट करदेता है विशेप कर पुण्य तीर्थमें ॥ ४ ॥ हे मुनीश्वरो ! मैं जिस पापका प्रायश्चित्त नहीं देखताहूं वह पातकभी पुण्य

तीर्थमें माघस्नान करनेसे नाश होजाता है ॥ ५ ॥ जानकर पाप करनेसे भी माघस्नानसे छूट जाता है हिमालयके तीर्थोंमें स्नान करनेसे सब पाप छूटते हैं ॥ ६ ॥ अच्छोदमें स्नान करनेसे इन्द्र लोककी प्राप्तिहोती है ऐसा वेदवादी कहते हैं बदरी वनमें माघमासमें स्नान करनेसे सब पाप दूरहोते हैं ॥ ७ ॥ पापहारी दुःख नाशक सब काम फलका दाता नर्मदामें माघ स्नान रुद्र लोकका फल देता है ॥ ८ ॥ यमुनाके स्नानसे पाप नाशहो सूर्य लोक मिलता है सरस्वतीका जल पाप दूर कर

ज्ञानकृन्मानसेमाघस्तस्मान्मोक्षफलप्रदः ॥ हिमवत्पृष्ठतीर्थेषुसर्वपापप्रणाशनः ॥ ६ ॥ इंद्रलोकप्रदोऽच्छोदे निर्दिष्टोवेदवादिभिः ॥ सर्वपापहरोमाघोमोक्षदोबदरीवने ॥ ७ ॥ पापहादुःखहारीचसर्वकामफलप्रदः॥रुद्रलोकप्रदोमाघोनार्मदेपापनाशनः ॥ ८ ॥ यामुनः सूर्यलोकायभवेत्कल्मषनाशनः ॥ सारस्वतोऽघविध्वंसी ब्रह्मलोकफलप्रदः ॥ ९ ॥ विशालेफलदोमाघोविशालायांद्विजोत्तम ॥ पातकेंधनदावाग्निर्गर्भहेतुक्रियापहः ॥ ॥ १० ॥ विष्णुलोकायमोक्षायजाह्नवःपरिकीर्तितः ॥ सरयूगंडकीसिंधुश्चंद्रभागाचकौशिकी ॥ ११ ॥ तापीगोदावरीभीमापयोष्णीकृष्णवेणिका ॥ कावेरीतुंगभद्राचअन्यायाश्चसमुद्रगाः ॥ १२ ॥ आशुमाघीनरोयातिस्वर्गलोकंविकल्मषः ॥ नैमिषेविष्णुसायुज्यंपुष्करेब्रह्मणोंतिकम् ॥ १३ ॥

ब्रह्म लोक देता है ॥ ९ ॥ विशालामें माघस्नान बड़ा फल देता है यह पाप रूपी इंधनको दावाग्नि और गर्भके कारणको दूर करता है ॥ १० ॥ गंगामें स्नानसे विष्णुलोककी प्राप्ति और मुक्ति होती है सरयू गंडकी सिंधु चन्द्रभागा कौशिकी ॥ ११ ॥ तापी गोदावरी भीमा पयोष्णी कृष्णा वेणी-कावेरी तुंगभद्रा तथा और समुद्रगामिनी ॥ १२ ॥ इनमें माघस्नान करनेसे मनुष्य शीघ्रही

पाप रहित होजाता है, नैमिषारण्यमें विष्णुका सायुज्य पुष्कर में ब्रह्मकी समीपता ॥ १३ ॥ और कुरुक्षेत्रमें स्नान कर- विष्णुकी समीपता प्राप्त होती है देवहृदमें माघस्नान करनेसे योग्य सिद्धिका फल मिलता है ॥ १४ ॥ प्रभासक्षेत्रमें माघस्नानसे रुद्रका गण होताहै देवकी में स्नानसे देवता होता है ॥ १५ ॥ हे विप्र ! गोमती में स्नान करनेसे फिर जन्म नहीं होता हेमकूट महाकाल ओंकारेश्वर अमरेश्वर ॥ १६ ॥ नीलकंठ अर्बुद में माघस्नानसे रुद्रलोक

आखंडलस्यलोकोहिकुरुक्षेत्रेतुमाघतः ॥ माघोदेवह्रदेविप्रयोगसिद्धिफलप्रदः ॥ १४ ॥ प्रभासेमकरादित्ये स्नानाद्रुद्रगणोभवेत् ॥ देवक्यांदेवतादेहोनरोभवतिमाघतः ॥ १५ ॥ माघस्नानेनभोविप्रगोमत्यांनपुनर्भवः ॥ हेमकूटेमहाकालेओंकारेअमरेश्वरे ॥ १६ ॥ नीलकंठेर्बुदेमाघाद्रुद्रलोकेमहीयते ॥ सर्वासांसरितांविप्रसंगमे मकरेरवौ ॥ १७ ॥ स्नानेनसर्वकामानामवाप्तिर्जायतेनृणाम् ॥ माघस्तुप्राप्यतेधन्यैःप्रयागेद्विजसत्तम ॥ अपुनर्भवदंतत्रसितासितजलंयतः ॥ १८ ॥ गायंतिदेवाःसततंदिविस्थामाघःप्रयागेकिलनोभविष्यति ॥ स्नानान्नारायन्ननगर्भवेदनांपश्यंतितिष्ठंतिचविष्णुसन्निधौ ॥ १९ ॥ मज्जंतियेपित्र्यहमत्रमानवास्तीर्थेप्रयागेवहुपापकंचुकाः ॥ व्रजंतितेनोनिरयेषुधर्मिणःस्वर्गेशुभेचारुचरंतिदेववत् ॥ २० ॥

प्राप्त होता है हे विप्र ! मकरके सूर्य में सब नदियोंके ॥ १७ ॥ स्नानसे मनुष्योंको सब कामनाकी प्राप्ति होती है हे द्विजश्रेष्ठ! प्रयागमें माघ स्नान बड़े भाग्योंसे प्राप्त होता है गंगा यमुनाका जल मुक्ति देता है ॥ १८ ॥ स्वर्गमें स्थित देवता इस बातको कहते हैं कि प्रयागमें माघस्नान करनेसे फिर जन्म नहीं होता वे नरकको नहीं जाते और स्वर्गमें देवताओंकी समान विचरण करते हैं ॥ १९ ॥ जो पापी मनुष्यभी माघमें तीन दिन स्नान करते हैं वे नरकको नहीं जाते और स्वर्गमें देवताकी समान

वास करते हैं ॥ २० ॥ तीर्थ व्रत दान तप यज्ञ इनको विधाताने एक ओर तुलापर धारण किया, एक ओर माघमें प्रयाग स्नान रक्खा उनमें माघस्नानही गरिष्ठ रहा ॥ २१ ॥ जल पवन सेवन पर्ण भोजनादिकरके जो तपका फल चिर कालमें संचित किया है तथा जो योगका फल है वह फल प्रयागमें माघस्नानसे मिलता है ॥ २२ ॥ जो मकरके सूर्यमें प्रयागमें स्नान करते हैं उनके घरके द्वारपर हस्तिकर्णताडित भृंगावली क्या करैंगी अर्थात् वे महा धन सम्पन्न होंगे यही सिंधु सागर संगमका फल है

तीर्थैर्व्रतैर्दानतपोभिरध्वरैःसार्धंविधात्रातुलयाधृतंपुरा ॥ माघेप्रयागस्यतयोर्द्वयोरभून्माघोगरीयानतएवसोऽधिकः ॥ २१ ॥ वातांबुपर्णाशनदेहशोषणैस्तपोभिरुग्रैश्चिरकालसंचितैः ॥ योगैश्चसंयांतिनरानतांगतिंस्नानेनमाघस्याहियांतियांगतिम् ॥२२ ॥ स्नांताश्चयेमकरभास्करोदयेतीर्थेप्रयागेसुरसिंधुसंगमे ॥ तेषांगृहद्वारमलंकरोतिकिंभृंगावलिःकुंजरकर्णताडिता ॥ २३ ॥ योराजसूयाद्धयमेधयज्ञतःस्नानात्फलंसंप्रददातिचाधिकम् ॥ पापानिसर्वाणिविलोप्यलीलयानूनंप्रयागःसकथंनसेव्यते ॥ २४ ॥ अवंतिविषयेराजावीरसेनोऽभवत्पुरा ॥ नर्मदातीरमागत्यराजसूयंचकारसः ॥२५॥ षोडशैरश्वमेधैश्चस्वर्णवाटविराजितैः ॥ स्वर्णभूषणयूपाढ्यैरीजेसोपियथाविधि॥२६॥ प्रददौधान्यराशींश्चद्विजेभ्यःपर्वतोपमान् ॥ वदान्योदेवताभक्तोगोप्रदःससुवर्णदः ॥२७॥

॥ २३ ॥ जो राजसूय अश्वमेधका फल है स्नानका फल इससे कहीं अधिक है उससे वह सब पाप दूर करनेवाले प्रयागका सेवन क्यों न किया जाय ॥ २४ ॥ पहले अवन्तिदेशका एक राजा वीरसेन था उसने नर्मदाके किनारे आकर अश्वमेध यज्ञ किया ॥ २५॥ सुवर्णके मार्गसे युक्त सोलह अश्वमेध किये जो सुवर्णके भूषणोंसे युक्त यज्ञस्तंभोंसे शोभित थे ॥ २६ ॥ ब्राह्मणोंके

१ स्नानात्प्रयागस्यहि यानियांगतिमितिपाठः । २ स्नातानराये मकरभास्करोदये इति च पाठः ।

निमित्त ...तसे रत्न धान्यदिये बडादानी देवताका भक्त गौ और सुवर्णका देनेवाला था ॥ २७ ॥ एक ब्राह्मण भद्रकनाम मूर्ख और कुलरहित खेती करनेवाला दुराचारी सब धर्मोंसे बहिष्कृत ॥ २८ ॥ कृषि कर्ममें समुद्विग्न बंधुओंसे असेवित इधर उधर घूमता क्षुधासे पीडितहो निर्गत हुआ ॥ २९ ॥ यात्रियोंके साथ प्रयागमें चलाआया महामाघकी संक्रान्ति होने पर तीन दिन वहां स्नान किया ॥ ३० ॥ स्नान मात्रसे वह ब्राह्मण पाप रहित होकर प्रयागसे फिर अपने स्थानको प्राप्त हुआ ॥ ३१ ॥

ब्राह्मणोभद्रकोनाममूर्खोहीनकुलस्तथा ॥ कृषीवलोदुराचारःसर्वधर्मबहिष्कृतः ॥२८॥ कृषिकर्मसमुद्विग्नोबंधुभिश्चाप्यसंस्कृतः ॥ इतस्ततःपरिभ्रम्यानिर्गतःक्षुत्प्रपीडितः ॥२९॥ दैवतःसार्थमाविश्यप्रयागंससमागतः॥ महामाघींपुरस्कृत्यसस्नौतत्रदिनत्रयम् ॥ ३० ॥ अनघःस्नानमात्रेणभूत्वेहसद्विजोत्तमः॥ प्रयागाचलितस्तत्रपुनर्यस्मात्समागतः ॥ ३१ ॥ सराजासोपिविप्रश्चाविपन्नावेकदातदा ॥ तयोर्गतिःसमादृष्टामयाशक्रस्यसन्निधौ ॥ ३२ ॥ तेजोरूपंबलंस्त्रैणंदेवयानंविभूषणम् ॥ पारिजातमयीमालानृत्यंगीतंतयोःसमम् ॥ ३३ ॥ इतिदृष्टंहिमाहात्म्यंक्षेत्रस्यकथमुच्यते ॥ माघःसितासितेविप्रराजसूयैःसमोमतः ॥ ३४ ॥ धनुस्त्रिशतविस्तीर्णेसितनीलांबुसंगमे ॥ अपुनरावृत्तिर्माघीराजसूयीपुनर्भवेत् ॥ ३५ ॥

वह राजा और ब्राह्मण एकही दिन मृतक हुए मैंने इन्द्रके समीप उन दोनोंकी बराबर गति देखी ॥ ३२॥ तेज रूप बल स्त्री देवयान भूषण पारिजातकी माला नृत्य गीत समानथे ॥ ३३ ॥ उस क्षेत्रका माहात्म्य क्या कहा जाय हे विप्र ! माघमासमें प्रयाग स्नान राजसूयकी समानहै ॥ ३४ ॥ गंगा यमुनाके संगममें तीन सौ धनुषतक माघमें स्नान करनेसे मुक्ति हो जाती है इसमें

मन्देह नहीं और राजसूय करके तो फिरभी संसारमें आता है ॥ ३५ ॥ जो माघमासकी पवन भी गंगा यमुनाको स्पर्श करै उसके लगनेसे अधर्म स्पर्श नहीं करता यह महापातककी हरनेवाली है ॥३६॥ बहुत कहनेसे क्या है हे द्विजो ! यह निश्चय सुनिये कहींके तीर्थका उत्पन्न हुआ पाप माघस्नानसे दूर हो जाता है ॥ ३७ ॥ सावधान होकर सुनो इस स्थलमें पिशाचमोचन नाम एक इतिहास तुमसे कहताहूं ॥ ३८ ॥ यह बालक गंधर्वी और तुम्हारा पुत्र भी सुने, मेरे प्रसादसे स्मृतिको प्राप्त हो

माघमासीयवातोपिसितासितजलेस्पृशेत् ॥ अधर्म्यंनस्पृशेन्नूनंमहापातकहाहिसः ॥ ३६ ॥ किमत्रबहुनोक्तेनश्रूयतांद्विजनिश्चितम् ॥ समुद्भूतफलंपापंतीर्थेमाघःप्रणाशयेत् ॥ ३७ ॥ अत्रतेकथयिष्यामिसावधानमतिःशृणु ॥ पिशाचमोचनंनामइतिहासंपुरातनम् ॥ ३८ ॥ शृण्वंत्वप्सरसोबालाःशृणोतुत्वत्सुतस्तथा ॥ मत्प्रसादात्स्मृतिर्लब्ध्वापैशाच्यान्मुक्तिकामिनः ॥ ३९ ॥ पुरादेवद्युतिर्विप्रोवैष्णवोवेदपारगः ॥ पिशाचान्मोचयामासकरुणाप्लुतमानसः ॥ ४० ॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेसप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ ॥ दिलीपउवाच ॥ ॥ कुत्रस्थितःकस्यपुत्रोनियमःकोऽस्यवाजपः ॥ केनवावैष्णवोवृत्तःकेपिशाचाश्चमोचिताः ॥ १ ॥

यह कामी मुक्त होजायँगे ॥ ३९ ॥ पहले एक देवद्युतिनाम वेदपारगामी वैष्णव ब्राह्मण करुणापरवश हो पिशाचको मुक्त कर चुकाहै ॥ ४० ॥ इति श्रीपाद्मे माघमाहात्म्ये पण्डित ज्वालाप्रसाद मिश्रकृत भाषाटीकायां सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ दिलीप बोले यह कहांके निवासी किसके पुत्र थे उनका नियम क्या था जप कैसा था कैसी वैष्णवी वृत्ति थी कौन पिशाच को

कहिये हम आपके प्रसादसे सुनते हैं इस ... था ... आश्रम था ॥
मुक्त किया ॥ १ ॥ हे महामुने ! यह सब विस्तारसे कहिये हम आपके ... ब्राह्मणका पवित्र सुन्दर आश्रम था ॥
॥ २ ॥ वसिष्ठ बोले प्लक्षके पवित्र स्रोत सरस्वतीके सुन्दर तटमें पर्वतको आश्रय किये ... ॥ ४ ॥ करंज कोविदार केसर कुंजर अशन
॥ ३ ॥ शाल ताल तमाल बेल बकुल पाटल इमली चिरवेल आम चंपक कांचन ... वेत शाखोट आडू करहाट वटके
तिलक कर्णिकार कुंभ खैर तेंदू ॥ ५ ॥ वानीर साल्व जंभीरी पीलू गूलर

॥ वसिष्ठउवाच ॥

एतद्विस्तरतःसर्वंकीर्तयस्वमहामुने ॥ कौतूहलंमहापुण्यंशृणुमस्त्वत्प्रसादतः ॥ २ ॥ ॥
प्लक्षप्रस्रवणेपुण्येसरस्वत्यास्तटेशुभे ॥ तत्राश्रमपदंतस्यशैलमाश्रित्यशोभनम् ॥ ३ ॥ शालैस्तालैस्तमालैश्च
बिल्वैर्बकुलपाटलैः ॥ तिंतिडीचिरिबिल्वैश्चचूतचंपककांचनैः ॥ ४ ॥ करंजैःकोविदारैश्चकेसरैःकुंजराशनैः ॥
तिलकैःकर्णिकारैश्चकुंभैःखादिरतिंदुकैः ॥५॥ वानीरैःसाल्वजंबीरैःपीलूदुंबरवेतसैः ॥ शाखोटैरटरूपैश्चकरहा
टैर्वटद्रुमैः ॥ ६ ॥ घोंटाकुटजपालाशैरशोकैःशोकहारिभिः ॥ जंबूनिंबकदंबैश्चक्षीरिकाकरमर्दकैः ॥ ७ ॥
वीजपूरैःसनारिंगैरंभाराजिविराजितैः ॥ पनसैरसवद्भिश्चनारिकेलैःसदाफलैः ॥ ८ ॥ सतच्छदैस्त्रिपत्रैश्चशिरी
पामलकैःशुभैः ॥ कर्कंधूलकुचैरक्षैःपारिभद्रैर्वचादिभिः ॥ ९ ॥ केतकैःसिंदुवारैश्चतगरैःकुन्दमल्लिकैः ॥ पद्मे
न्दीवरकल्हारमालतीयूथिकादिभिः ॥ १० ॥

पेड़ ॥ ६ ॥ घोंटा कुटज ढाक शोक हरनेवाले अशोक जामुन नीम कदम्ब क्षीरिका करमर्दक ॥ ७ ॥ बिजोरा
नारंगी केलोंके समूहसे विराजमान रसवाले पनस कटहल तथा नारियलों से व्याप्त ॥ ८ ॥ सतच्छद, त्रिपत्र, शिरस, आमले,
कर्कन्धु, लकुच, अखरोट, पारिभद्र, वचादि से युक्त ॥ ९ ॥ केतकी, सिन्धुवार, तगर, कुन्दमल्ली, कमल, नीलकमल, कल्हार,

मालती, चमेली ॥ १० ॥ मालती, मोगरी, जायफलोंसे विराजित नागकेशर, टेसू, बर्बरी, तुलसी ॥ ११॥ हे राजन् ! अनेक प्रकारके वृक्षोंसे वह आश्रम मनोहर होरहा था वनके बीचमें पुण्यजला सरस्वती वहन करती थी ॥ १२ ॥ मदसे स्निग्ध सारस यहां गुंजार करतेथे कोकिला शब्द करतीं और भँरे गुंजारतेथे ॥१३॥ हे राजन् ! तोते मैनाओंसे वह वन बडा कोलाहल कररहा था उस उत्तम वनमें अनेक वनके जीव सिंहादि विचरतेथे ॥ १४ ॥ सदा फल फूलों से व्याप्त पराग से धूसर सब ओर

मालतीमोगरैश्चैवजातीफलविराजितैः ॥ पुन्नागैःकिंशुकैश्चैववर्बरीतुलसीद्रुमैः ॥ ११ ॥ आश्रमोरमणीयः सद्रुमैर्नानाविधैर्नृप ॥ वनमध्येनदीयातिपुण्यतोयासरस्वती ॥ १२ ॥ कूजंतिसारसास्तत्रमदस्निग्धकलं सदा ॥ नदंतिकोकिलाःशब्दंगुंजंतिचमधुव्रताः ॥ १३ ॥ बहुकोलाहलंभूपतद्वनंशुकसारिभिः ॥ चरंतिश्वाप दास्तत्रविविधाःकाननोत्तमे ॥ १४ ॥ सदाफलंसदापुष्पंपरागकणधूसरम् ॥ आच्छन्नंकाननंसर्वंमधुवृक्षैः समंततः ॥ १५ ॥ नवपल्लवसंजातमंजरीभरवल्लिभिः ॥ आश्लिष्टमभितोरम्यंप्रियाभिरिववल्लभः ॥ १६ ॥ तस्यशापभयात्त्रस्तोवातोवातिसमंततः ॥ नवर्षंत्यश्मभिर्मेघानशोपयातिभास्करः ॥ १७ ॥ वनंनोपद्रवंत द्धिसदासिद्धनिषेवितम् ॥ आह्लादजनकंनित्यंवनंचैत्ररथंयथा ॥ १८ ॥

मधु वृक्षोंसे वह वन व्याप्त था ॥१५॥ नये पत्ते और मंजरीसे वेलें भरी हुईं चारोंओर वृक्षोंसे लिपटी ऐसी शोभित होतीं थीं जैसे प्रियासे वल्लभ शोभित होताहै ॥ १६ ॥ उसके शापके भयसे पवन मंद मंद चलती थी न मेघोंसे कभी ओले पडते न सूर्य विशेष जल शोषता था ॥ १७ ॥ उपद्रव रहित वह वन सदा सिद्धोंसे सेवित था चैत्ररथ वनकी समान सदा आनंददायक था ॥१८॥

१ त्रस्ता गंगावाताः मवांति नेतिपाठः ।

निवास करता था यह सुमित्र ब्राह्मणका पुत्र भगवानसे वरपाया था ॥

उसमें धर्मात्मा देवताओंकी समान कान्तमान् ब्राह्मण नेत्रकरे पंचाग्नि तापता था ॥ २० ॥ मेघोंके

॥ १९ ॥ उसके नियम सुनो कि, वह सदा नियममें तत्पर ग्रीष्ममें सूर्यकी ओर नेत्रकरे पंचाग्नि तापता था ॥ २१ ॥ हे विप्र ! हेमन्त (अगहन

वर्षतेमें मैदानमें बैठकर तपकरता था पवन चलनेपर हिमवानकी समान निष्कंप रहता था ॥ २१ ॥ हे विप्र ! हेमन्त (अगहन

पौष) में सारस्वत ह्रदमें बैठकर तपकरता और तीनि वार निर्मल जल स्पर्श कर संध्या करता ॥ २२ ॥ श्रद्धासे देवता पितरोंका

तस्मिन्वसतिधर्म्मात्मादेवद्युतिर्द्विजोत्तमः ॥ पुत्रःसुमित्रोविप्रस्यलब्धोलक्ष्मीपतेर्वरात् ॥ १९ ॥ नियमः

श्रूयतां तस्य सर्वदानियतात्मनः ॥ ग्रीष्मेपंचतपानित्यंसूर्यन्यस्तविलोचनः ॥२०॥ वर्षत्कादंविनीयावद्वर्षा

स्वभ्रावकाशगः ॥ वातेप्रवाते निष्कंपोदुःसहोहिमवानिव ॥ २१ ॥ वसत्यप्सुसहेमंतेह्रदेसारस्वतेद्विज ॥

उपस्पृशतिकालेसत्रिवारंवारिनिर्मलम् ॥ २२ ॥ पितॄन्देवानृषीन्नित्यंसंतर्पयतिश्रद्धया ॥ ब्रह्मयज्ञपरोनित्यं

सत्यवादीजितेंद्रियः ॥ २३ ॥ भूमौविश्रम्याविश्रांतःप्रदध्यौप्रार्थयन्हरिम् ॥ वन्यैर्जुहोत्यग्निहोत्रंश्रद्धयाति

थिपूजकः ॥ २४ ॥ चांद्रायणविधानेनकालंनयतिसर्वदा ॥ स्वयंविगलितैःपत्रैःफलैर्वृत्तिंसमीहते ॥ २५ ॥

अनुद्विग्नस्तपोनिष्ठोवेदवेदांगपारगः ॥ धमनीविकरालोसावस्थिमात्रकलेवरः ॥ २६ ॥

नित्य तर्पण करता नित्य ब्रह्मयज्ञ करता सत्यवादी जितेन्द्रिय रहता था ॥२३॥ भूमिमें शयन कर भगवान्का ध्यान और प्रार्थना

करता अग्निहोत्र कर श्रद्धासे अतिथि सत्कार करता ॥ २४ ॥ सदा चान्द्रायणके विधानसे समयको व्यतीत करता था और

आप स्वयं गिरेहुये पत्रोंसे अपनी आजीविका करता था ॥२५॥ उद्वेग रहित हो तप करता वेदवेदाङ्गका पारगामी नाडी दीख

रहीं अस्थि मात्र जिसका शरीरस्थित था ॥२६ ॥ इस प्रकार वनमें उसको सहस्र वर्ष बीत गये तब उसके तेजसे वह पर्वत प्रज्व लित हो उठा ॥२७॥ उस माहात्माके तेजको कोई प्राणी न सहसका वह ब्राह्मण तपसे अग्निकी समान दीखते थे ॥ २८ ॥ उस वनमें वैर रहित हो सब प्राणी विहार करते थे मृग व्याघ्र मूषक मार्जार निर्भय हो परस्पर वैर त्याग विचरते थे ॥ २९ ॥ और भी उसका अति दुर्लभ नियम सुनो तीनों कालमें नारायणका वह पूजन करता था ॥ ३० ॥ और सहस्र पुष्प खिले हुए सुगंधिके

इत्थंजगामवर्पाणांसहस्रंतस्यकानने ॥ तदाजज्वालशैलोऽसौतपसस्तस्यतेजसा ॥ २७ ॥ सोढुंनशक्यतेभूतै
स्तेजस्तस्यमहात्मनः ॥ वैश्वानरइवाभातिप्रज्वलंस्तपसाद्विज ॥ २८ ॥ गतवैराणिभूतानिसमजायंततद्वने ॥
मृगव्याघ्राखुमार्जारामिथःक्रीडंतिनिर्भयाः ॥ २९ ॥ अन्योपिनियमस्तस्यश्रूयतामतिदुर्लभः ॥ नारायणं
त्रिकालंससंपूजयातिनित्यशः ॥ ३० ॥ पुष्पाणांतुसहस्रेणविकचेनसुगंधिना ॥ वेदसूक्तविधानेनविष्णुध्या
नपरायणः ॥३१॥ विष्णोःसंप्रीतयेविप्रःकुरुतेकर्मचाखिलम् ॥ दधीचेर्वरदानात्ससंजातोवरवैष्णवः ॥३२॥
एकदामासिवैशाखेएकादश्यांमहामुनिः ॥ पूजांकृत्वाहरेरम्यांविचित्रामकरोत्स्तुतिम् ॥ ३३ ॥ तदैवखगमा
रुह्यदेवदेवोहरिःस्वयम् ॥ आजगामपुरस्तस्यतयास्तुत्यातिहर्पितः ॥ ३४ ॥

चढाताथा वेद सूक्तके विधानसे विष्णुका ध्यान करताथा ॥ ३१ ॥ हे ब्राह्मणो ! विष्णुकी प्रीतिके निमित्त ही वह सब कर्म करताथा दधीचिके वरदानसे वह उत्तम वैष्णव हुए ॥ ३२ ॥ एक समय वैशाखमास एकादशीके दिन वह महामुनि भगवानकी पूजा कर विचित्र स्तुति करनेलगा ॥ ३३ ॥ उसी समय देवदेव भगवान् गरुडके ऊपर चढकर उसकी स्तुतिसे प्रसन्न हो उसके

भगवान्‌को गरुडपर चार भूमिमें प्रणाम किया ॥ ३६ ॥
समीप आये ॥ ३४ ॥ उन श्याममेघ की छविवाले भगवान्‌को गरुडपर चार भुजा और कृतकृत्य हो भूमिमें प्रणाम किया ॥ ३६ ॥ तब
॥ ३५ ॥ ब्राह्मण पुलकायमान होगया आनंदका जल नेत्रोंमें भरि आया और कृतकृत्य हो भूमिमें प्रणाम किया ब्रह्मरूपही होगया ॥ ३७ ॥ तब
और हर्षताके कारण ब्रह्माण्डके उदरवालेको न जानसका उसने अपने देहको स्मरण न किया ब्रह्मरूपही होगया ॥ ३७ ॥

तंदृष्ट्वागरुडारूढंप्रत्यक्षंजलदच्छविम् ॥ चतुर्बाहुंविशालाक्षंसर्वालंकारभूपितम्[1] ॥ ३५ ॥ उद्भूतपुलकोविप्रः
सानंदजललोचनः ॥ जगामशिरसाभूमौकृतकृत्यमनास्तदा ॥ ३६ ॥ नममौतेनहर्पेणसब्रह्मांडोदरेपिहि ॥
नसस्मारनिजंदेहंब्रह्मभूतइवाभवत् ॥ ३७ ॥ ततःसंभाषितःप्रीत्याहरिणावैष्णवोमुनिः ॥ देवद्युतेविजाना
मिमद्भक्तस्त्वंमदाश्रयः ॥ ३८ ॥ संन्यस्ताखिलकर्मासिमद्भावोमन्मनाःसदा ॥ वरंब्रूहिप्रसन्नोस्मिस्तोत्रेणाने
नचानघ ॥ ३९ ॥ इतिश्रुत्वाहरेर्वाक्यंप्रत्युवाचसतापसः ॥ देवदेवारविंदाक्षस्वमायाधृतविग्रह ॥ ४० ॥
त्वद्दर्शनात्सदादेवदुर्लभोनापरोवरः ॥ ब्रह्मादयःसुराःसर्वेयोगिनःसनकादयः ॥ ४१ ॥

भगवान् प्रसन्न हो वैष्णव मुनिसे बोले हे देवद्युति ! मैं जानताहूं तुम मेरे भक्त और मेरे आश्रय हो ॥ ३८ ॥ सब कर्मोंका फल
त्यागे सदा मुझमें मन लगाये हो इस स्तोत्रसे मैं प्रसन्न हूं हे पापरहित ! वर मांगो ॥ ३९ ॥ यह भगवान्‌के वचन सुन वह तप
स्वी बोला हे देवदेव कमललोचन ! अपनी मायासे शरीर धारण करनेवाले ॥ ४० ॥ आपका दर्शन सदा दुर्लभ है सो प्राप्त

---

१ रत्नालंकारमंडितमित्यन्यत्र पा० ।

हुआ अब इससे अधिक और वर न चाहिये ब्रह्मादि सब देवता सनकादि योगी ॥ ४१ ॥ और कपिलादि सिद्ध आपसे साक्षात करनेकी इच्छा करते हैं अहंकार ममत्वके जो लोभ मोह शुभ अशुभ पाश हैं ॥ ४२ ॥ जो कारण जन्मके हैं वह आप परावर के दर्शनसे दग्ध होजाते हैं मेरे जन्म कर्म और बुद्धिका फल प्राप्त हुआ ॥ ४३ ॥ हे जगत्पति!जो आपका दर्शन हुआ अब इससे अधिक क्या मांगू हे देवेश ! हृदयमें आपके चरण कमल वरके निमित्त नहीं है ॥ ४४ ॥ सदा भक्तिसे आपमें मन लगाये मैं

त्वांसाक्षात्कर्तुमिच्छंतिसिद्धाश्चकपिलादयः ॥ अहंममेतिपाशायेमोहलोभाःशुभाशुभाः ॥ ४२ ॥ सहे तुकाश्चदह्यंतेदृष्टेत्वयिपरावरे ॥ जन्मनःकर्मणोबुद्धेराविर्भूतंफलंमम ॥ ४३ ॥ यद्दृष्टोसिजगन्नाथप्रार्थये किमतःपरम् ॥ नवरार्थंहिदेवेशत्वत्पादपंकजंहृदि ॥ ४४ ॥चिंतयामिसदाभक्त्यात्वद्गतेनांतरात्मना ॥ इममे ववरंयाचेत्वद्भक्तिरचलाममा ॥ ४५ ॥ अस्तुवैकमलानाथप्रार्थयेनापरंवरम् ॥ इति श्रुत्वावचस्तस्यप्रसन्नवदनो हरिः ॥ ४६ ॥ प्रत्युवाचप्रसन्नात्माएवमस्तुद्विजोत्तम ॥ अन्यस्तेतपसःकश्चित्प्रत्यूहोनभविष्यति ॥ ४७ ॥ एतच्चत्वत्कृतंस्तोत्रंयेपठिष्यंतिमानवाः ॥ तेषांमद्विषयाभक्तिर्निश्चलाचभविष्यति ॥ ४८ ॥ धर्मकार्यंचयत्किं चित्सांगंसर्वंभविष्यति ॥ ज्ञानेचपरमानिष्ठातेषांस्थास्यतिनिश्चला ॥ ४९ ॥

तुम्हारा चिंतन करताहूं यही मैं वर मांगताहूं कि, आपकी अचल भक्ति मुझमें निवास करै ॥ ४५ ॥ हे कमलानाथ ! यही हो और वरकी इच्छा नहीं करताहूं यह ब्राह्मणके वचन सुन भगवान् प्रसन्न होकर ॥ ४६ ॥ प्रसन्नतासे ऐसाही होगा तेरे तपमें कोई भी विघ्न न होगा ॥ ४७ ॥ और इस तुम्हारे किये स्तोत्रको जो मनुष्य पढेंगे उनकी मेरेमें निश्चल भक्ति होगी ॥ ४८ ॥ जो कुछ

१ देहस्य मोहमूलाः शुभाशुभा इतिपाठः ।

... निष्ठा होगी ॥ ४९ ॥ ऐसा कह ...
धर्म कार्य है वह सांग और सम्पूर्ण होगा और उनका निश्चल ... निष्ठा होगी ॥ ४९ ॥ ... ॥ इति श्रीमाघमाहात्म्ये पण्डितज्वालाप्रसादमिश्रकृतभाषाटीकायां
होगये देवद्युति उसी समयसे नारायणके ध्यानमें मग्न हुए ॥ ५० ॥ ॥ दिलीप बोले हे महर्षे ! पवित्र कथा सुनाकर मुझे कृतकृत्य करदिया इन विष्णु
देवद्युतिवरप्रदानं नामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ आप कहिये वह कौनसा स्तोत्र है जिससे भगवान् प्रसन्न होते
भगवान्की संगतिसे आज मैं गंगाकी समान पावन हुआ ॥ १ ॥

इत्युक्तांतर्हितस्तत्रदेवदेवोजनार्दनः ॥ देवद्युतिस्तदारभ्यनारायणपरोऽभवत् ॥ ५० ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमा
घमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेदेवद्युतिवरप्रदानंनामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ ॥ दिलीपउवाच ॥ महर्षेऽ
नुगृहीतोस्मिकथयापावनीकृतः ॥ अनयाविष्णुसंगत्यागंगयेवाहमद्यवै ॥ १ ॥ किंतस्स्तोत्रंसमाख्याहिप्रसन्नो
येनमाधवः ॥ तस्यानघस्यविप्रस्यमहत्कौतूहलंमम ॥ २ ॥ त्वत्प्रसादादहंविप्रमन्येप्राप्तंमनोरथम् ॥ महतां
संगतिःकस्यमहत्त्वायनकल्पते ॥ ३ ॥ कथयस्वप्रसादेनविष्णोःस्तोत्रमनुत्तमम् ॥ येनतुष्टः सभगवान्ददौ
तस्यचदर्शनम् ॥ ४ ॥ ॥ वसिष्ठउवाच ॥ ॥ कथयामिरहस्यंतेयज्जप्तंस्तोत्रमुत्तमम् ॥ प्राग्गृहीतंसुपर्णे
नगरुडान्मयिचागतम् ॥ ५ ॥

हैं उस पवित्र ब्राह्मणके चरित्रोंमें मुझे बडी लालसा है ॥ २ ॥ हे विप्र ! आपके प्रसादसे मैं अपने पूर्ण मनोरथ मानू हूं महात्मा
ओंकी संगतिसे कौन बडा नहीं होता है ॥ ३ ॥ कृपाकर उत्तम विष्णुका स्तोत्र कहिये जिससे प्रसन्न हो भगवान्ने उसे दर्शन दिया ॥ ४ ॥
वासिष्ठजी बोले मैं तुमसे यह गुप्त कथा कहताहूं जो उत्तम स्तोत्र जपनेके योग्य है पहले इसको गरुडजीने ग्रहण किया था उनसे

मेरे पास आयाहै ॥ ५ ॥ यह अध्यात्मगर्भका सार और महाउदयका करनेवाला है हे राजन् ! सब पापका हरनेवाला और आत्मज्ञानका अधिक करनेवाला है ॥ ६ ॥ ओं नमो वासुदेवाय जगत्के स्वरूप सबमें व्याप्त विश्वरूप चक्रधारी भक्तोंके प्रिय कृष्ण जगत्पति शार्ङ्गधारीके निमित्त नमस्कार है ॥७॥ स्तुति करनेवाले स्तुतिके योग्य और स्तुति यह सब जगत् जब कि, विष्णु रूप है तब किससे स्तुति की जाय भक्ति मनुष्योंको आनंदकी करनेवाली है ॥८॥ जिस देवके श्वाससे सांग सूत्र सहित वेद हुए हैं

अध्यात्मगर्भसारंतन्महोदयकरंशुभम् ॥ सर्वपापहरंभूपस्वात्मज्ञानकरंपरम् ॥ ६ ॥ ओंनमोवासुदेवायनमोविश्वायचक्रिणे ॥ भक्तप्रियायकृष्णायजगन्नाथायशार्ङ्गिणे ॥ ७ ॥ स्तोतास्तुत्यःस्तुतिःसर्वंजगद्विष्णुमयंयदा॥तदासंस्तूयतेकेनभक्तिर्मोदकरीनृणाम् ॥ ८ ॥ यस्यदेवस्यनिःश्वासोवेदाःसांगाःससूत्रकाः ॥ कास्तुतिःप्रमुदेतस्यभक्त्याऽहंमुखरोऽभवम् ॥९॥ चक्रवद्भ्रमतेसर्वंत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥अतस्त्वंगीयसेदेवचक्रपाणिवरायुध ॥ १० ॥ वेदोनवक्तियंसाक्षान्नचवाग्वेत्तिनोमनः ॥ मद्विधस्तंकथंस्तौतिभक्तिमान्वाकथंभवेत् ॥ ११ ॥ ब्रह्मादिब्रह्माविष्णुस्त्वंत्वमेवसकलाश्रयः ॥ स्रष्टाब्रह्मनिदानंचशुद्धंब्रह्मत्वमेवच ॥ १२ ॥ कोयंकायस्तवाविभोभित्त्वास्पृशतिकायिनम् ॥ कायदोषैर्नचाघ्रातस्तस्मैनमोस्तुयोगिने ॥ १३ ॥

उसको कौनसी स्तुति प्रसन्न करेगी केवल भक्तिसे मैं वाचालता करता हूं ॥९॥ जिसकी महिमासे त्रिलोकी चक्रकी समान भ्रमण करती है इस कारण हे देव ! हे चक्रपाणि ! आपही जगत्में गाये जाते हो ॥१०॥ जिसको साक्षात् वेद नहीं कह सकता जिसको न वाणी और न मन जानता है मुझ सरीका उनकी स्तुति कैसे करसके और किस प्रकार भक्तिमान् हो सकता है ॥ ११॥ ब्रह्माकी आदि वा ब्रह्मा विष्णुरूप तुम हो तुमही सबके आश्रय सबके स्रष्टा ब्रह्माके भी आदिकारण शुद्धब्रह्म आपही हो ॥१२॥ हे व्यापक !

है जो सुख संदोहकी बुद्धि है हे विष्णो !
आप देवभावसे सदा जागते हैं आत्मस्वरूपसे कभी निद्रा नहीं लेतेहो जो सुख संदोहकी बुद्धि है हे विष्णो ! वह सब कुछ आपही हो यह
नमस्कार है ॥ १३ ॥ महत्व आदि महाभाव और पंचभूतोंके गुण हे नाथ ! पुत्रोंको पिता जैसे आपही सबकी कल्पना
वह आपमें है इसमें संदेह नहीं ॥ १४ ॥ केश और केशव रूप तीन कल्पनाओंसे हे भगवन् ! ॥ १४ ॥ महदादयोमहा
नानात्व मूढ कल्पना है ॥१५॥ सुखसंदोहबुद्धिर्यासात्वंविष्णोनसंशयः ॥ केशकेशवरूपाभिःकल्पनातिसृ
देवभावेनजागर्तिननिद्रातिनिजात्मनि ॥ त्वमेवनाथतत्सर्वंनानात्वंमूढकल्पना ॥ १५॥ चिन्मूर्तिरखिलंजगत् ॥ कवी
भावास्तथावैकारिकागुणाः ॥ त्वमेवकल्पसेब्रह्मापुमानिवसुतादिभिः ॥ १६ ॥ विदोपंविगुणंचैकं निरीपणाजग
भिस्तथा ॥ त्वमेवकल्पसेब्रह्मापुमानिवसुतादिभिः ॥ १६ ॥ यस्यज्ञानेनकुर्वंतिकर्माणिश्रुतिभाषितम् ॥ योगिनःसर्वभूतेषुसद्रूपंनौमितं
नांभातियत्तत्त्वंतंविष्णुंनौमिनिर्मलम् ॥ १७॥ ध्वस्तेतरच्चसन्मात्रंयत्प्रबोधादुपासते ॥ पश्यंतोहित्वयातुल्यंदेवंतंनौमिमाधवम् ॥ २० ॥
न्मित्राःशुद्धंब्रह्मनमामितत् ॥ १८ ॥ ब्रह्माहमितिगायंतियज्ज्ञात्वैकंवराद्विजाः ॥ जिसका तत्व कवियोंको प्रकाशित होता
हरिम् ॥ १९ ॥ आपकी चिन्मूर्तिने सब जगत्को विदोप और गुण रहित कर रक्खा है; उस इच्छारहित जगत्के मित्र शुद्ध
करतेहो ॥१६॥ जिसके ज्ञानसे श्रुति भाषित कर्म किये जाते हैं योगी सब भूतोंमें जिसको जानते
है उस निर्मलतत्वको प्रणाम करताहूं ॥१७॥ आकाशमें व्याप्त सन्मात्र जिसके प्रबोधसे उपासना होती है आपकी समान अपनेको
ब्रह्मको प्रणाम करते हैं ॥ १८ ॥ जिसको एक जान कर ब्राह्मणमें ब्रह्महूं ऐसा गान करते हैं
हैं उस सद्रूप हरिको प्रणाम करताहूं ॥१९॥

१ महदादिद्विधाभावाः–इ०पा० । २ निरीक्षणे जगन्मित्रमिति पाठः । ३ सं (खं) खेचरंतमिति पा० ।

मानते हैं उन माधवको मैं प्रणाम करताहूं ॥२०॥ माया मोहकी विचित्रता और ममता तथा मनुष्योंके जो पाप नाश करता है उस चिदात्माके निमित्त नमस्कार है ॥२१॥ प्रयाण वा अप्रयाणमें जिसका नाम स्मरण मनुष्योंके पाप शीघ्र नाश करदेता है उस चिदात्माके निमित्त नमस्कार है ॥ २२ ॥ मोहकी पवनसे तृष्णाकी ज्वाला सदा प्रचण्ड रहती है और जिसके चरण कमलकी छायाको प्राप्त होकर फिर नहीं जलाती उसको नमस्कार है ॥ २३ ॥ जिसके स्मरणमात्रसे मोह और दुर्गति नहीं होती रोग

माययामोहवैचित्र्यंतथाहंममतांनृणाम् ॥ योनाशयातिपापौघान्नमस्तस्मैचिदात्मने ॥ २१ ॥ प्रयाणेवाप्रयाणे चयन्नामस्मरतांनृणाम् ॥ सद्योनश्यंतिपापौघानमस्तस्मैचिदात्मने ॥ २२ ॥ महानललसज्ज्वालाज्वलल्लोकेपुसर्वदा ॥ यत्पादांभोरुहच्छायांप्रविष्टश्चनदह्यते ॥२३॥ यस्यस्मरणमात्रेणनमोहोनैवदुर्गतिः ॥ नरोगानैवदुःखानितमनंतंनमाम्यहम् ॥ २४ ॥ कामयंतेप्रजानैवधिपणाभ्यःसमुत्थिताः ॥ लोकमात्मैवपश्यंतियंवुद्धेकचराजनाः ॥ २५ ॥ शब्दार्थःसंविदर्थश्चविष्णोर्नामपरोयदि ॥ सत्येनतेनसंसारोमासंस्पृशतुमाधव ॥२६॥ नारायणोजगद्व्यापीयदिवेदादिसंमतः ॥ सत्येनतेननिर्विघ्नाविष्णुभक्तिर्ममास्तुवै ॥ २७ ॥

दुःख नहीं होते उनको मैं नमस्कार करताहूं ॥ २४ ॥ जिसको पाय प्रजा किसी इच्छाकी कामना नहीं करती जिसको जानकर यह प्राणी केवल आत्माहीकी इच्छा करते हैं ॥ २५ ॥ शब्दार्थ और ज्ञान यदि विष्णुके नाममें तत्पर हो तो सत्यही उसको संसार स्पर्श नहीं करसकता ॥ २६ ॥ जगद्व्यापी नारायण यदि वेदादि शास्त्रके सम्मत हैं तो इस सत्यसे निर्विघ्न विष्णु भक्ति मुझे प्राप्तहो ॥ २७ ॥

जो बिना बीजके बीज नहीं बीजमें जो बीजसे भावितहै वह भगवान् विष्णु मेरे संसारका बीज विद्यारूपी खड्गसे छेदनकरै ॥ २८ ॥ जो नटकी समान तीन शरीर धारण कर सृष्टि पालन और लय करता है जो गुणोंसे कार्योंमें होते हैं वह भगवान् मुझसे प्रसन्न हों ॥ २९ ॥ जो केवल धर्मकी रक्षा करनेके निमित्त दश रूपसे अवतार धारण करते हैं, जो देवताओंसे प्रार्थित हो उनके कार्य सिद्ध करते हैं, वे भगवान् मेरे ऊपर प्रसन्न हों ॥ ३० ॥ ब्रह्मासे लेकर स्तम्ब पर्यन्त प्राणियोंके निर्मल हृदयमें जो देव एकही निवास

योनबीजंविनाबीजंबीजेयोबीजभावितः ॥ सविष्णुर्भवबीजंमेशितविद्यासिनाद्यतु ॥२८॥ त्रितनुर्नटवद्यस्तुसृ-
ष्टिस्थितिलयेषुच ॥ गुणैर्भवतिकार्येषुसप्रसीदतुमेहरिः ॥ २९ ॥ दशधेहावतीर्णोयोधर्मत्राणायकेवलम् ॥
अभ्यर्थितःसुरैःसर्वैःसप्रसीदतुमेहरिः ॥ ३० ॥ ब्रह्मादिस्तंबपर्यंतप्राणिहृन्मंदिरेऽमलः ॥ एकोवसतियोदेवः
सप्रसीदतुमेहरिः ॥३१॥ इच्छांचक्रेसदेवाग्रेएकश्चैवबहुस्तथा ॥ प्रविष्टोदेवताःसृष्ट्वासप्रसीदतुमेहरिः ॥ ३२ ॥
हृत्खगःखसमःखादिर्खातीतःखक्रियःखगः ॥ खंब्रह्मखादिभुक्चांतिखमूर्तिस्त्वंमखाशनः ॥ ३३ ॥ यद्भासा
यन्मुदायस्यमाययासज्जतेजगत् ॥ जाड्यंदुःखमसत्यंचसभवानेवतन्मयः ॥ ३४ ॥

करते हैं, वे मेरे ऊपर प्रसन्न हों ॥ ३१ ॥ आगे उसी देवने इच्छा की थी कि मैं एक बहुत रूप होजाऊं देवताओंको निर्माणकर उसमें प्रविष्ट होगये सो मेरे ऊपर प्रसन्नहों ॥ ३२ ॥ हृदयमें विहारी आकाशकी समान आकाशकीसी आदि आकाशसे परे आकाशमें क्रियावाले आकाशचारी खंब्रह्म आकाशकी समान व्याप्त आकाशका विषय भोगी आकाश मूर्ति यज्ञ भोगी ॥ ३३ ॥ जिनकी कान्ति जगतमें भासमान है, जिनकी मायासे जगत मोहित है, और जड़ता और असत्यता दुःखदेती है, वही भगवान्

१ द्यो अवखण्डने लोट् द्यतु नाशयत्वित्यर्थः । २ सत्तयासंततं–इ० पा० ।

तन्मय हो मेरी रक्षा करै ॥ ३४ ॥ आपका निर्मित विश्व आनंद करता है, त्यागतेही अशुचि होजाता है, उसके संग करते हुएभी तुम असंगहो इस कारण तुममें कोई विकार नहीं है ॥ ३५ ॥ पंचभूतके योगसे चैतन्य माननेवाले चार्वाकभी आपहीकी उपासना करते हैं सौगत बुद्धिसे तुमको क्षणभंगुर मानते हैं ॥ ३६ ॥ जिन देवतावाले तुमको शरीरका परिणामी मानते हैं, सांख्यवाले प्रकृतिसे परे तुमहींको पुरुष मानते हैं ॥ ३७ ॥ जो पूर्वजोंके कहे जन्मादिसे रहित आनंद लक्षण है उसीको उपनिषद्वाले ब्रह्म

त्वत्सृष्टंमोदतेविश्वंत्वत्त्यक्तमशुचिर्भवेत् ॥ तत्संगतोप्यसंगस्त्वंविकारस्तेनतेनहि ॥ ३५ ॥ भूतयोगजचैतन्यं चार्वाकायमुपासते ॥ सौगताब्रुवतेतर्कैस्त्वांबुद्धिंक्षणभंगुराम् ॥ ३६ ॥ शरीरपरिमाणंत्वांमन्यंतोजिनदेवताः ॥ ध्यायंतिपुरुषंसांख्यास्त्वामेवप्रकृतेःपरम् ॥३७॥ जन्मादिरहितःपूर्वैर्यःस्यादानंदलक्षणम्[1] ॥त्वामेवोपनिषद्ब्रह्म चिंतयंतिपरस्परम् ॥ ३८॥ खादिभूतानिदेहश्चमनोबुद्धींद्रियाणिच ॥ विद्याविद्येत्वमेवात्रनान्यस्त्वत्तोऽस्तिकिंचन ॥ ३९ ॥ त्वंधातासर्वभूतानांत्वमेवशरणंमम ॥ त्वमग्निस्त्वंहविःशक्रोहोतामंत्रःक्रियाफलम् ॥ ४० ॥ त्वमस्तिनास्तिवैकुंठत्वामहंशरणंगतः ॥ त्वंकर्मफलदाताचदीक्षितानांक्रियाफलम् ॥ ४१ ॥ त्वंहेतुःसर्वभूतानांत्वमेवशरणंमम ॥ युवतीनांयथायूनियूनांचयुवतौयथा ॥ ४२ ॥

नामसे विचार करते हैं ॥ ३८ ॥ आकाश पंचमहाभूत देह मन बुद्धि इन्द्रिय विद्या अविद्या सब आपहो, आपसे भिन्न कुछ नहीं है ॥ ३९ ॥ आपही सब प्राणियोंके विधाता आपही मुझे शरण देनेवाले अग्नि हवि इन्द्र होता मंत्र क्रिया फल सब तुमहो ॥ ४० ॥ अस्ति नास्ति वैकुंठ तुमहो, तुम्हारी मैं शरणको प्राप्तहूं, तुम कर्मफलके दाता दीक्षितोंके क्रिया फलहो ॥ ४१ ॥ तुम सब भूतोंके

१ पूर्ण चित्सदानंदलक्षणम् ।

युवतियोंको जैसे तरुणमें तरुणको जै तरु । ॥ ४२ । मन ।
हेतु और तुमहीं मुझे शरण देनेवालेहो, यदि पापी दुराचारी आपको प्रणाम करै ॥ ४३ ॥ उसको यमके दूत इस प्रकार नहीं
इसी प्रकार मेरी तुममें प्रीति है, हे हरे ! पाप समूह तभीतक मनुष्यको पीड़ा देते हैं ॥ ४४ ॥ हे नाथ ! जबतक
देखसकते जैसे उल्लू सूर्यको, यह तीन ताप और ॥ ४५ ॥ जिसको गुण जाति शरीरके धर्म स्पर्श नहीं करते जिसको सम्पूर्ण
भक्तिसे आपके चरण कमल का स्मरण नहीं करता

॥ ४२ ॥ नेक्षंतेकिंकरायाम्याउलू
मनोऽभिरमतेतद्वत्प्रीतिर्मेरमतांत्वयि ॥ अपिपापंदुराचारंनरंत्वत्प्रणतंहरे ॥ यावत्स्मरतिनोनाथभक्त्यात्वत्पादपंकजम् ॥
कास्तपनंयथा ॥ तापत्रयमघौघश्चतावत्पीडयतेजनम् ॥४४॥ यंचस्पृशंतिमुनयोगतसंगमो
॥४५॥ यंनस्पृशंतिगुणजातिशरीरधर्मायंनस्पृशंतिगतयस्त्वखिलेंद्रियाणाम् ॥ करणकारणवर्जितेच ॥
हास्तस्मैनमोभगवतेहरयेकरोमि ॥ ४६ ॥ स्थूलंविलाप्यकरणेकरणंनिदानेतत्कारणं यद्ध्यानसंवहनघूर्णवशीकृतांतामै
इत्थंविलाप्यमुनयःप्रविशंतितत्रतस्मैनमोऽस्तुहरयेमुनिसेविताय ॥ ४७ ॥ आलिंग्यशेरतइहात्मसुखैकभाजस्तस्मैनमोस्तुहरयेमुनिसेविताय॥४८॥
श्वर्यचारुगुणिनींसुखमोक्षलक्ष्मीम् ॥

इन्द्रियोंकी गति स्पर्श नहीं करती जिसको संग रहित मुनि मोह को त्याग स्पर्श करते हैं उन भगवान् हरिके निमित्त नमस्कार है
॥ ४६ ॥ स्थूल को करणमें करणको निदान में विलीन करके उसके कारण साधक कारणसे वर्जित कर मुनि इस प्रकार विलीन
करके उसमें प्रवेश करते हैं उन मुनिसेवित हरि भगवान्के निमित्त नमस्कार है ॥ ॥ ४७ ॥ जिनके ध्यान धारणासे अन्तःकरण
वशी करके ऐश्वर्यसे सुन्दर सुख भोग लक्ष्मीको प्राप्त होतेहैं अर्थात् यहां आत्मसुख को प्राप्त हो मुक्तिको आलिंगन किये सोते

हैं इन मुनि सेवित हरिके निमित्त नमस्कारहै ॥४८॥ जन्मादि भावसे विकृत विरह स्वभाव वाले जिसमें कि यह काम क्रोधादिषड्वर्ग शान्तिको प्राप्त होजाता है, तथा जिसको कामदिदोष कभी ताप नहीं देते हैं उन निर्मल वासुदेवको मनसे प्रणाम करताहूं ॥४९॥ जिनके ध्यानकी संगतिसे अविद्याका मल शांत होताहै; जिसके ध्यानकी अग्निसे जगत् नश्वर होजाताहै जिसके ज्ञानकी तलवार संशय रूपी शत्रुको मारती है उन विशदबोध दुःखहारी भगवान्को प्रणाम करताहूं ॥ ५० ॥ सब चराचर जीव हरिके वशमें

जन्मादिभावविकृतेर्विरहस्वभावेयस्मिन्नयंपरिधुनोतिषडूर्मिवर्गः ॥ यंतापयंतिनसदामदनादिदोषास्तंवासुदेवममलंप्रणतोऽस्मिहार्दम् ॥ ४९ ॥ यद्ध्यानसंगतमलंविजहात्यविद्यांयद्ध्यानवह्निपतितंजगदेतिनाशम् ॥ यज्ज्ञानमुल्लसदसिद्यतिसंशयारिंतंत्वांहरिंविशदबोधघनंनमामि ॥५०॥ चराचराणिभूतानिसर्वाणिचहरेर्वशे ॥ यथाऽत्रतेनसत्येनपुरस्तिष्ठतुमेहरिः ॥ ५१ ॥ यथानारायणःसर्वंजगत्स्थावरजंगमम् ॥ तेनसत्येनमेरूपंप्रदर्शयतुकेशवः ॥ ५२ ॥ भक्तिर्यथाहरौमेऽस्तितद्वरिष्ठागुरौयदि ॥ ममास्तितेनसत्येनस्वंदर्शयतुकेशवः ॥ ५३ ॥ तस्यैवंशपथैःसत्यैर्भक्तितस्यानुचिंतयन्॥ दर्शयामासचात्मानंसप्रीतःपुरुषोत्तमः ॥५४॥ ततोदत्त्वावरंतस्यपूरयित्वामनोरथम् ॥ जगामकमलाकांतः स्तुत्याविप्रेणतोषितः ॥ ५५ ॥

हैं, जैसे यहां तो इसी सत्य से भगवान् सन्मुख हो मुझे दर्शन दें ॥ ५१ ॥ जैसे नारायण सब स्थावर जंगम जगत्को व्याप्तकर रहे हैं उसी सत्यसे केशव मुझे दर्शन दें ॥ ५२ ॥ जैसे नारायण में और उनसे अधिक गुरुमें मेरी भक्ति है तो इस सत्य से नारायण मुझको दर्शन दें ॥ ५३ ॥ इस प्रकार शपथोंसे उसकी भक्ति विचारते हुए पुरुषोत्तम भगवान् ने प्रसन्न हो दर्शन दिया ॥ ५४ ॥ फिर उसको वर दे मनोरथ पूर्णकर ब्राह्मणकी स्तुतिसे प्रसन्न हो भगवान् गये ॥ ५५ ॥

कृत कृत्य हो ब्राह्मण भी वासुदेव परायण हुआ और शिष्योंके सहित उस स्तोत्रको जपता उस आश्रममें रहनेलगा ॥ ५६ ॥
जो इस स्तोत्रको कहतें वा जो मनुष्य सुनते हैं उनको अश्वमेधयज्ञका बड़ा फल मिलता है ॥ ५७ ॥ वह ब्राह्मण सदा आत्मवि
याके प्रबोधको प्राप्त होता है, न पापमें बुद्धि होती न अमंगल देखताहै ॥ ५८ ॥ बुद्धि मन इन्द्रिय स्वस्थ होतीहैं उन सब मनुष्यों
की जो इस स्तोत्रका पाठ करते हैं ॥ ५९ ॥ जो मनुष्य श्रद्धासे अर्थ विचारकर तत्पर हो जपते हैं वह यहां पापोंको दूर करके

कृतकृत्योद्विजःसोऽपिवासुदेवपरायणः ॥ शिष्यैःसार्धंजपन्स्तोत्रंतस्मिन्नास्तेतपोवने ॥ ५६ ॥ कीर्तयेद्यइदं
स्तोत्रंशृणुयाद्योऽपिमानवः ॥ अश्वमेधस्ययज्ञस्यप्राप्नोतिविपुलंफलम् ॥ ५७ ॥ आत्मविद्याप्रबोधंचलभते
ब्राह्मणःसदा ॥ नपापेजायतेबुद्धिर्नैवपश्यत्यमंगलम् ॥ ५८ ॥ बुद्धिस्वास्थ्यंमनःस्वास्थ्यंस्वास्थ्यमैंद्रियकं
तथा ॥ नृणांभवतिसर्वेषामस्यस्तोत्रस्यकीर्तनात् ॥ ५९ ॥ विचार्यार्थंजपेद्यस्तुश्रद्धयातत्परोनरः ॥ सविधूये
हपापानिलभतेवैष्णवंपदम् ॥ ६० ॥ लभतेवांछितान्कामान्पुत्रपौत्रान्पशूंस्तथा ॥ दीर्घमायुर्बलंवीर्यंलभते
ससदापठन् ॥ ६१ ॥ तिलपात्रसहस्रेणगोसहस्रेणयत्फलम् ॥ तत्फलंसमवाप्नोतियइमांकीर्तयेत्स्तुतिम् ॥
॥ ६२ ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणांयंयंकामयतेसदा ॥ अचिरात्तमवाप्नोतिस्तोत्रेणानेनमानवः ॥ ६३ ॥

वैष्णव पदको प्राप्त होते हैं ॥ ६० ॥ पुत्र पौत्र पशु तथा वांछित कामनाको प्राप्त होते हैं दीर्घ आयु बल वीर्य पाठ करनेसे सदा
मिलता है ॥ ६१ ॥ सहस्रतिलपात्र और गोदानका जो फल है वह इस स्तुतिके कीर्तन करनेवालेको प्राप्त होताहै ॥ ६२ ॥ धर्म
अर्थ काम मोक्ष जिस जिस वस्तुकी इच्छा करै वह इस स्तोत्रसे बहुत शीघ्र प्राप्त होते हैं, इसमें सन्देह नहीं ॥ ६३ ॥

आचार विनय धर्म ज्ञान तप नीति वुद्धि इसके सुननेसे मनुष्योंको नित्य होतीहै ॥६४॥ महापातक वा उपपातकसे युक्त इस स्तोत्रके पढनेसे शीघ्र शुद्ध होता है ॥ ६५ ॥ प्रज्ञा (वुद्धि) लक्ष्मी यश कीर्ति ज्ञान धर्म वृद्धि होती है दुष्ट ग्रहका फल और सब अशुभ शीघ्र निवारण होते हैं ॥ ६६ ॥ सब व्याधिका हरनेवाला पथ्यरूप सब अरिष्टका नाशक कठिनाईसे तारनेवाला स्तोत्र ब्राह्मणोंको पढना चाहिये ॥ ६७ ॥ नक्षत्र ग्रह पीडा राजचोर भय अग्निचोर भयमें शीघ्र इसको पढै ॥ ६८ ॥ सिंह व्याघ्र

आचारेविनयेधर्मेज्ञानेतपसिसन्नये ॥ नृणांभवतिनित्यंधीरिमांसंशृण्वतांस्तुतिम् ॥ ६४ ॥ महापातकयुक्तो वायुक्तोवाह्युपपातकैः ॥ सद्योभवतिशुद्धात्मास्तोत्रस्यपठनात्सकृत् ॥ ६५ ॥ प्रज्ञालक्ष्मीयशःकीर्तिर्ज्ञानधर्म विवर्धनम् ॥ दुष्टग्रहोपशमनंसर्वाशुभविनाशनम् ॥६६॥ सर्वव्याधिहरंपथ्यंसर्वारिष्टनिषूदनम् ॥ दुर्गतेस्तरणं स्तोत्रंपठितव्यंद्विजातिभिः ॥ ६७ ॥ नक्षत्रग्रहपीडासुराजचोरभयेषुच ॥ अग्निचोरनिपातेषुसद्यःसंकीर्तये दिदम् ॥ ६८ ॥ सिंहव्याघ्रभयंनास्तिनाभिचारभयंतथा ॥ भूतप्रेतपिशाचेभ्योराक्षसेभ्यस्तथैवच ॥ ६९ ॥ पूतनाजृंभकेभ्यश्चविघ्नेभ्यश्चैवसर्वदा ॥ नृणांकचिद्भयंनास्तिस्तवेह्यस्मिन्प्रकीर्तिते ॥७०॥ वासुदेवस्यपूजांयः कृत्वास्तोत्रमुदीरयेत् ॥ लिप्यतेपातकैर्नासौपद्मपत्रमिवांभसा ॥ ७१ ॥ गंगादिपुण्यतीर्थेषुयास्नानैर्नाप्यतेग तिः ॥ तांगतिंसमवाप्नोतिपठन्पुण्यामिमांस्तुतिम् ॥ ७२ ॥

और अभिचार (टोटका) का भय नहीं होता भूत प्रेत पिशाच राक्षसोंसे भय नहीं होता ॥ ६९ ॥ पूतना जृंभक तथा अन्य विघ्नोंसे उनको भय नहीं होता जो इस स्तोत्रको पढते हैं ॥ ७० ॥ जो वासुदेवकी पूजा कर इस स्तोत्रको पढै वह पातकोंसे लिप्त नहीं होता जैसे पद्मपत्र जलसे ॥७१॥ गंगादि पुण्यतीर्थोंमें स्नानमे जो गति है वह गति इस स्तुतिके पाठसे मिलतीहै ॥७२॥

॥ ७३ ॥ चार वे की तीन आवृत्तिका जो
एक दो तीन वा सर्व कालमें जो इसको पढै वह अक्षय सुख पाता
फल है वह फल एकवार इस स्तोत्रके पढने से मनुष्य को प्राप्त होताहै ॥ ७४ ॥ अक्षय धन प्राप्त होकर स्त्रीजनों का प्यारा
होताहै श्रद्धा से नारायण को स्मरण करने से इस लोकमें सत्कार पाता है ॥ ७५ ॥ सदा सम्पत्तिसे युक्त होकर विपत्ति को प्राप्त
नहीं होता उस स्तोत्र का पढनेवाला इन्द्रियोंके वशीभूत नहीं होता ॥ ७६ ॥ अलक्ष्मी कालकर्णी दुःस्वप्न दुर्विचिन्तना इस

चतुर्णामपिवेदानां त्रिरावृत्त्याचयत्फलम् ॥ तत्फलंलभतेस्तोत्रमधीयानःसकृन्नरः ॥ ७४ ॥ अक्षय्यंधनमाप्नोतिस्त्रीणांभवति वल्लभः ॥ पूजांविंदतिलोकेऽस्मिञ्छ्रद्धयासंस्मरन्हरिम् ॥ ७५ ॥ सर्वदासंपदायुक्तोविपदंनैवगच्छति ॥ गोभिर्नह्रियतेस्तोत्रंनित्यंयःकीर्तयेद्धियत् ॥ ७६ ॥ अलक्ष्मीकालकर्णीचदुःस्वप्नंदुर्विचिंतितम् ॥ सद्योनश्यंति भक्तानामेतंसंशृण्वतांस्तवम् ॥ ७७ ॥ प्रातरुत्थाययोऽधीतेशुचिर्विष्णुपरायणः ॥ अक्षय्यंलभतेसौख्यमिह लोकेपरत्रच ॥ ७८ ॥ देवद्युतिप्रणीतंवैविष्णुप्रीतिकरंशुभम् ॥ विष्णुप्रसादजननंविष्णुदर्शनकारकम् ॥ ७९ ॥ योगसारमिदंनामस्तोत्रंपरमपावनम् ॥ यःपठेत्सततंभक्त्याविष्णुलोकंसगच्छति ॥ ८० ॥

एककालंद्विकालंवात्रिकालंवापियःपठेत् ॥ सर्वदासर्वकालेपुसोऽक्षयंसुखमश्नुते ॥ ७३ ॥

स्तोत्रके सुनतेही यह भक्तोंकी व्याधी दूर होती है ॥ ७७ ॥ प्रातःकाल उठ विष्णु परायणहो पवित्रतासे जो इसको पढते हैं इस
लोक और परलोक में अक्षय सुख को लेते हैं ॥ ७८ ॥ यह देवद्युतिका निर्मित स्तोत्र विष्णुकी प्रीति करनेवालाहै विष्णुकी प्रसन्नता
और उन के दर्शन करानेवाला है ॥ ७९ ॥ यह योगसार नामक परम पावन स्तोत्र है जो निरन्तर भक्तिसे पढै वह विष्णुलोकको

जाता है ॥ ८० ॥ इस प्रकार यह स्तोत्र गुह्य और पापका नाशक है अब इसके आगे पिशाचमोचन कहता हूं ॥ ८१ ॥ इति श्रीपद्मे माघमाहात्म्ये पंडितज्वालाप्रसादमिश्रकृतभाषाटीकायां योगसारस्तोत्रकथनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ ॥ वसिष्ठजी बोले सुनो जो पिशाच उसने वनमें मुक्त किया पहले द्रविडदेशमें चित्ररथ नामवाला एक राजा था ॥ १ ॥ वह चंद्रवंशी महा वीर शूर शस्त्र अस्त्रका पारगामी गजवाजी रथोंके समूहसे सम्पन्न सदा विक्रमी ॥ २ ॥ जिसका कोश सुवर्ण और नाना

इतितेकथितं स्तोत्रंगुह्यंपापप्रणाशनम् ॥ अतऊर्ध्वंप्रवक्ष्यामिपिशाचस्यविमोचनम् ॥ ८१ ॥ ॥ इति श्रीपद्म पुराणेमाघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेयोगसारस्तोत्रकथनंनामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ ॥ वसिष्ठ उवाच ॥ ॥ श्रूयतांयेपिशाचाश्चमोचितास्तेनतद्वने ॥ आसीद्राजाचित्रनामाद्राविडेविषयेपुरा ॥ १ ॥ सोमान्वयेमहावीरःशूरःशस्त्रास्त्रपारगः ॥ गजवाजिरथौघैश्चसंपन्नोविक्रमीसदा ॥ २ ॥ स्वर्णैर्नानाविधैरत्नैः पूर्णकोशोमहाधनः ॥ मध्येनारीसहस्रस्यसदाक्रीडतितत्परः ॥३॥ स्त्रैणःकामीसदालुब्धश्चंडकोपःसपार्थिवः॥ नकरोतिवचोधर्म्यंसचिवैःसमुदीरितम्॥४॥विष्णुंनिंदतिसोऽत्यर्थंवैष्णवान्द्वेष्टिसर्वदा॥कोऽसौविष्णुःक्वदृष्टोसौ क्वचास्तेकेनकीर्त्यते ॥५॥ इत्थंनसहतेविष्णुंसराजादैवमोहितः ॥ नारायणंभजंतेयेतान्पीडयतिकोपितः॥६॥

रत्नोंसे पूर्ण था सहस्र नारियोंके बीचमें सदा क्रीडा करताथा ॥ ३ ॥ स्त्रीलुब्ध कामी लोभी महाक्रोधी वह राजा मंत्रियोंके कहे धर्मयुक्त वचन कभी नहीं मानता था ॥ ४ ॥ विष्णुकी निंदा विष्णु भक्तोंका सदा द्वेष करताथा, कौन विष्णु किसने देखा है कहां है कौन उसको कहता है ॥ ५ ॥ इस प्रकार दैव मोहित हुआ वह राजा विष्णुको नहीं सहसकता था, जो नारायणका भजन

करते उनको पीडा देताथा क्रोध करताथा ॥ ६ ॥ न ब्राह्मण न वेद न वैदिक कर्म न व्रत न दानदेनेवालेको माने इस प्रकार पाखं डस्थितिमें स्थित था ॥ ७ ॥ अनीतिसे कठिन दण्ड देकर प्रजाको पीडित करताथा निठुर निर्दयी क्रूर पुण्यकर्मसे पराङ्मुख ॥ ८ ॥ आचारहीन हरि द्वेषी अग्निहोत्र तथा क्रियासे दीन दूसरे कालकी समान वह अपने प्रजाकी शासना करताथा ॥ ९ ॥ तब बहुत दिनोंके उपरान्त राजा मृत्युको प्राप्त हुआ वैदिक विधानसे उसकी ऊर्ध्व दैहिक क्रिया न हुई

नब्राह्मणान्नवेदांश्चवैदिकंकर्मनव्रतम् ॥ नदानंमन्यतेदातुंपाखंडस्थितिसंस्थितः ॥ ७ ॥ अनीत्याचंडदंडै श्चप्रजापीडांकरोतिसः ॥ निष्ठुरोनिर्दयः क्रूरःपुण्यकार्यपराङ्मुखः ॥ ८ ॥ च्युताचारोऽच्युतद्वेष्टाच्युताग्निश्च च्युतक्रियः ॥ सोऽनुशास्तिजनंभूपःकालरूपइवापरः ॥ ९ ॥ ततोबहुतिथेकालेसराजापंचतांगतः ॥ वैदिकेन विधानेनलेभेनैवोर्ध्वदैहिकम् ॥ १० ॥ अथकिंकरयूथेनपीड्यमानोभृशंतदा ॥ अयःकीलमयेमार्गेतप्तसि कताप्रपूरिते ॥ ११ ॥ चंडार्करश्मिसंतप्तेवृक्षच्छायाविवर्जिते ॥ तप्तांगारप्रपूर्णेचवह्निज्वालासमाकुले ॥ १२ ॥ लोहतुंडैश्चकाकोलैर्हन्यमानःसुदारुणैः ॥ वृकैर्दंष्ट्राकरालैश्चश्वभिर्घोरैश्चभक्षितः ॥ १३ ॥ शृण्वन्क्रंदितमन्ये षांनृणांकिल्बिषकारिणाम् ॥ जगामपार्थिवोलोकमंतकस्यभयावहम् ॥ १४ ॥

॥ १० ॥ तब यमराजके दूत समूहोंसे पीडित हुआ लोहेकी कीलोंवाले मार्गमें जहां जलता रेता पूर्ण था ॥ ११ ॥ सूर्यकी किरणें जहां ताप देतीथीं वृक्षोंकी छायासेहीन तप्त अंगारसे पूर्ण अग्निकी ज्वालासे समाकुल ॥ १२ ॥ लोह तुण्ड और दारुण काकोलसे वारंवार पीडित कराल डाढोंवाले वृक और घोर कुत्तोंसे भक्षित ॥ १३ ॥ जहां दूसरे पापियोंका घोर शब्द सुनाई आताथा, इस

प्रकार वह राजा यमलोकको गया ॥ १४ ॥ हे राजन् ! उस लोककी उसकी दुस्सह गति सुनो क्रमसे वह राजा नरक से नरकको गया ॥ १५ ॥ प्रथम महा दुःखदायक तामिस्र नरकको गया, फिर निरन्तर दुःखवाले अंधतामिस्रमें गया ॥ १६ ॥ फिर महा रौरव रौरवनामक महानरकमें गया, और कालसूत्र महानरक में गया ॥ १७ ॥ फिर दुस्तर दुःखमें मग्न होनेसे वह राजा मूर्च्छित हुआ फिर चैतन्य होने पर तापन संप्रतापन नरकको गया ॥ १८ ॥ दुःखकी अग्निसे व्याकुल हो राजा नरकोंमें पडा, प्रपात संपात

शृणुभूपगतिंतस्यतस्मिँल्लोकेसुदुःसहाम् ॥ निरयान्निरयंयातःपर्यायेणसभूपतिः ॥ १५ ॥ आदौप्रयातस्तामिस्रेदारुणेभूरिदुःखदे ॥ पुनश्चैवांधतामिस्रेयत्रदुःखंनिरंतरम् ॥ १६ ॥ गतोऽनंतरमत्युग्रंमहारौरवरौरवम् ॥ नरकंकालसूत्रंचमहानरकमेवच ॥१७॥ पश्चान्मग्नःसभूपालोदुस्तरेदुःखमूर्च्छितः ॥ संजीवनेमहावीचौतापनेसंप्रतापने ॥ १८ ॥ पपातनरकंराजादुःखाग्निक्लिष्टमानसः ॥ संतापंचसकाकोलंकुड्मलंपूतिमृत्तिकम् ॥ ॥ १९ ॥ लोहशंकुंमृगीयंत्रंपंथानंशाल्मलिंनदीम्॥ प्रविष्टोऽथमहाभीमंदुर्दर्शंदुर्गमंपुनः ॥ २० ॥ असिपत्रवनंचैवलोहचारकमेवच ॥ एवमेतेषुसर्वेषुपतित्वापापकृन्नृपः ॥ २१ ॥ अविंदन्नरकेघोरेसंतापंयातनामयम् ॥ विष्णुप्रद्वेषघोषेणयुगानामेकविंशतिः ॥ २२ ॥ भुक्त्वाचयातनांयाम्यांनिस्तीर्णनरको नृपः ॥ समयाद्गिरिराजेतुपिशाचोऽभूत्तदामहान् ॥ २३ ॥

काकोल कुड्मल पूति मृत्तिका ॥ १९ ॥ लोहशंकु मृगीयंत्र शाल्मली मार्ग शाल्मलीनदी फिर महा भीम दुर्गम मार्गमें प्रविष्ट हुआ ॥ २० ॥ असिपत्र वन लोहचारक इत्यादि सभी नरकोंमें वह पापी राजा गया ॥ २१ ॥ और नरकोंमें घोर यातनाको प्राप्त हुआ विष्णुके द्वेष से इक्कीसयुग तक ॥ २२ ॥ यातना भोग कर नरकसे निकला गिरिराजपर महापिशाच योनिको प्राप्त

हुआ ॥२३॥ उस वनमें भूखा हुआ सब दिशाओंमें फिरताथा उसको मेरु पर्वतमें भी तो भोजन जल नहीं दीखताथा ॥२४॥ एक समय वह शोक पीडित पिशाच भ्रमण करता हुआ कोई होनहार सत्फलके प्राप्त करनेको प्लक्षप्रस्रवण वनमें प्रविष्ट हुआ ॥२५॥ बहेडेके पेडकी छायामें वह दुःखी आश्रय होकर हाय ! मैं मरा ऐसे घोर शब्द करने लगा ॥ २६ ॥ क्षुधा तृषासे व्याकुल होनेके कारण मेरा सब प्राणियोंसे द्रोह है इस दुरंत जन्मका अन्त किस प्रकार होगा ॥ २७ ॥ प्रथम इस

सम्भ्राम्यतिदिशःसर्वावनेतस्मिन्बुभुक्षितः ॥ नपश्यत्यशनंतोयंमेरावपिसदागिरौ ॥ २४ ॥ कदाचित्पर्यटन्सोथपिशाचःशोकपीडितः ॥ प्लक्षप्रस्रवणारण्यंप्रविष्टोभाविसत्फलम् ॥ २५ ॥ विभीतकतरुच्छायांसमाश्रित्यसुदुःखितः ॥ हाहतोस्मीतिचाक्रंदद्घोरमुच्चैःपुनःपुनः ॥ २६ ॥ क्षुत्तृड्भ्यांमुह्यमानस्यसर्वभूतद्रुहोमम ॥ जन्मनोस्यदुरंतस्यकथमंतोभविष्यति ॥ २७ ॥ आदौपापसमुद्रेस्मिन्दुःखकल्लोलमालिनि ॥ करावलंबनंकोऽद्यनिमग्नस्यप्रदास्यति ॥ २८ ॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेपिशाचाख्यानंनामविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ ॥ वसिष्ठउवाच ॥ ॥ इत्थंतस्यपिशाचस्यरोदनंदीनचेतसः ॥ देवद्युतिरधीयानःशुश्रावकरुणामयम् ॥१॥ समागम्यततस्तत्रपिशाचंचददर्शसः ॥ विकरालमुखंभीमंपिशंगनयनंकृशम् ॥२॥ ऊर्ध्वमूर्धजकृष्णांगंयमदूतमिवापरम् ॥ ललज्जिह्वंचलंबोष्ठंदीर्घजंघंशिराकुलम् ॥ ३ ॥

दुःख समूह भरे पापके समुद्रमें डूबते हुए कौन मुझको हाथका अवलम्बन देगा ॥ २८ ॥ इति श्रीपाद्मे माघमाहात्म्ये भाषाटीकायां विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ ॥ वसिष्ठजी बोले इस प्रकार उस पिशाचका दीन स्वरसे रोदन वेद पाठ करते हुए देवद्युतिने सुना ॥ १ ॥ तब वहां आकर उसने पिशाचको देखा, विकराल मुख भयंकर नेत्र कृश शरीर ॥ २ ॥ ऊपरको जिसके बाल

कृष्ण शरीर दूसरे यमदूतकी समान चलायमान जीभ और ओष्ठ दीर्घ जंघा और शिरसे व्याप्त ॥ ३ ॥ दीर्घ अंघ्रि सूखी तुण्ड गढेकी समान आंखें सूखा पंजर शरीर था कौतुकसे प्राप्त होकर मुनिने उससे पूंछा ॥ ४ ॥ देवद्युति बोले तुम भीषण आकारवाले कौन हो क्यों दारुण रोते हो यह अवस्था क्यों हुई कहो मैं तुम्हारा क्या प्रिय करूं ॥ ५ ॥ मेरे आश्रममें प्रविष्ट होकर प्राणी दुःख नहीं पातेहैं वैष्णव भवन की समान सब आनंद करते हैं ॥६॥ हे भद्र ! तुम शीघ्र इस दुःखका कारण कहो बुद्धिमान् अर्थके

दीर्घांघ्रिंशुष्कतुंडंचगर्ताक्षंशुष्कपंजरम् ॥ अथामुंकौतुकाविष्टःपप्रच्छमुनिपुंगवः ॥ ४ ॥ देवद्युतिरुवाच ॥ कोसित्वंभीषणाकारः कुतोरोदिपिदारुणम् ॥ अवस्थेयंकुतोब्रूहिकिंचाहंकरवाणिते ॥ ५ ॥ ममाश्रमप्रविष्टाहिदुःखभाजोनजंतवः ॥ मोदंतेकेवलंसर्वेवैष्णवेभवनेयथा ॥ ६ ॥ वदत्वंसत्वरंभद्रदुःखस्यैतस्यकारणम् ॥ कालक्षेपंनकुर्वंतिप्राप्तेर्थेहिमनीषिणः ॥ ७ ॥ ॥ वसिष्ठउवाच ॥ ॥ श्रुत्वैतद्वचनंप्रीतःपिशाचस्त्यक्तरोदनः ॥ उवाचदीनयावाचाप्रश्रयावनतस्तदा ॥ ८ ॥ ॥ पिशाचउवाच ॥ ॥ सर्वांगव्यापिसंतापंजहारत्वद्वचोमम ॥ ग्रीष्मेदावानलोद्भूतंवर्षन्मेघइवाचले ॥ ९ ॥ यन्मेऽस्तिसुकृतंकिंचित्तेनदृष्टोऽसिमेद्विज ॥ नह्यसंचितपुण्यानांसद्भिरेकत्रसंगमः ॥ १० ॥ इत्युक्त्वाकथयामासपूर्ववृत्तांतमात्मनः ॥ विष्णुद्वेषप्रदोषेणदशामेतामहंगतः ॥ ११ ॥

प्राप्त होनेमें कालक्षेप नहीं करते हैं ॥७॥ वशिष्ठ बोले यह वचन सुनकर वह पिशाच रोदन त्याग कर दीन और नम्र होकर यह वचन कहने लगा ॥८॥ पिशाच बोला मेरे सम्पूर्ण अंगमें व्यापी तापको तुम्हारे वचनने हरण कर लिया ॥९॥ कोई मेरा बडा सुकृत है इस कारण तुम्हारा दर्शन हुआ बिना पूर्व जन्मके पुण्यके सत्पुरुषोंका दर्शन नहीं होता ॥ १० ॥ ऐसा कह अपना

दशाको प्राप्त हुआ हूं ॥११॥ प्राणान्तके समय
वृत्तान्त कथन करता हुआ कि, विष्णु भगवानसे द्वेष करनेके निमित्त मैं इस दशाको प्राप्त हुआ हूं ॥११॥ प्राणान्तके समय
जिनका नाम स्मरणकर मनुष्य मुक्त हो जाते हैं हे द्विज ! मुझ पापिष्ठीका सदा उन हरिसे द्वेष रहा ॥१२॥ जो प्राणियोंको
पालन करता है जिससे त्रिलोकीमें धर्म प्राप्त होता है जो भूतोंका अन्तरात्मा है उसमें मेरा द्वेष हुआ ॥१३॥ जो कर्मका फल वेदोंमें
गाया जाता है जो तप द्वारा ब्राह्मणोंसे यजन किया जाता है उनसे मैंने द्वेष किया ॥ १४ ॥ क्रिया त्यागी वनवासी निस्संगचारी

यन्नामप्राणान्मुक्तोहिस्मृत्वाविष्णुपदंव्रजेत् ॥ पापिष्ठोहिहरौतस्मिन्ममद्वेषोभवद्द्विज ॥ १२॥ यःपालयतिभूता
निधर्मंयातिजगत्त्रये ॥ योंतरात्माचभूतानांतस्मिन्द्वेषोममाभवत् ॥ १३ ॥ कर्मणाफलदोयोत्रसर्ववेदेषुगी
यते ॥ तपोभिरिज्यतेविप्रैःसमेद्वेषवशंगतः ॥१४॥ त्यक्तक्रियैःप्रियारण्यैर्निःसंगैकचरैश्चयः ॥ वेदान्तियतिभि
श्चित्यःसमेद्वेषीहरिर्द्विज ॥ १५ ॥ ब्रह्मादयःसुराःसर्वेयोगिनःसनकादयः ॥ मुक्त्यर्थमर्चयंतीहसविष्णुर्द्वेषितो
मया ॥ १६ ॥ आदौमध्येऽवसानेयोविश्वधातासनातनः ॥ यस्यनैवादिमध्यांताःसमेद्वेषपदंययौ ॥ १७ ॥
यन्मयासुकृतंकर्मकृतंप्राक्तनजन्मनि ॥ विष्णुद्वेषाग्निनादग्धंतत्सर्वंभस्मासादभूत् ॥ १८ ॥ कथंचिदस्य
पापस्यसीमांद्रक्ष्यामिचेदहम् ॥ मुक्त्वानारयणंनान्यमर्चयिष्यामिदेवताम् ॥ १९ ॥

वेदान्ती यतियोंसे जो चिन्तनीय हैं उन हरिभागवान्से मैंने द्वेष किया ॥१५॥ ब्रह्मादि सब देवता योगी सनकादिक मुक्तिके निमित्त
जिनका चिन्तन करते हैं उन हरिसे मैंने द्वेष किया ॥ १६ ॥ आदि मध्य अंतमें जो विष्णु विधाता सनातन हैं, जिसके आदि
मध्य अंत नहीं है उनसे मैंने द्वेष किया ॥ १७ ॥ जो मैंने पूर्व जन्ममें सुकृत किया वह विष्णुके द्वेषकी अग्निसे सब भस्म
होगया ॥ १८ ॥ किसी प्रकार यदि मैं इस पापका अंत देखूं तो नारायणको छोडकर फिर कभी अन्य देवताका पूजन नहीं

करूं ॥ १९ ॥ विष्णुके द्वेषसे मैंने बहुत कालतक नरक यातना भोगी, अब नरकसें निकलकर मैं पिशाची योनिको प्राप्त हुआ ॥ २० ॥ अब कर्म मंत्रसे तुम्हारे आश्रममें प्राप्त हुआ हूं, जो तुम्हारे दर्शन रूप सूर्यसे दुःखमय अंधकार दूर हो गयाहै ॥२१॥ जहां मरण प्राप्ति बंधन लक्ष्मी सुख और वधूहो इन स्थानोंपर कर्म गलेमें भुजा डालकर ले जाता है ॥ २२ ॥ इस समय आप पिशाचनाशक उत्तम कर्म कहिये, परोपकार करनेमें देर करनेवाले धन्य नहीं होते ॥ २३ ॥ देवद्युति बोले—अहो ! यह माया

विष्णुद्वेषाच्चिरंभुक्त्वामयानरकयातनाम् ॥ निरयान्निःसृतःसोऽहंपैशाचींयोनिमागतः ॥२०॥ अधुनाकर्ममंत्रैःकैरथानीतस्त्वदाश्रमम् ॥ यत्त्वद्दर्शनार्कान्मेनष्टंदुःखमयंतमः ॥ २१ ॥ प्राप्यतेमरणंयत्रबंधनंश्रीःसुखंवधूः ॥ सतत्रनीयतेस्वेनकर्मणागलहस्तिना ॥ २२ ॥ इदानीमुचितंकर्मब्रूहिपैशाच्यनाशनम् ॥ परोपकारकार्येहिनधन्यामंदगामिनः ॥ २३ ॥ ॥ देवद्युतिरुवाच ॥ ॥ अहोमुष्णातिमायेयंदेवासुरनृणांस्मृतिम् ॥ ययादेवेष्वपिद्वेषोजायतेधर्मनाशनः ॥ २४ ॥ स्रष्टापालयिताहंताजगतांयोमहेश्वरः ॥ आत्माचसर्वभूतानांतंमूढोद्वेष्टिकः कथम् ॥ २५ ॥ भवंतिसर्वकर्माणिसफलानियदर्पणात् ॥ तद्भक्तिविमुखोमर्त्यःकोनयातीहदुर्गतिम् ॥ २६ ॥ श्रुतिस्मृतिसदाचारविहितंकर्मकेवलम् ॥ सेवितव्यंचतुर्वर्णैर्भजेन्नारायणंसदा ॥ २७ ॥

देवता, असुर, मनुष्य, सबको मोहित करती है सबकी स्मृतिको नष्ट करती है, कि जिनका देवताओंसे भी धर्म नाशी द्वेष होता है ॥ २४ ॥ जगत्के पालन उत्पत्ति नाशक महेश्वर जो कि सब भूतोंके आत्माहैं मूढ उनसे भी द्वेष करते हैं ॥ २५ ॥ जिनके अर्पण करनेसे सब कर्म सफल होतेहैं उनकी भक्तिसे विमुख होकर कौन मनुष्य दुर्गतिको प्राप्त नहीं होताहै ॥ २६ ॥ श्रुति, स्मृति,

करते सब वर्णोंको वह सेवन करना चाहिये ॥ २७ ॥ अन्यथा
सदाचारसे जो कर्म विधान किया है नारायणका भजन वेदविरुद्ध ग्रन्थोक्त कर्मको त्याग दे ॥ २८ ॥ अपनी बुद्धके काल्पित
विना शास्त्रकी सेवासे वह नरकको जाताहै इस कारण केवल लोकनाशके निमित्त हैं ॥ २९ ॥ जो विष्णु वेद तप सद्ब्राह्म
ग्रन्थ मूर्खोंको छलते हैं, वह कल्याणके मार्गमें विघ्न करते नरकको जाते हैं ॥ ३० ॥ अहो सन्मार्गमें निष्ठावली सच्चरित
णोंकी निन्दा करते हैं, इस कारण वे असद्ग्रन्थोंके सेवन करनेसे

अन्यथानिरयंयातिविनाह्यागमसेवनात् ॥ अतोवेदविरुद्धार्थंशास्त्रोक्तंकर्मसंत्यजेत् ॥ २८ ॥ स्वबुद्धिरचितैः
शास्त्रैःप्रतार्यहतुबालिशान् ॥ विघ्नंतिश्रेयसोमार्गंलोकनाशायकेवलम् ॥ २९ ॥ विष्णुंनिंदंतिवेदांश्चतपोनिंदं
तिसद्विजान् ॥ तेनतेनरकंयांतिह्यसच्छास्त्रनिषेवणात् ॥ ३० ॥ अहोसन्मार्गनिष्ठस्यसच्चरित्रस्यभूपतेः ॥
जाताविधिवशाद्दुष्टाकुमार्गाकुलिनीमतिः ॥ ३१ ॥ असतांसंगतिःकस्यमूलंनविपदांभवेत् ॥ श्रुतिस्मृतिसदा
चारविहितंशाश्वतंपरम् ॥ ३२ ॥ स्वस्वधर्मंप्रयत्नेनश्रेयोर्थीहसदाचरेत् ॥ स्वबुद्धिरचितैःशास्त्रैर्मोहयित्वाजनं
जडाः ॥३३॥ हरिशंकरयोःपापायत्रभेदंहिकुर्वते ॥ हरेहरौचधर्मात्मानभेदंहृदयंचरेत् ॥३४॥ अयमेवयथारा
जाद्रविडोनिरयंगतः ॥ द्विषन्नारायणंदेवंदेवदेवंजगत्प्रभुम् ॥ ३५ ॥

राजाको विधि वशसे कुमार्ग आकुलनी मति प्राप्त हुई ॥ ३१ ॥ असत्पुरुषोंकी संगतिसे किसको विपत्ति नहीं प्राप्त होती श्रुति
स्मृति सदाचारसे जो परम शाश्वत कहा है ॥ ३२ ॥ श्रेयकी इच्छा करनेवाला अपने २ धर्ममें सदा आचरण करै मूर्ख अपनी
बुद्धिके रचे ग्रन्थोंसे मनुष्य जनोंको मोहित करते हैं ॥ ३३ ॥ जहां पापी हरि शंकरमें भेद करते हैं वे हरिहरमें भेदकारी पापी
हैं धर्मात्माको चाहिये कि हरिहरमें भेद चिन्ता न करै ॥ ३४ ॥ इसीसे द्रविडका राजा नरकको गया यह नारायण देवके द्वेष

करनेका कारण है ॥ ३५ ॥ इस कारणसे देवता और विशेषकर ब्राह्मणोंमें पुण्यकी इच्छा करनेवाला द्वेष और वेदबाह्य क्रियाको त्यागन करै ॥ ३६ ॥ ऐसा कह मुनिने पिशाचको हितकर वचन कहे हे भद्र माघमासमें तुम प्रयागको गमन करो ॥ ३७ ॥ वहां तुम पिशाचत्वसे अवश्य मुक्त होगे इसमें सन्देह नहीं, वहां स्नान करनेसे स्वर्गकी प्राप्ति होतीहै, यह सनातनी श्रुतिहै ॥ ३८ ॥ वहां मनुष्यके पूर्व जन्मके किये पाप नाश होतेहैं, प्रयागस्नानसे अधिक और कहीं पुण्य नहीं है ॥ ३९ ॥ प्राय

तस्माद्द्वेषंहिदेवेषुब्राह्मणेषुविशेषतः ॥ संत्यजेत्पुण्यकामोनवेदबाह्यांक्रियांत्यजेत् ॥ ३६ ॥ इत्युक्त्वाकथयामास पिशाचायहितंमुनिः ॥ प्रयागंगच्छभोभद्रमाघमासंविचारय ॥ ३७ ॥ तत्रतेनिश्चितामुक्तिःपैशाच्यान्नात्रसंशयः ॥ तत्राप्लुतादिवंयांतिश्रुतिरेषासनातनी ॥ ३८ ॥ विजहातिनरस्तत्रप्राक्तनंकमदुष्कृतम् ॥ प्रयागस्नानतोनास्ति क्वाप्यन्यदाधिकंपरम् ॥ ३९ ॥ प्रायश्चित्तंतपोरूपंदानरूपंक्रियात्मकम् ॥ यागयोगाधिकंविद्धिप्रयागंपापिनामपि ॥ ४० ॥ स्वर्गापवर्गयोर्द्वारंतत्पृथिव्यामपावृतम् ॥ सितासितोद्वेणीयातांहित्वाभुविनापरम् ॥ ४१ ॥ पापनेगडबद्धस्यछेदनेककुठारिका ॥ क्वविष्णुःसूर्यतेजोग्निर्गंगायामुनसंगमः ॥ ४२ ॥ क्ववराकीनृणांतुच्छा पापराशितृणाहुतिः ॥ मलीमसधनध्वंसेयथाशरदिचंद्रमाः ॥ ४३ ॥

श्चित्त तप दानरूप क्रियात्मक योग और योगसे भी अधिक सिद्धि प्रयागमें पापियोंको मिलती है ॥ ४० ॥ यह पृथ्वीमें स्वर्ग अपवर्गका खुलाहुआ द्वारहै, गंगा यमुनाके संगमको छोड भूमिमें अन्य पवित्र स्थान ऐसा नहीं ॥ ४१ ॥ पापरूपी निगड़में बँधेको छेदन करनेको यह एक कुल्हाड़ी है कहां तौ विष्णु सूर्य तेज अग्नि गंगा यमुना का संगम ॥ ४२ ॥ और कहां उसमें

मनुष्याके पापरूपी तृणसमूहकी आहुति, घने अंधकारके दूर होनेसे जैसे चन्द्रमा ॥ ४३ ॥ प्रकाशित होता है इसी प्रकार वेणीमें स्नान करनेसे मनुष्य पापरहित होताहै मैं तुझसे गंगा यमुनाका माहात्म्य नहीं कह सकता ॥ ४४ जिसके जल कणके स्पर्शसे केरलवासी ब्राह्मण मुक्त होगया यह ऋषिके वचन सुन पिशाच परम संतुष्ट मन होकर ॥ ४५ ॥ दुःख रहितकी समान प्रसन्न हो मुनिसे बोले हे महामुने ! केरलदेशी ब्राह्मण कैसे मुक्त होयगा ॥ ४६ ॥

भातिपापक्षयादूर्ध्वंनरोवेणीजलाप्लुतः ॥ सितासितस्यमाहात्म्यमहंवक्तुंनतेक्षमः ॥४४॥ यत्तोयकणसंस्पृष्टो मुक्तःकेरलकोद्विजः ॥ इतिवाक्यमृषेः श्रुत्वापिशाचस्तुष्टमानसः ॥४५॥ मुक्तदुःखइवप्रीतःपप्रच्छप्रणयान्मुनिम् ॥कथंकेरलदेशीयोद्विजोमुक्तोमहामुने ॥ ४६ ॥ एतंकथयवृत्तांतंसंश्रित्यकरुणांमयि ॥ ४७ ॥ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमाहात्म्येव० दि० सं० पिशाचाख्यानंनामैकविंशतितमोऽध्यायः ॥ २१ ॥ ॥ देवद्युतिरुवाच ॥ ॥ पिशाचशृणुपुण्यांमेकथांकथयतःशुभाम् ॥ केरलेवसुनामात्रब्राह्मणोवेदपारगः ॥ १ ॥ दायादैर्हृतवित्तस्तुनिर्धनोबंधुवर्जितः ॥ जन्मभूमिंपरित्यज्यमहादुःखेनदुःखितः ॥ २ ॥ देशाद्देशंपरिभ्राम्यकालेनमहतापुनः ॥ प्रविश्यसमहारण्यमीपद्व्याधिप्रपीडितः ॥ ३ ॥

मेरे ऊपर कृपाकर यह वृत्तान्त कहो ॥ ४७ ॥ इति श्रीपाद्मे महापुराणे माघमाहात्म्ये भाषाटीकायां पिशाचाख्यानं नाम एकविंशतितमोऽध्यायः ॥ २१ ॥ देवद्युति बोले हे पिशाच ! सुन मैं पवित्र और पुण्य कथा कहताहूं केरल देशमें वसुनामवाला वेदपारगामी ब्राह्मण था ॥ १ ॥ हिस्सेदार कुटुम्बियोंने उसका धन हरलिया इस्से वह निर्धन और बंधुवर्जित था जन्म भूमिको त्याग महादुःखसे दुःखी हुआ ॥२॥ देश देशमें भ्रमण करते २ कुछ कालमें कुछ व्याधिसे पीडित होकर महावनमें

प्रवेश किया ॥ ३ ॥ तीर्थादिमें गमन करता थका भूखसे दुर्बल विंध्याचल पर्वतमें दुर्भिक्षके कारण मृत्युको प्राप्त हुआ उसका दाह वा और्ध्वदेहिक क्रिया भी न हुई ॥ ४ ॥ इस कर्मविपाकसे उसी सघन पर्वतमें निर्जन वनमें चिरकालतक प्रेतरूप होकर निवास करता रहा ॥ ५ ॥ शीत और धूपसे क्लेशित निराहार जलरहित दिगंबर उपानद रहित पर्वतमें हाहाकार करता हुआ श्वासलेता ॥ ६ ॥ वायु रूपसे वह इधर उधर भ्रमण करताथा उस ब्राह्मणको न कहीं शरण और न सुखकी प्राप्ति हुई ॥ ७ ॥

गच्छंस्तीर्थांतरंश्रांतःक्षुत्क्षामोविंध्यपर्वते ॥ दुर्भिक्षेणमृतिंलेभेनदाहंचौर्ध्वदेहिकम् ॥ ४ ॥ तेनकर्मविपाकेनतत्रैवागिरिगह्वरे ॥ प्रेतीभूतश्चिरंकालमुवासनिर्जनेवने ॥ ५ ॥ शीतातपपरिक्लिष्टोनिराहारोनिरूदकः ॥ दिगंबरोव्युपानत्कोगिराहाहेतिनिःश्वसन् ॥ ६ ॥ इतस्ततःपरिभ्राम्यवायुभूतःसकेरलः ॥ द्विजोनशरणंलेभेनसुखंकुत्रचित्तदा ॥ ७ ॥ संशोचतिस्मदुःखार्तोनैवपश्यतिसद्गतिम् ॥ सर्वदादत्तदानंसभुंक्तेस्वंकर्मणःफलम् ॥ ८ ॥ हविर्जुह्वतिनाग्नौयेगोविंदंनार्चयंतिये ॥ भजंतेनात्मविद्यांयेसुतीर्थविमुखाश्चये ॥ ९ ॥ सुवर्णवस्त्रतांबूलेमणिमन्नंफलंजलम् ॥ आर्तेभ्योनप्रयच्छंतिसर्वेतेकृतहीनकाः ॥ १० ॥ ब्रह्मस्वंचपरस्वंचस्त्रीधनानिहरंतिये ॥ बलेनछद्मनावापिधूर्ताश्चपरवंचकाः ॥ ११ ॥

दुःखसे व्याकुल हुआ शोच करताथा उसने कहीं सद्गतिकी प्राप्ति नहीं देखी सदा दान न देनेके अपने कर्मके फलको भोगता था ॥ ८ ॥ जो अग्निमें आहुति नहीं देते गोविन्दका पूजन नहीं करते जो आत्मविद्याको भजन नहीं करते और सुतीर्थोंसे जो विमुख हैं ॥ ९ ॥ सुवर्ण वस्त्र ताम्बूल मणि अन्न फल जल दुःखीजनोंको जो नहीं देते वे सब हीनकृत्य हैं ॥ ॥ १० ॥ जो ब्राह्मणका धन दूसरोंका धन तथा स्त्री जातिका धन हरण करते हैं, बल वा छलसे वे धूर्त दूसरोंको ठगने

जो अग्निकी वृत्तिवाले हैं बालक बूढे स्त्रीजनाम जा निर्दयता करते हैं सत्य वर्जित
वाले हैं ॥ ११ ॥ दांभिक कुहक चोर जो अग्निकी वृत्तिवाले हैं बालक बूढे, जो अगम्यागामी तथा ग्राम वालोंको
॥ १२ ॥ अग्निलगानेवाले विषदेनेवाले तथा और जो झूठी साक्षी देते हैं, जो अपनी स्त्रीके त्याग करनेवाले जो डरपोक
यजन कराते हैं ॥ १३ ॥ माता पिता भगिनी सन्तान और अपनी स्त्रीके त्याग करते हैं, शरणागतको छोड़ते हैं, गौ भूमिके हत
नास्तिक और धर्मदूषक हैं ॥ १४ ॥ जो युद्धमें स्वामीका त्याग करते हैं, शरणागतको छोड़ते हैं ॥ १२ ॥ अग्निदागरदाये
दांभिकाःकुहकाश्चौरायेचपावकवृत्तयः ॥ बालवृद्धातुरस्त्रीपुनिर्दयाःसत्यवर्जिताः ॥ १२ ॥ पितृमातृस्नुपापत्यस्वदारत्या
चयेचान्येकूटसाक्षिणः ॥ अगम्यागामिनःसर्वेयेचान्येग्रामयाजिनः ॥ १३ ॥ त्यजंतिस्वामिनंयुद्धेत्यजंतिशरणागतम् ॥
गिनश्चये ॥ येकदर्याश्चलुब्धाश्चनास्तिकाधर्मदूपकाः ॥ १४ ॥ त्यजंतिस्वामिनंयुद्धेत्यजंतिशरणागतम् ॥ महाक्षेत्रेपुसर्वेपुप्रतिग्रह
गवांभूमेश्वहंतारोयेचान्येरत्नदूपकाः ॥१५॥ परापवादिनःपापादेवतागुरुनिंदकाः ॥ महाक्षेत्रेपुसर्वेपुप्रतिग्रह
रताश्चये ॥ १६ ॥ परद्रोहरतायेचतथाचप्राणिहिंसकाः ॥ कुप्रतिग्राहिणः सर्वेतेभवंतिपुनःपुनः ॥ १७ ॥
प्रेतराक्षसपैशाचतिर्यग्वृक्षकुयोनिषु ॥ नतेपांसुखलेशोऽस्तिइहलोकेपरत्रच ॥ १८ ॥ तस्मात्त्यक्त्वानिषिद्धार्थं
विहितंकर्मचाचरेत् ॥ यज्ञंदानंतपस्तीर्थंमंत्रंदेवंगुरुंभजेत् ॥ १९ ॥
करनेवाले रत्नोंको दूषण देनेवाले ॥ १५ ॥ पराई निन्दा करनेवाले पापी देवता और गुरुओंकी निन्दा करनेवाले महाक्षेत्रोंमें
प्रतिग्रहके लेनेवाले ॥ १६ ॥ पराये द्रोही प्राणियोंके हिंसक कुत्सित दान लेनेवाले वारंवार जन्म लेते हैं ॥ १७ ॥ प्रेत
राक्षस पिशाच तिरछे चलनेवाले वृक्षोंकी योनिवालोंको इस लोक और परलोकमें सुखका लेशभी नहीं है ॥ १८ ॥ इस कारण
निषिद्ध कर्मको त्यागकर विहित कर्म करना चाहिये; यज्ञ दान तप तीर्थ देवगुरुका भजन करना चाहिये ॥ १९ ॥

कर्मोका विपाक अनेक योनियोंमें दुस्तर जानकर चारों वर्णोंको निरन्तर धर्मका सेवन करना चाहिये॥ २०॥इस प्रकार प्रेतकी गति देख पापके बीजसे उसको हुआजान धर्मोपदेशकर उस्से ब्राह्मणने कहा ॥ २१ ॥ इस प्रकार वह केरलप्रेत पर्वतमें स्थित हुआ बहुत काल बीतनेपर मार्गमें पथिकको देखता हुआ ॥ २२ ॥ वेणीके जलकी दो कुंडी लिये हुए पुण्यश्लोक जनर्दनका चरित्र गाताथा ॥ २३ ॥ उसको देखतेही प्रेतने आनकर मार्ग रोका और अपने शरीरको दिखाकर कहा डरना मत ॥२४॥ हे काम

विपाकंकर्मणांदृष्ट्वायोनिकोटिषुदुस्तरम् ॥ चतुर्भिरपिवर्णैश्चसेव्योधर्मोनिरंतरम् ॥२०॥ इतिप्रेतगतिंदृष्ट्वापाप बीजोत्थितांद्विजः॥ कृत्वाधर्मोपदेशंचपुनस्तस्मैद्विजोब्रवीत् ॥ २१ ॥ इत्थंसकेरलःप्रेतोवर्तमानोगिरौतदा ॥ अतिवाह्यचिरंकालमपश्यत्पथिकंपथि ॥ २२ ॥ वहंतंद्वौकरंडौचवेणीजलयुतौतथा ॥ गायंतंप्रेमतोदेवंपुण्य श्लोकंजनार्दनम् ॥ २३ ॥ तंदृष्ट्वासहसाप्रेतोमार्गरोधंचकारसः ॥ दर्शयामासचात्मानंमाभैषीरित्युवाचसः ॥ ॥ २४ ॥ पानीयंपातुमिच्छामित्वत्तःकार्पाटिकोत्तम ॥ नपास्यसिजलंचेन्मांप्राणायास्यंतिमेदृढम् ॥ इति प्रेतवचःश्रुत्वापांथःप्रत्याहकौतुकात् ॥२५॥ ॥ कार्पाटिकउवाच ॥ ॥ कस्त्वंदुःखाभिभूतस्तुकृशोम्लानो दिगंबरः ॥ २६ ॥ जीवशेषोमुमूर्षुश्चविकृतोभयवर्धनः ॥ नवधूममयाकारश्चंडश्चंचललोचनः ॥२७॥ पद्भ्या मस्पृष्टभूमिस्त्वंनिर्मांसोदरबाहुकः॥ इतितद्वचनंश्रुत्वाप्रेतोवाक्यमथाब्रवीत् ॥ २८ ॥

रथी मैं तुझसे जल पान करनेकी इच्छा करताहूं जो मुझे जल न पिलावेगा तो मेरे प्राण जायँगे ॥ २५ ॥ प्रेतके यह वचन सुन कुतूहलसे वह पथिक बोला तू महाकृश मलिनरूप नग्न कौन है ॥ २६ ॥ जीव शेप मरनेकी इच्छा किये विकृत दर्शन भयकारी नये धूमकी समान आकारवाला चण्ड चंचल नेत्र किये ॥ २७ ॥ पृथ्वीको चरणोंसे न छुयेहुये उदर बाहुमें मांससे हीन है यह

उसके वचन सुनकर प्रेत वचन बोला ॥ २८ ॥ प्रेतने कहा हे धर्मात्मा सुनो मैं तुमसे कहताहूं कि जिस कारणसे ऐसी दशाको प्राप्त हुआहूं मैं दान न देनेवाला लोभी मलिनक्रिय ब्राह्मणहूं ॥ २९ ॥ पराम्नही सदा खाता और इकलाही मीठा भोजन करता न मैंने कभी भिक्षादी न हन्तकार दिया ॥ ३० ॥ न वैश्वदेव किया न कभी बलि दी और न कभी प्यासे प्राणियोंको जलही दिया ॥ ३१ ॥ और पृथ्वीपर विचरण करते कभी अपने पितरोंको तृप्त नहीं किया न कभी श्राद्ध किया न देवताओंका पूजन

॥ प्रेतउवाच ॥ शृणुधर्मिष्ठतेवच्मियेनाहमीदृशोभवम् ॥ ब्राह्मणोऽदत्तदानोहंलोभीचमलिनक्रियः ॥ २९ ॥ परान्नंचसदाभुक्तमेकाकीमिष्टभोजनः ॥ मयादत्तानभिक्षापिहंतकारोनपुष्कलः ॥ ३० ॥ नकृतोवैश्वदेवस्तुप्रक्षिप्तोनवहिर्बलिः ॥ भूतानांतृषार्तानांनहतापयसाचतृट् ॥ ३१ ॥ कदाचित्पितरोनैवतर्पिताअटतामहीम् ॥ नचश्राद्धंकृतंक्वापिपूजितानैवदेवताः ॥ ३२ ॥ वर्षातपपरित्राणंनदत्तंपादरक्षणम् ॥ जलपात्रंनदत्तंचतांबूलंनौपधंमया ॥३३॥ नगृहेवसतिर्दत्तानातिथ्यंकस्यचित्कृतम् ॥ अंधवृद्धाधनानाथदीनाःपानान्नतोर्पिताः ॥३४॥ गवांग्रासोनदत्तोवैनरोगीपरिमोचितः ॥ नदत्तानहुताविप्रपवित्राश्चतिलामया ॥ ३५ ॥ पृथिव्यांतिलदातारो नभवंतितुमद्विधाः ॥ व्यतीपातेनदत्तंहिकिंचित्स्वर्णमहाफलम् ॥ ३६ ॥

किया ॥ ३२ ॥ न कभी छत्री और न पादत्राण प्रदान किये, जलपात्र ताम्बूल औषधि कभी प्रदान न की ॥ ३३ ॥ न किसीको घरमें ठहराया, न कभी किसीका अतिथि सत्कार किया, वृद्ध अनाथ दीनोंको अन्न, जलादिसे कभी संतुष्ट न किया ॥ ३४ ॥ न गौओंको ग्रास दिया न कभी किसी रोगीको मुक्त किया पवित्र तिलादिसे कभी ब्राह्मणोंको तृप्त न किया ॥ ३५ ॥ पृथ्वीमें तिलके

देनेवाले मेरी समान न होंगे, व्यतीपातमें भी मैंने कुछ भी सुवर्णका दान न दिया ॥ ३६ ॥ संक्रान्ति वा सूर्य चंद्रके ग्रहणमें भी मैंने कुछ दान न दिया सम्पूर्ण पर्वही मेरे शून्य रूपसे बीत गये ॥ ३७ ॥ कार्तिककी मुख्य तिथिभी मैंने शून्यतासे बिताई आठों मया आदिमें पितरोंके निमित्त भी मैंने कुछ नहीं दिया ॥ ३८ ॥ मन्वादि और युगादिमें ब्राह्मणोंकी प्रीतिके निमित्त कुछ न किया कार्तिकमें तिल तैलके सहित मैंने दीपक नहीं दिया ॥ ३९ ॥ सौभाग्यरूप और कामनाके देनेवाले माघमासका मैंने स्नान

संक्रांतावुपरागेचनदत्तंसूर्यचन्द्रयोः ॥ पर्वाण्यन्यानिसर्वाणिजग्मुःशून्यानिमेद्विज ॥ २७ ॥ तिथयःकार्तिके मुख्याजातावंध्याःसदामम ॥ पितृभ्योनैवदत्तंवाअष्टकासुमघासुच ॥ २८ ॥ द्विजानांनकृताप्रीतिर्मन्वादिषुयुगादिषु ॥ नदत्तस्तिलतैलेनप्रदीपःकार्तिकेमया ॥ २९ ॥ नस्नातोमाघमासेहंरूपसौभाग्यकामदे ॥ द्विजायवेदविदुषेगौतम्यांसिंहगेगुरौ ॥ ४० ॥ मयासंकल्पितंद्रव्यंनदत्तंपूर्वजन्मनि ॥ नस्नातोहंकृष्णवेण्यांतथाकन्यागतेगुरौ ॥ ४१ ॥ अग्निंप्रज्वाल्यकाष्ठौघैःस्नातानांपौषमाघयोः ॥ शीतार्तानांचविप्राणांनकृतोजाड्यनिग्रहः ॥ ४२ ॥ माधवादिषुमासेषुनदत्तंशीतलंजलम् ॥ मयानारोपितोश्वत्थोन्यग्रोधोनैववर्धितः ॥ ४३ ॥ वंदिगृहान्मयामुक्तिर्नकृताप्राणिनांक्वचित् ॥ नप्राणिभयसंत्रस्तोरक्षितःशरणागतः ॥ ४४ ॥

नहीं किया न वेदपाठी ब्राह्मणके निमित्त गौतमी नदीपर सिंहकी बृहस्पतिमें ॥ ४० ॥ पूर्व जन्ममें मैंने संकल्प कर द्रव्य नहीं दिया कन्याकी बृहस्पतिमें कभी मैंने पवित्र वेणीमें स्नान नहीं किया ॥ ४१ ॥ पौष माघमें स्नान करनेवालोंको तापनेके निमित्त कभी काष्ठ नहीं दिया शीतसे दुःखियोंके निमित्त कभी वस्त्रादि नहीं दिया ॥ ४२ ॥ वैशाख आदि महीनेमें कभी किसीको शीतल जल तक नहीं दिया न मैंने पीपल लगाया न वट लगाया ॥ ४३ ॥ कभी किसी प्राणीकी मैंने बंधनसे मुक्ति न की

प्राणियोंके भयसे कभी शरणागतकी रक्षा न की ॥ ४४ ॥ तीन रात्रितक एकादशी व्रत करके कभी मधुसूदनको प्रसन्न नहीं किया कृच्छ्र अतिकृच्छ्र तथा चान्द्रायण कभी नहीं किया ॥ ४५ ॥ तप्तकृच्छ्र तथा सांतपन अतिकृच्छ्र और इन्द्रादि देवताओंके सेवित व्रत ॥ ४६ ॥ मैंने कभी न सेवन करके देहको शुष्क किया, इस प्रकारसे पूर्व चरित्र मेरा है ॥ ४७ ॥ हे ब्राह्मण देखिये इस जन्ममें मेरी कैसी क्रूरता यह ज्ञानरहित गति पूर्व जन्मके क्रूर कर्मके कारण मुझे प्राप्त हुई है ॥ ४८ ॥

नोपोष्याग्रनिरात्राणितोपितोमधुसूदनः॥ कृच्छ्रातिकृच्छ्रपाराकंतथाचांद्रायणंद्विज ॥४५॥ अथान्यत्तप्तकृच्छ्रं चतथासांतपनानिच ॥ व्रतान्येतानिपुण्यानिजुष्टानींद्रादिभिःसुरैः ॥ ४६ ॥ चरित्वानमयातानिदेहःसंशोपितःपुरा ॥ इत्थंपूर्वभवेवंध्योममजातोद्विजोत्तम ॥ ४७ ॥ पश्यद्विजमहाक्रूरामद्भुतामत्रजन्मनि ॥ गतिंदूरप्रबोधांतुममपूर्वस्यकर्मणः ॥ ४८ ॥ संतिमांसानिमार्गेषुवृकव्याघ्रहतानिवै ॥ फलान्यन्यानिशैलेस्मिञ्छुकैस्त्यक्तानिसर्वतः ॥ ४९ ॥ पुण्यानिचसुगंधीनिफलानिरसवंतिच ॥ मूलानितुसुभक्ष्याणिमृदूनिमधुराणिच ॥ ॥ ५० ॥ नानाविधानितिष्ठंतिमधूनिसुबहून्यपि ॥ स्रोतसांनिर्झराणांचसंतिवारीणिसर्वशः ॥ ५१ ॥ सुलभेषुपदार्थेषुसर्वेष्वेतेषुपर्वते ॥ नेक्षेहमशनंक्वापिदैवेनापिहतंसदा ॥ ५२ ॥ वाताहारेणजीवामियथाजीवंतिपन्नगाः ॥ पुनर्जीवामिभोविप्रदैवयोनिप्रभावतः ॥ ५३ ॥

मार्गोंमें वृक व्याघ्रके खाये हुए मांसादिहैं तोते आदिके खाये फल इस पर्वतमें हैं ॥ ४९ ॥ पुण्य गंधी और रसवाले फल हैं सुभक्ष्य मृदु और मधुर मूल हैं ॥ ५० ॥ विविध प्रकारके और भी बहुतसे मृदु मधुर हैं स्रोत निर्झर और जल बहुत है ॥ ५१ ॥ सब पदार्थ इस पर्वतमें सुलभ हैं परन्तु दैवसे हत होनेके कारण मैं कुछभी नहीं खासकता ॥ ५२ ॥ सर्पोंकी समान

पवनके आहारसे जाताहू फिर हे विप्र ! देवयोनिके प्रभावसे जीताहूं ॥ ५३ ॥ बल प्रज्ञा और मंत्र पौरुष विक्रम तथा मित्रोंके सहायसे भी मनुष्य अलभ्य पदार्थको प्राप्त नहीं करसकता ॥५४ ॥ लाभालाभ सुख दुःख विवाह मृत्यु जीवन भोग रोग वियोगमें एक दैवही कारण है ॥ ५५ ॥ कुरूप कुकुल निंदित मूर्ख कुत्सित आचारसम्पन्न तथा शूरता विक्रमसे हीन दैवके दिये राज्यों को भोगते हैं ॥ ५६ ॥ काने गंजे अभव्य नीतिहीन दुर्गुणसम्पन्न नपुंसकभी प्रारब्धसे राज्यपर स्थित दीखते हैं ॥ ५७ ॥

बलेनप्रज्ञयानित्यंमंत्रपौरुषविक्रमैः ॥ सहायैश्चैवमित्रैश्चनालभ्यंलभतेनरः ॥ ५४ ॥ लाभालाभेसुखेदुःखेविवाहेमृत्युजीवने ॥ भोगेरोगेवियोगेचदैवमेवहिकारणम् ॥ ५५॥ कुरूपाःकुकुलामूर्खाःकुत्सिताचारनिंदिताः ॥ शौर्यविक्रमहीनाश्चदैवाद्राज्यानिभुंजते ॥ ५६ ॥ काणाःखंजाअभव्याश्चनीतिहीनाश्चदुर्गुणाः ॥ नपुंसकाश्च दृश्यंतेदैवाद्राज्येप्रतिष्ठिताः ॥ ५७ ॥ यैर्दत्ताश्चतिलागावोहिरण्यंवसनानिच ॥ गौरीकन्याचयैर्दत्तायैर्दत्ता चवसुंधरा ॥ ५८ ॥ शय्यासनानितांबूलंमंदिराणिधनानिच ॥ भक्ष्यभोज्यानिदत्तानिचंदनान्यगरूणिच ॥ ॥ ५९ ॥ अटव्यांपर्वताग्रेचग्रामेवानगरेपिवा ॥ पुरःपुरश्चतिष्ठंतितेपांभोगाःप्रयत्नतः ॥ ६० ॥ संत्यत्रपर्वते न्येपिराक्षसाबलवत्तराः ॥ राक्षसाश्चपिशाचाश्चपिशाच्यश्चातिदारुणाः ॥ ६१ ॥ कदाचिच्चकथंचिच्चक्कापि यत्रस्वकर्मणा ॥ लभंतेचान्नपानानिपर्यटंतोवनेवने ॥ ६२ ॥

जिन्होंने तिल गौ सुवर्ण वस्त्र दिये हैं जिन्होंने गौरी कन्या और वसुंधरा दान की है ॥ ५८ ॥ शय्या भोजन ताम्बूल मंदिर धन भक्ष्य भोज्य चंदन अगर जिन्होंने दिये हैं ॥ ५९ ॥ वनमार्ग पर्वतका अग्रभाग गांव वा नगरमें आगे २ उनके भोग स्थित हैं ॥ ६० ॥ इस पर्वतपर औरभी बडे बली राक्षस हैं राक्षस पिशाच पिशाची बडी दारुण हैं ॥ ६१ ॥ कभी किसी प्रकार

कोई अपने कर्मसे वनमें फिरतेहुए अन्न पान प्राप्त करते हैं ॥ ६२ ॥ उनसे यह वचन सुनकर कि तुमको भय न हो पवित्र गोवि
न्दके भक्त तुमको वे देखभी नहीं सकते ॥ ६३ ॥ विष्णुभक्ति रक्षाके वर्मवाले नारायणके भक्तको राक्षस प्रेत पूतना न छू
सकते न देख सक्ते हैं ॥ ६४ ॥ भूत वेताल गंधर्व शाकिनी ग्रह रेवती वृद्धरेवती मुखमण्डग्रह ॥ ६५ ॥ यक्ष क्रूर बालग्रह
दुष्ट वृद्धग्रह तथा मातृकाग्रह भयंकर तथा विनायकादिग्रह ॥६६॥ कृत्या सर्प कूष्माण्ड और दूसरे दुष्ट जन्तु हे विप्र पवित्र वैष्णव

इतिश्रुत्वात्रतेभ्यश्चमाभयंभवतांभवेत् ॥ शुचिंगोविंदभक्तंत्वांनतेद्रष्टुमपिक्षमाः ॥ ६३ ॥ विष्णुभक्तितनुत्राणं
नारायणपरायणम् ॥ नस्पृशंतिनपश्यन्तिराक्षसाःप्रेतपूतनाः ॥ ६४ ॥ भूतवेतालगंधर्वाःशाकिन्यश्चार्यका
ग्रहाः ॥ रेवत्योवृद्धरेवत्योमुखमंड्यस्तथाग्रहाः ॥ ६५ ॥ यक्षाबालग्रहाःक्रूरादुष्टावृद्धग्रहाश्चये ॥ तथामातृग्र
हाभीमाग्रहाश्चान्येविनायकाः ॥ ६६ ॥ कृत्याःसर्पाश्चकूष्मांडायेचान्येदुष्टजंतवः ॥ नपश्यंतिपरंविप्रवैष्णवं
ब्राह्मणंशुचिम् ॥ ६७ ॥ शुचिंरक्षंतिभूतानिधर्मिष्ठंपीडयंतिन ॥ रक्षंतिचशुचिंनित्यंग्रहनक्षत्रदेवताः ॥६८॥
गोविंदनामजिह्वाग्रेहृदिवेदस्तुसंस्थितः ॥ शुचिश्चदानशीलश्चत्वंसर्वत्राकुतोभयः ॥ ६९ ॥ एवंब्राह्मणतिष्ठामिभुं
जानःकर्मणःफलम् ॥ नशोचामीतिमत्त्वाहंविमृश्यचपुनःपुनः ॥ ७० ॥

ब्राह्मणको नहीं देखते हैं ॥ ६७ ॥ पवित्रकी सब प्राणी रक्षा करते हैं उसको पीडा नहीं देते हैं ग्रह नक्षत्र देवता पवित्रकी
सदा रक्षा करते हैं ॥ ६८ ॥ जिसकी जिह्वामें गोविन्दका नाम हृदयमें वेद स्थित है पवित्र और दानशील है उसको कहीं भय
नहीं है ॥६९॥ हे ब्राह्मण इस प्रकार कर्मोंका फल भोगताहुआ यहां स्थित हूं वारंवार विचारकर शोच नहीं करताहूं ॥ ७० ॥

जम्बालिनीके किनारे विचरते हुए सारसके वचन सुनकर मैं दुःखी नहीं होता हूं ॥ ७१ ॥ इति श्रीपाद्मे महापुराणे पिशाचवोधोनाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥ ब्राह्मण बोले सारसके कहे वचन तैंने किस प्रकार सुने हैं हे प्रेत वह मेरे सुन्नेकी इच्छा है सो तुम शीघ्र कहो ॥ १ ॥ प्रेत बोला हे कामरथी ! मैं सारसके वचन कहताहूं तुम सुनो इस धूसर नाम कक्षसे एक नदी निकलती है ॥ २ ॥ जिसके श्रेष्ठ जलाशय ताल वृक्ष पारिमित अथाह जलवाले हैं जहां मतवाले हाथी रहते हैं. महाककुभ शोभासे युक्त, स्निग्ध जामनसे

नदुनोमितथातावद्यावज्जंबालिनीतटे॥सारसोदीरितंवाक्यंश्रुतंपर्यटतामया ॥ ७१ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेपिशाचवोधोनामद्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ ॥ ब्राह्मणउवाच ॥ ॥ सारसोदीरितंवाक्यंकीदृशंहिश्रुतंत्वया ॥ तदहंश्रोतुमिच्छामिब्रूहित्वंप्रेतसत्वरम् ॥ १ ॥ ॥ प्रेतउवाच ॥ ॥ ब्रवीमिसारसंवाक्यंशृणुकार्पटिकोत्तम ॥ धूसरानामकक्षेस्मिन्नदीगिरिसमुद्भव ॥ २ ॥ सदाजलाशयोत्तालामत्तदंतिकुलाकुला ॥ महाककुभशोभाढ्यास्निग्धजंबूमनोहरा ॥ ३ ॥ तस्यास्तीरमहंप्राप्तोगाहमानोवनंवनम् ॥ मयितिष्ठतिवैतत्रफलभोजनकाम्यया ॥४॥ वनांतरात्समुड्डीयसारसोलक्ष्मणायुतः ॥ आगत्यपुलिनंनद्याःसेवितंबहुपक्षिभिः ॥ ५ ॥ पीत्वातत्रैवपानीयंरमित्वाभार्ययासह ॥ सुप्तःपक्षपुटेवामेप्रवेश्यचशिरोमुखम् ॥ ६ ॥ एतस्मिन्नंतरेदृष्टःपादपादवतीर्यच ॥ रक्ताननःसुरक्ताक्षोदंडीदृढनखावलिः ॥ ७ ॥

मनोहर ॥३॥ घन वनमें विचरता मैं उस नदीके समीप प्राप्त हुआ, मैं वहां फल भोजन कामनासे स्थित था॥४॥ वनान्तरसे उडकर एक सारसका जोडा वहां आया बहुत पक्षियोंसे सेवित नदीके तटको प्राप्त होकर ॥५॥ वहां पानी पी भार्याके साथ रमण करके बांये पंखमें शिर और मुख प्रवेशकर सोगया ॥ ६ ॥ इसी समय वृक्षसे उतरकर लालमुख लालनेत्र दंड हाथमें लिये दृढ नख ॥ ७ ॥

सोरहाथा वहां बडे वेगसे आया ॥ ८ ॥ और आकर
बडेरोमवाला बडीपूंछ चंचलस्वभाव वानर जहां सारस सोरहाथा वहां बडे वेगसे आया ॥ ९ ॥ वे सब पक्षी उडकर
दृढतासे सारसका चरण पकडलिया यह बहुत पक्षियोंके देखते क्रूर बुद्धिसे दृढता पूर्वक पकडा ॥ ९ ॥ वे सब पक्षी उडकर
अन्यत्र चले गये और सारसी महाडरसे रोतीहुई वहां स्थित हुई ॥१०॥ सारसकी नींद टूटी डरसे उसके नेत्र चलायमान होगये
गिरउठाकर पृथ्वीको देखता हुआ ॥ ११ ॥ उस मारनेकी इच्छा करनेवाले दारुण वानरको देखकर मधुरवाणीसे सारस कहने

लोमशोदीर्घलांगूलश्चलचेष्टोहिवानरः ॥ यत्रासौसारसःसुप्तस्तत्रवेगेनचागतः ॥ ८ ॥ समागत्यचजग्राहसा
रसंचरणेदृढम् ॥ कराभ्यांक्रूरयाबुद्ध्यापश्यतांबहुपक्षिणाम् ॥ ९ ॥ उड्डीयोड्डीयतेसर्वेगताश्चान्यत्रखेचराः ॥
सारसीभीतभीताचविरावान्कुर्वतीस्थिता ॥ १० ॥ सारसोभग्ननिद्रस्तुत्रासाच्चलितलोचनः ॥ अवलोकित
वान्क्षोणींतदोत्ताम्यशिरोधराम् ॥ ११ ॥ विलोक्यवानरंदुष्टंहंतुकामंसुदारुणम् ॥ तदासंभाषयामासगिरामधु
रयाखगः ॥ १२ ॥ अपराधंविनामांत्वंकिंशाखामृगबाधसे ॥ सापराधाजनालोकेवध्यंतेभूमिपैरपि ॥ १३ ॥
नपीडयितुमर्हंतित्वादृशाउत्तमाजनाः ॥ अस्मानहिंसकान्साधून्परवृत्तिपराङ्मुखान् ॥ १४ ॥ जलशैवाल
भक्षांश्चखेचरान्वनवासिनः ॥ स्वदाररतिशीलांश्चपरदाराभिवर्जितान् ॥ १५ ॥

लगा ॥ १२ ॥ हे शाखामृग अपराधके विना तुम मुझको क्यों बाधा देते हो अपराधी मनुष्योंको ही राजाभी बांधते हैं ॥१३॥
तुम सरीसे उत्तम पुरुष किसीको पीडा नहीं देते हैं हम अहिंसक साधु पराईवृत्तिसे विमुख हैं ॥ १४ ॥ जलशैवालके खानेवाले
आकाशचारी वनवासी अपनीही स्त्रीसे प्रेम करनेवाले दूसरोंकी स्त्रीसे विमुख हैं ॥ १५ ॥

हे वानरश्रेष्ठ ऐसेको आपसरीखे पीडा नहीं देते हैं पराये अपवादमें निपुण परम सेवक पक्षियोंको ॥ १६ ॥ और उनमें सर्वथा मुझ निरपराधीको हे वानर शीघ्र छोडदो, मैं तुम्हारा जन्म जान्ताहूं तुम मुझको नहीं जान्ते॥ १७॥वह वचन सुन वानरने सारसको छोड दिया और दूर स्थित होकर वह चपल वानर कहने लगा ॥१८॥ वानर बोला हे सारस ! कह तूं मेरे पुरातन जन्मको कैसे जान्ता है, तू पक्षी ज्ञानहीन और वनचारी है मैं तिर्यक् चारीहूं ॥ १९ ॥ सारसने कहा मैं तुम्हारा जन्म जान्ता हूं मैं जातिस्मर हूं तुम

नपीडयितुमर्हंतित्वद्विधावानरोत्तम ॥ परापवादपैशुन्यान्द्विजान्परमसेवकान् ॥१६॥ शाखामृगविमुंचाशु सर्वथामामनागसम् ॥ जानामितवजन्माहंनत्वंवेत्सितुमामकम् ॥ १७ ॥ इत्याकर्ण्यवचस्तस्यमुमोचसारसं तदा ॥ चपलोवानरःशीघ्रमाहदूरेव्यवस्थितः ॥ १८ ॥ ॥ वानरउवाच ॥ ॥ ब्रूहिरेत्वंकथंवेत्सिममजन्मपुरातनम् ॥ त्वंपक्षीज्ञानहीनश्चातिर्यक्चाहंवनेचरः ॥ १९ ॥ ॥ सारसउवाच ॥ ॥ जानेहंतावकंजन्म जातिस्मरमितिस्फुटम् ॥ त्वंहिविन्ध्याधिपोराजाप्राग्भवेपर्वतेश्वरः ॥ २० ॥ अहंपूज्यतमोविप्रस्तववंशेपुरोहितः ॥ तेनप्रत्यभिजानामित्वांसम्यग्वानरोत्तम ॥ २१ ॥ इमांपालयताभूमिंप्रजाःसर्वाःप्रपीडिताः ॥ त्वया विवेकहीनेनभृशंसंचयताधनम् ॥ २२ ॥ प्रजापीडनतापोत्थवह्निज्वालैस्तुवानर ॥ प्राक्त्वंदग्धःपुनःक्षिप्तः कुंभीपाकेऽतिदारुणे ॥ २३ ॥

प्रथम विंध्याचल पर्वतके राजा थे ॥ २० ॥ और मैं पूजनीय ब्राह्मण तुह्मारे वंशका पुरोहित था हे वानर ! इससे तुमको भली भांति जान्ताहूं ॥ २१ ॥ इस भूमिकी पालना करते तुमने सब प्रजाको पीडा दी तुम विवेकहीनने केवल धनसंग्रह करनेमें मन लगाया ॥ २२ ॥ हे वानर ! प्रजा पीडनके तापसे उठी अग्निकी ज्वालासे तुम पहलेही दग्ध हो चुके थे फिर पीछे दारुण

बारवार दग्ध होने और जन्म लेनेसे नारकी शरीरमें तीस वर्ष तुम्हारे बीत गये ॥ २४ ॥
कुंभीपाकमें डाले गये ॥ २३ ॥ वारवार दग्ध होने और जन्म लेनेसे नारकी शरीरमें तीस वर्ष तुम्हारे बीत गये ॥ २४ ॥ उस नरकसे निकलकर दारुण शब्द करते वारंवार रुदन करते कुंभीपाककी तीव्र ज्वाला और अनेक बाह्य यातना भोगीं ॥२५॥ उस नरकसे निकलकर शेष पापसे अब वानरजन्मको प्राप्त हुए कि मुझको मारनेकी इच्छा करतेहो ॥ २६ ॥ पहले ब्राह्मणके वनके पक्के केलेके फल विना आज्ञाके बलसे तुमने भक्षण करलिये ॥ २७ ॥ देखो उस कर्मका महाफल पाकको प्राप्त होताहै हे वानर । उसीसे तुम

॥ २४ ॥ कुर्वतादारुणाञ्छब्दान्
पुनःपुनश्चदग्धेनजातेनचपुनःपुनः ॥ नारकेणशरीरेणसमास्त्रिंशद्गतंत्वया ॥ २४ ॥ कुर्वतादारुणाञ्छब्दान्
रुदताचपुनःपुनः ॥ कुंभीपाकानलेतीव्राह्यनुभूताश्चयातनाः ॥२५॥ निस्तीर्णनरकोभूयःपापशेषेणसांप्रतम् ॥
प्राप्तोसिवानरंजन्मयेनमांहंतुमिच्छसि ॥ २६ ॥ विप्रस्योपवनात्पूर्वंपक्वरंभाफलानिवै ॥ अननुज्ञाप्यभुक्तानि
त्वयापहृत्यपौरुषात् ॥ २७ ॥ विपाकःकर्मणस्तस्यफलतेपश्यदारुणः ॥ वानरस्त्वंवनेवासोह्यधुनातेनवर्तसे
॥ २८ ॥ अशुभस्यशुभस्यापिपुराविहितकर्मणः ॥ भोगःक्रीडतिभूतेषुनोल्लंघ्यस्त्रिदशैरपि ॥ २९ ॥ इत्थंत्व
ज्जन्मजानामियथावत्सहेतुकम् ॥ प्राप्तःसारसदेहोपिज्ञानेनापरिमोहितः ॥ ३० ॥

वनवासी होकर वर्तते हो ॥ २८ ॥ अशुभ शुभ पहले किये कर्मका प्राणियोंमें भोग क्रीडा करता है वह देवताभी उल्लंघन नहीं कर सकते ॥ २९ ॥ इस प्रकारसे यथावत हेतुसहित तुम्हारे जन्मको जान्ताहूं मैं सारसदेहको प्राप्त होकरभी ज्ञानसे मोहित नहीं हुआ ॥ ३० ॥

प्रेत बोला यह वचन सुन वानरने सारससे कहा आप ठीक जान्ते हो परन्तु यह तो कहो तुम पक्षी कैसे हुये ? ॥ ३१ ॥ इति श्रीपाद्मे माघमाहात्म्ये भाषाटीकायां त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ सारसने कहा यह कर्म कहताहूं जिस्से मेरी दुर्गति हुई जिस्से पक्षियोनिको प्राप्त हुआ हूं वह सब सुनो ॥ १ ॥ पहले तुमने धान्यकी सौखारी परिमाण नर्मदा नदीके किनारे सूर्यग्रहणमें बहुतसे ब्राह्मणोंके निमित्त दी थी ॥ २ ॥ मैंने पुरोहितके मद और लोभसे उन ब्राह्मणोंको वंचित

प्रेतउवाच ॥ ॥ इतिश्रुत्वाकथांविप्रवानरोप्याहसारसम् ॥ सम्यग्वेत्तिभवान्नूनंकथंत्वंपक्षितांगतः ॥ ३१ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेवानरजन्मकथनंनामत्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ सारस उवाच ॥ कथयिष्यामितत्कर्मयेनाहंदुर्गतिंगतः ॥ पक्षियोनिंगतोयेनतत्सर्वंश्रोतुमर्हसि ॥ १ ॥ धान्यंखारि शतंसाग्रमुत्सृष्टंहित्वयापुरा ॥ बहुभ्योब्राह्मणेभ्यश्चनर्मदायांरविग्रहे ॥ २ ॥ पौरोहित्यमदाल्लोभाद्वंचयित्वाद्वि जांस्तथा ॥ किंचिद्दत्त्वातुतेभ्यश्चगृहीतमखिलंमया ॥ ३ ॥ विप्रसाधारणद्रव्यग्रहणोत्पन्नपातकात् ॥ पतितः कालसूत्रेहंनरकेरक्तकर्दमे ॥ ४ ॥ चलत्क्रिमिसुसंपूर्णेदुर्गंधेपूयफेनिले ॥ आनाभेस्तत्रमग्नोऽस्मिलिहन्पूयमधो मुखः ॥ ५ ॥ तथोपरिमहागृध्रैर्भक्ष्यमाणस्तुवायसैः ॥ क्रिमिभिस्तुद्यमानस्तुममदेहोनिरंतरम् ॥ ६ ॥

करके उन्हें कुछ एक देकर शेष सब मैंने लेलीं ॥ ३ ॥ ब्राह्मणोंके साधारण द्रव्य हरण करनेके पातकसे कालसूत्र और रक्त कर्दम नाम नरकमें मैं पतित हुआ ॥ ४ ॥ चलायमान क्रिमियोंसे पूर्ण दुर्गंध रादसे अनिल पवनसे पूर्ण नरकमें नाभिपर्यन्त नीचेको मुखकर मग्न किया गया वही भोजन मिला ॥ ५ ॥ उसके ऊपर महागृध्र और काक तुझको खाते थे, मेरा देह निर

रन्त कीडोंसे नोचा जाताथा ॥ ६ ॥ तब उस शोणितकी पंकमें मैं श्वासरहित होगया एक मुहूर्तभी महाकल्पके समान बीतता था ॥ ७ ॥ तीस सहस्र वर्षतक मुझको यातना भोगनी पडी हे वानर नरकका दुःख मैं कह नहीं सकताहूं ॥ ८ ॥ पौरोहित्य कर्म महाघोर और स्वभावसेही पापका देनेवाला है, देवके द्वारा जीविका ब्राह्मणके द्वारा जीविका ॥ ९ ॥ विशेषकर राजाका दान महाघोर है उससे द्विजाति दग्ध होजाते हैं उनकाभी धन पुरोहित हरण करताहै इससे वह नरकको जाता है ॥ १० ॥ राजा

यातनाश्चानुभूताश्च तस्मिञ्छोणितपंकेहंनिरुच्छासोऽभवंतदा ॥ मुहूर्तोपिमहाकल्पसमोजातोममात्रवै ॥ ७ ॥ यातनाश्चानुभूताश्च समास्त्रिंशधुतंमया ॥ वक्तुंचतन्नशक्नोमिदुःखंवानरनारकम् ॥ ८ ॥ पौरोहित्यंमहाघोरंपापदंचस्वभावतः ॥ देवोपजीवनंयत्रब्राह्मणस्योपजीवनम् ॥ ९ ॥ राज्ञःप्रतिग्रहोघोरस्तेनदग्धाद्विजातयः ॥ तेपामपिहरेद्द्रव्यंपुरोधास्तेननारकी ॥ १० ॥ राजायत्कुरुतेपापंपुरादेहेनधीयते ॥ तस्येतनपुरोधाश्चगीयतेतत्त्वदर्शिभिः ॥ ११ ॥ दैवात्कथमपिप्रातउत्तारोनरकांबुधेः ॥ मयादौदैवयोगेनशकुनित्वमुपस्थितम् ॥ १२ ॥ अपहृत्यपुराकांस्यभाजनंभगिनीगृहात् ॥ आक्षिकायमयादत्तंतेनमेसारसीगतिः ॥ १३ ॥ इयंचब्राह्मणीपूर्वंकांस्यचोरीसुदारुणा ॥ तेनेयंसारसीजाताममभार्यासधर्मिणी ॥ १४ ॥

जो पाप करताहै पहले देहसे उसको यह धारण करताहै इस कारण इसकी पुरोहित संज्ञा है ऐसा तत्त्ववादी कहते हैं ॥ ११ ॥ फिर मैंने प्रारब्धसे किसी प्रकार नरक सागरके पारभी होकर मैंने फिर प्रारब्धवशसे पक्षीका जन्म पाया ॥ १२ ॥ पहले भगिनीके घरसे कांसेका बरतन हरणकर आक्षिक (पासाखेलनेवाले) के निमित्त मैंने दियाथा इस कारण मैं सारस हुआ ॥ १३ ॥ और यह सारसी पहले ब्राह्मणी थी इसने दारुण कांसेकी चोरी की इस कारण यह सहधर्मिणी मेरी भार्या हुई ॥ १४ ॥

हे वानर ! इस प्रकार तुझसे मैंने सब कर्मका फल कथन किया वर्तमान वृत्त यह है अब भविष्य सुन ॥ १५॥ आगेको मैं और तू दोनों हंस होंगे और यह मेरी भार्या सारसीभी हंसी होगी ॥ १६ ॥ हम यथासुख कामरूप देशमें निवास करेंगे फिर कल्याणी योगिनीको प्राप्त होंगे ॥ १७ ॥ फिर हम दुर्लभ मानुषी जन्मको प्राप्त होंगे जहां प्राणी मंगल और उसके विपरीत पनको साधन करते हैं ॥ १८ ॥ इस प्रकार शिव सब प्राणियोंको अपनी मायासे मोहित करते हैं केवल हमहीको नहीं सब जगत्को

इत्थंवानरतेसर्वंकथितंकर्मणःफलम् ॥ वृत्तंचवर्तमानंचभविष्यंशृणुसांप्रतम् ॥ १५ ॥ अहंहंसोभविष्यामित्वं चहंसोभविष्यासि ॥ हंसीयमपिमद्भार्यासारसीचभविष्यति ॥१६॥ देशेचकामरूपेवैस्थास्यामोवैयथासुखम् ॥ योगिनींभाविकल्याणींयास्यामस्तदनंतरम् ॥ १७ ॥ ततश्चमानुषंजन्मप्राप्स्यामोदुर्लभंपुनः ॥ श्रेयस्तद्विप रीतंचप्राणिभिर्यत्रसाध्यते ॥ १८ ॥ एवंसर्वाञ्छिवोजंतून्मोहयित्वास्वमायया ॥ सुखैर्भुनक्तिदुःखैश्चनास्माने वतुकेवलम् ॥ १९ ॥ अयंलोकेप्रवृत्तश्चमार्गोविविधनिर्मितः ॥ धर्माधर्ममयोऽत्यर्थंसुखदुःखफलात्मकः ॥ ॥ २० ॥ सेवितःप्राणिभिः सर्वैःसर्वदावापुनःपुनः ॥ देवासुरनरव्याघ्रक्रिमिकीटजलेचरैः[1] ॥२१॥ नातिक्रांतो हिकेनापिपंथाऽयंदुःखकंटकः ॥ विरक्तान्योगिनोध्यायंविनावेदांतपारगान् ॥ २२ ॥

सुख दुःखसे संयुक्त करते हैं ॥ १९ ॥ इस लोकमें प्रवृत्तिके निमित्त अनेक मार्ग हैं जो धर्म अधर्म करनेवालोंको सुख दुःख देते हैं ॥ २० ॥ सब प्राणियोंको वारंवार धर्मका सेवन करना चाहिये, हे नरव्याघ्र ! देवता असुर कृमि कीट जलचर ॥ २१ ॥ किसीसे भी यह दुःखके कंटकका मार्ग अतिक्रमण नहीं होसकता, विना वेदान्तके पारगामी योगी और विरक्तोंके कोई इस्से

१ कलेवरैरितिपाठः ।

उसका फल जानकर देश काल अनुसार देता है ॥ २३ ॥ इस
नहीं छूटा ॥ २२ ॥ अणु वा गुरु जैसे पुण्य पाप हो ईश्वर उसका फल जानकर देश काल अनुसार देता है ॥ २३ ॥ इस नहीं करते हैं कारण कि बुद्धिमान् होते हैं ॥ २४ ॥
प्रकार विधिविधानके ज्ञाता ईश्वरकी माया जानकर शोच ताप और व्यथा नहीं करते हैं कारण कि बुद्धिमान् होते हैं ॥ २४ ॥ फिर
पूर्व कर्मोंका फल कोई मेट नहीं सकता, उपाय बुद्धिसे हे वानर ! देवताभी नहीं मेट सकते ॥ २५ ॥ पहले तू राजा हुआ फिर
नरकमें पडा अब वानर हुआ आगे भी ऐसे ही योनिमें प्राप्त होगा ॥ २६ ॥ ऐसा मानकर हे वानर ! शोक मतकर इस वनमें

अणोर्वापिगुरोर्वापिपुण्यापुण्यस्यकर्मणः ॥ ददातीहफलंज्ञात्वादेशंकालंमहेश्वरः ॥२३॥ इत्थंविधिविधानज्ञां
मायांज्ञात्वेश्वरस्यच ॥ नशोचंतिनतप्यंतिनव्यथंतिमहाधियः ॥ २४ ॥ नान्यथाशक्यतेकर्तुंविपाकःपूर्वकर्म
णाम् ॥ उपायैःप्रज्ञयावापिशाखामृगसुरैरपि ॥ २५ ॥ पुरात्वंभूपतिर्जातःपश्चाज्जातोसिनारकी ॥ अधुनावा
नरोभूयोजन्मप्राप्स्यसितादृशम् ॥ २६ ॥ इतिमत्वाविशोकस्त्वंशाखामृगयथासुखम् ॥ प्रतीक्षांकुरुकाल
स्यरममाणोऽत्रकानने ॥ २७ ॥ अहमप्येवमीशानमायाबद्धोवनेवने ॥ क्षपयिष्यामिवैजन्मधैर्यमास्थायसा
रसम् ॥ २८ ॥ वानरउवाच ॥ मयात्वंपूजितःपूर्वंनौमित्वामधुनाप्यहम् ॥ जातिस्मरोऽसिजानासिसर्वंमत्पूर्व
दैहिकम् ॥ २९ ॥ तिष्ठसारससारस्याशिवमस्तुसदातव ॥ त्वद्वाक्याद्गतमोहोऽहंविचरिष्यामिसर्वदा ॥ ३० ॥

विचारताहुआ सुखसे कालकी प्रतीक्षा कर ॥ २७ ॥ और मैंभी ईश्वरकी मायामें बद्ध होकर धैर्यको धारणकर यहां समय
व्यतीत करताहूं ॥ २८ ॥ वानरने कहा मैंने तुम्हारी पहले पूजाकी थी अबभी मैं तुमको प्रणाम करताहूं तुम जातिस्मर होनेसे
पूर्व देहकी बात सब जान्ते हो ॥ २९ ॥ हे सारस ! आनन्दपूर्वक रहो सदा तुम्हारा मंगल हो तुम्हारे वाक्यसे मोह रहित हो

मैं भी विचरण करूंगा ॥ ३० ॥ प्रेत बोला हे ब्राह्मण ! यह परम मनोहर परम विचित्र पक्षी और वानरका संवाद मैंने नदीके किनारे सुना ॥ ३१ ॥ तब मुझको भी बोध हुआ और शोकक्षय हुआ अब गंगाजलका परम अद्भुत माहात्म्य ॥ ३२ ॥ देखकर हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! तुमसे गंगाजल मांगताहूं बडी तृष्णासे व्याकुल हुआ प्रेतत्व दूर करनेकी इच्छा करताहूं ॥ ३३ ॥ हे ब्राह्मण ! इसी पर्वतपर मैंने आश्चर्य देखा इस कारण मैं गंगाजलपान करनेकी इच्छा करताहूं ॥ ३४ ॥ एक ग्रामयाजक

॥ प्रेतउवाच ॥ ॥ इमंरम्यंविचित्रंचपावनंपरमंद्विज ॥ पक्षिवानरसंवादंश्रुतंयावन्नदीतटे ॥३१॥ तावन्ममापिबोधोभूत्तेनशोकः क्षयंगतः ॥ इदानींजाह्नवीतोयमाहात्म्यंपरमाद्भुतम् ॥ ३२ ॥ दृष्ट्वात्रब्राह्मणश्रेष्ठत्वांयाचेजाह्नवीजलम् ॥ प्रेतत्वंतर्तुकामोहंतीव्रतृष्णाप्रपीडितः ॥ ३३ ॥ अस्मिन्नेवाचलेदृष्टंमयाश्चर्यंचवैद्विज ॥ गंगातोयस्यतावद्धिपातुमिच्छामितज्जलम् ॥ ३४ ॥ पारियात्रोद्भवःकोपिब्राह्मणोग्रामयाजकः ॥ अयाज्ययाजनाद्धिध्येसंभूतोब्रह्मराक्षसः ॥ ३५ ॥ अस्मत्संगस्यलोभेनस्थितोसौहायनाष्टकम् ॥ तस्यास्थीनिसुपुत्रेणसंचितानिद्विजोत्तम ॥ ३६ ॥ क्षितान्यानीयगंगायांतीर्थेकनखलेऽमले ॥ तत्क्षणादेवमुक्तोऽसौराक्षसत्वात्सुदारुणात् ॥ ३७ ॥ इतिगंगाजलस्नानमहिमामहदद्भुतः ॥ साक्षाद्दृष्टोमयातेनगांगेयंप्रार्थितंजलम् ॥३८॥

पारियात्रका उत्पन्न हुआ यजनके अयोग्योंको यजन करानेसे ब्रह्मराक्षस हुआ ॥३५॥ हमारी संगतिके लोभमें वह आठ वर्षतक रहा हे ब्राह्मण ! उसकी अस्थि उसके पुत्रने संचितकी थी ॥३६॥ और लाकर निर्मल कनखल तीर्थके बीचमें डाली उसी क्षण वह कठिन राक्षसत्वसे छूट गया ॥३७॥ इस प्रकार गंगाजलस्नानकी बडी अद्भुत महिमा है यह मैंने साक्षात् देखी इस कारण मैं गंगाज

लकी प्रार्थना करताहूं ॥ ३८ ॥ पहले जो मैंने तीर्थोंपर बड़े दान लिये थे और जपादि करके उसका प्रतीकार नहीं किया ॥ ३९ ॥ इस कारण मुझ प्रेतको जल और भोजनभी दुर्लभ होगया इस विंध्यपर्वत पर मुझे सहस्र वर्ष बीत गये ॥ ४० ॥ यह सर्व कथा लज्जाको छोड़ तुमसे वर्णन की है धार्मिकश्रेष्ठ ! इस समय शीघ्र जलदानसे ॥ ४१ ॥ कंठमें आयेहुए मेरे प्राणोंको तृप्त करो प्रेतभावमें भी प्राणियोंको जीवन दुर्लभ है ॥ ४२ ॥ सब प्रकार सदा प्राणियोंको शरीरकी रक्षा करनी उचित है

पुरस्ताद्यत्कृतस्तीर्थेमयाभूरिपरिग्रहः ॥ नकृतस्तुप्रतीकारस्तस्यजाप्यादिलक्षणः ॥३९॥ तेनमेप्रेतरूपस्यदुर्लभोदकभोजनम् ॥ सहस्रंयत्रवर्षाणामतीतंविंध्यपर्वते ॥ ४० ॥ इतितेकथितंसर्वंहित्वालज्जांगरीयसीम् ॥ इदानींधार्मिकश्रेष्ठजलदानेनसत्वरम् ॥ ४१ ॥ संतर्पयममप्राणान्कंठमात्रावलंबितान् ॥ दुर्लभंप्रेतभावेपिजीवितंप्राणिनामिह ॥४२॥ शरीरंरक्षणीयंहिसर्वथासर्वदानरैः ॥ नहीच्छंतितनुत्यागमपिकुष्ठादिरोगिणः ॥४३॥ ॥ देवद्युतिरुवाच ॥ ॥ इतितद्वचनंश्रुत्वाविस्मयंपरमंगतः ॥ पथिकश्चिंतयामासकृपांप्रेतेसमुद्वहन् ॥ ४४ ॥ पापपुण्यफलंलोकेप्रत्यक्षंदृश्यतेखलु ॥ देवदानवमानुष्यंतिर्यक्त्वंक्रिमिकीटकम् ॥४५॥ नानायोनिषुजन्मानिनानाव्याधिप्रपीडनम् ॥ मरणंबालवृद्धानामंधत्वंकुब्जतातथा ॥ ४६ ॥

कुष्ठादि रोगी भी शरीर त्यागकी इच्छा नहीं करते ॥ ४३ ॥ देवद्युति बोले इस प्रकार उसके वचनको सुन परम विस्मयको प्राप्त प्रेतपर कृपालु हो वह पथिक विचारने लगा ॥ ४४ ॥ लोगोंको पाप पुण्यका फल प्रत्यक्ष दीखताहै देव दानव मनुष्य तिरछे चलनेवाले जीव कृमि कीट ॥ ४५ ॥ अनेक योनियोंमें जन्म अनेक व्याधियोंकी पीड़ा बालवृद्धोंका मरण अंधा और कुबड़ापन

होना ॥ ४६ ॥ धनी दरिद्र पण्डिताई मूर्खता यह रचना लोकमें नहीं तो कैसे होती ? ॥ ४७ ॥ इस कर्मभूमिमें वे धन्य हैं जो न्यायमार्गसे धन अर्जन करते हैं और सत्पात्रोंको देकर अपना हित साधन करते हैं ॥ ४८ ॥ भूमि रत्न सुवर्ण गो धान्य गृह हाथी रथ घोडे ग्राम सिद्ध अन्न फल जल ॥ ४९ ॥ कन्या दिव्य औषधी अन्न छत्र उपानह श्रेष्ठ आसन शय्या ताम्बूल माला तालके पंखे श्रेष्ठ आसन ॥ ५० ॥ त्रिलोकी जीतनेकी इच्छा करनेवालोंको यह सब देना चाहिये दियाहुवाही

ऐश्वर्यंचदरिद्रत्वंपांडित्यंमूर्खतातथा ॥ एताश्चरचनालोकेभवंतिकथमन्यथा॥४७॥ तेधन्याःकर्मभूमौयेन्यायमार्गार्जितंधनम्॥ सत्पात्रेभ्यःप्रयच्छंतिकुर्वंतिचात्मनोहितम् ॥४८॥ भूमिरत्नहिरण्यानिगावोधान्यंगृहंगजाः॥ रथाश्ववसनग्रामाःसिद्धमन्नंफलंजलम् ॥४९॥ कन्यादिव्यौषधमन्नंछत्रोपानद्वरासनम् ॥ शय्याताम्बूलमाल्यानितालवृंतंवरासनम् ॥५० ॥ सर्वमेतत्प्रदातव्यंलोकत्रयजिगीषुभिः ॥ दत्तंहिप्राप्यतेस्वर्गेदत्तमेवहिभुज्यते ॥ ॥ ५१ ॥ छत्रचामरयानानिवराश्ववरवारणाः ॥ हर्म्याणिवरशय्याश्चगोमहिष्योवरस्त्रियः ॥ ५२ ॥ अन्नभूषणमुक्ताश्चपुत्रादास्योमहाकुलम् ॥ आयुरारोग्यमैश्वर्यंकलाविद्यासुकौशलम् ॥ ५३ ॥ दानस्यैवफलंसर्वंप्राप्यतेभुविमानवैः ॥ तस्माद्देयंप्रयत्नेननादत्तमुपतिष्ठति ॥ ५४ ॥

स्वर्गमें प्राप्त होता और दियाहुवाही भोगाजाता है ॥ ५१ ॥ छत्र चमर यान अच्छे घोडे हाथी महल सुन्दर शय्या गौ महिषी सुन्दर स्त्री ॥ ५२ ॥ अन्न वा रत्न भूषण मोती पुत्र दासी महाकुलमें अन्न आयु आरोग्य ऐश्वर्य कला सब विद्याओंमें कुशलता ॥ ५३ ॥ दानकाही सब फल भूमिमें मनुष्योंको प्राप्त होताहै इस कारण यत्नसे देना चाहिये विना दिया नहीं मिल

१ रत्न-इ० पा० ।

वचन सुन प्रेत बडा आर्त होकर बोला ॥ ५५ ॥ हे पथिक
सकता ॥ ५४ ॥ धर्मनिष्ठ पथिक इस गाथाको गाताहुआ यह वचन सुन प्रेत बडा आर्त होकर बोला ॥ ५५ ॥ हे पथिक
इसमें सन्देह नहीं तुम बडे महात्मा हो तुम मुझे जीवन (जल) दो जैसे मेघ चातकको देताहै ॥ ५६ ॥ इस प्राणदानमें बहुत
देर मत करो तब पथिक न्याय युक्त वचन बोला ॥ ५७ ॥ हे प्रेत ! भृगुक्षेत्रमें मेरे माता पिता स्थित हैं उनके निमित्त यह तीर्थ
राजका जल मैं लायाहूं ॥५८॥ सो बीचमें तैने गंगायमुनाके जलकी प्रार्थना की है न जाने इस धर्मसन्देहमें क्या होगा ॥५९॥

धर्मिष्ठेनतुपांथेनगाथेयंसमगायत ॥ इतिश्रुत्वापुनः प्रेतःप्रोवाचह्यार्तमानसः ॥ ५५ ॥ मन्येधर्मज्ञकल्पोसिपां
थत्वंनात्रसंशयः ॥ देहिमेजीवनंवारिचातकायघनोयथा ॥ ५६ ॥ एतस्मिन्प्राणदानेहिमाविलंबंकुथाबहु ॥
ततःप्रत्याहपांथस्तुवचनंन्यायगर्भितम् ॥ ५७ ॥ भृगुक्षेत्रेशृणुप्रेतपितरौममतिष्ठतः ॥ तदर्थंतीर्थराजस्यमया
वारिसमाहृतम् ॥५८॥ तत्सितासितपानीयंमध्येचप्रार्थितंत्वया ॥ नजानेधर्मसंदेहःकिमत्रममयुज्यते ॥५९॥
वलावलंविचार्यार्थंकरिष्येप्रवलंविधिम् ॥ वेदेभ्योधर्मशास्त्रेभ्योनाहंमानेनकेवलम् ॥ ६० ॥ हयमेधादियज्ञे
भ्यःसर्वेभ्योप्यधिकंमतम् ॥ ऋषिभिर्देवताभिश्चप्राणिनांप्राणरक्षणम् ॥ ६१ ॥ इतिदत्त्वावरंवारिकृत्वाप्रेतस्य
रक्षणम् ॥ पित्रर्थंपुनरादायजलंनेष्यामिपावनम् ॥ ६२ ॥ एषमेप्रवलोभातिशुद्धधर्मप्रदोविधिः ॥ परोपक
रणादन्यत्सर्वमल्पंस्मृतंवुधैः ॥ ६३ ॥

बलावलको विचारकर प्रबल विधिका अनुष्ठान करूंगा मैं केवल वेद और शास्त्रके मानसेही नहीं ॥ ६० ॥ किन्तु अश्वमेध
यज्ञ तथा और सबसे ऋषि और देवताओंसेभी अधिक मैं प्राणियों के प्राणकी रक्षा मानताहूं ॥ ६१ ॥ इस प्रकार श्रेष्ठ जल
देकर इस प्रेतकी रक्षा कर पिताके निमित्त और पवित्र जल लेकर जाऊंगा ॥ ६२ ॥ यही विधि मुझको शुद्ध और प्रबल

विदित होती है परोपकारके करनेके समान और कोई कार्य नहीं ऐसा पंडित कहते हैं और सब इस्से न्यून है ॥ ६३ ॥ परोपकारियोंने प्रसन्नतासे अपने प्राण देदिये हैं जो जल से परोपकार होजाय तो मैंने क्या नहीं पाया ॥ ६४ ॥ दधीचिका कहा यह श्लोक भूमिपर गायाजाता है जो सब धर्ममय सार और सब धर्मात्माओंका सम्मत है ॥ ६५ ॥कि धन और प्राणसेभी पराया उपकार करना चाहिये परोपकारका पुण्य सौ यज्ञोंकी समानहै ॥ ६६ ॥ ऐसा कह गंगायमुनाके स्थानका जल

परोपकारिभिर्दत्ताअपिप्राणानृभिर्मुदा ॥ अद्भिःपरोपकारःस्यात्किंनलब्धंमयापुनः ॥ ६४ ॥ दधीचिनापुरा गीतःश्लोकोयंश्रूयतेभुवि ॥ सर्वधर्ममयःसारःसर्वधर्मज्ञसंमतः ॥ ६५ ॥ परोपकारःकर्तव्यःप्राणैरपिधनैरपि ॥ परोपकारजंपुण्यंतुल्यंक्रतुशतैरपि ॥ ६६॥ इत्युक्त्वाप्रददौतोयंगंगायामुनसंभवम् ॥ प्रेतायप्राणरक्षार्थंसधर्मिष्ठोवरोद्विजः ॥ ६७ ॥ प्रेतःप्रीतोजलंपीत्वाह्यभिषिच्याशिरस्तथा ॥ प्रजहौप्रेतदेहंतंदिव्यदेहोभवत्क्षणात् ॥ ॥ ६८ ॥ तदाश्चर्यमहद्दृष्ट्वानिजगादसकेरलः ॥ अहोविमुक्तःप्रेतत्वाद्वेणीपानीयबिंदुभिः ॥ ६९ ॥ ब्रह्मापिनैव शक्नोतिमन्येवक्तुमपांगुणम् ॥ गङ्गातोयंमहादेवोधत्तेके कथमन्यथा ॥ ७० ॥

उसको देदिया उस श्रेष्ठ ब्राह्मणने प्रेतके प्राण रक्षाको जल दिया तौ ॥ ६७ ॥ प्रेतके प्रसन्न हो जल पिया और उसको शिरपर छिडका उसी समय वह प्रेतदेहको छोडकर दिव्य देह होगया ॥ ६८ ॥ उस बडे आश्चर्यको देखकर वह केरल ब्राह्मण बोला अहो वेणीके किंचित् जलसे यह प्रेतत्वसे छूटगया ॥ ६९ ॥ मैं जानताहूं इस जलके गुण ब्रह्माभी नहीं कहसकते नहीं तो भला

तत्काल प्रयागमें स्नान करनेको गया ॥ ७७ ॥ हे ब्राह्मण ! माघमासमें वह वेणीमें स्नान करनेसे क्षीणपाप होकर पिशाची शरीरको त्यागता हुआ ॥ ७८ ॥ वह द्रविडपति दिव्य देह होकर दोषरहित हो भक्तिसे नारायण देवकी स्तुति करता हुआ॥ ७९॥ गंधर्वोंसे स्तुतिको प्राप्त होकर देवांगनाओंसे पूजित हो उत्तम विमानमें बैठ इन्द्रलोकको गया ॥ ८० ॥ हे विप्र ! यह तुमको पूर्ववृत्तान्त कहा हे द्विज श्रेष्ठ यह इतिहास शीघ्र पापका नाश करती है ॥ ८१ ॥ यह ज्ञान और मोक्ष देती तथा दुर्गति नाश

स्नात्वासितासितेसोऽपिमाघमासेद्विजोत्तम ॥ पिशाचःक्षीणपापस्तुपैशाचींविजहौतनुम् ॥७८॥ दिव्यदेहस्ततोभूत्वाद्राविडोभूपतिस्तदा ॥ स्तुवन्नारायणंदेवंभक्त्यादोषविवर्जितः ॥ ७९ ॥ गन्धर्वैःस्तूयमानस्तुनाकनारीसुपूजितः ॥ उत्तमेनविमानेनपुरंदरपुरंययौ ॥ ८० ॥ इतितेकथितंविप्रपूर्ववृत्तंसकौतुकम् ॥ इतिहासंद्विजश्रेष्ठसद्यःपातकनाशनम् ॥ ८१ ॥ ज्ञानदंमोक्षदंविप्रश्रुतंदुर्गतिनाशनम् ॥ ८२ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणेमाघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेचतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ छ ॥ इतितेकथितंसर्वंपुरावृत्तंसकौतुकम् ॥ इतिहासंद्विजश्रेष्ठश्रुतंदुर्गतिनाशनम् ॥ १ ॥-अधुनातुमयासार्धमिमाःकन्याःसुतश्चते ॥ त्वंचायातुप्रयागंवैसर्वेसद्गतिमीप्सवः ॥ २ ॥ माघस्नानंप्रकुर्मोऽत्रदेवानामपिदुर्लभम् ॥ तत्रमोक्ष्यंतिपैशाच्यंसद्यःपापसमुद्भवम् ॥ ३ ॥

करती है ॥ ८२ ॥ ॥ इति श्रीपाद्मे माघमाहात्म्ये भाषाटीकायां चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ ॥ यह सब तुमसे पुरातन वृत्तान्त कौतुक सहित कहा हे द्विजश्रेष्ठ ! यह दुर्गतिनाशक इतिहास आपने सुना ॥ १ ॥ अब मेरे साथ यह कन्या और तुम्हारा यह पुत्र और तुम सद्गतिके निमित्त प्रयागको चलो ॥ २ ॥ वहां देवताओंकोभी दुर्लभ माघस्नान करेंगे और वहां यह पाप

से उत्पन्न हुए पिशाचपनको त्यागन करेंगे ॥ ३ ॥ महेश बोले इसप्रकार वासिष्ठजीके मुखकमलसे मधुर रस भरी कथा सुन
प्रेमसे पान कर वे सब नरक सागरसे निस्तीर्ण हुये ॥ ४ ॥ उनके साथ वे प्रसन्न हो आकाशमार्गसे चले हे दिलीप ! सितासित तीर्थकी
महिमा श्रवण कीजिये ॥ ५ ॥ शीघ्रही वे अपने दुःसहकामनाकी प्राप्तिके निमित्त आकाशमार्गमें प्राप्त होकर प्रसन्नमनसे उस स्थानमें
पहुँचगये ॥ ६ ॥ तब दयापूर्वक आकाशमें स्थित हो लोमशजीने कहा श्रद्धासे सब कोई तीर्थराजका दर्शन करो ॥ ७ ॥ इस प्रयागमें ज्ञान

महेशउवाच ॥ ॥ एवंवसिष्ठवक्त्राब्जकथामधुरसंमुदा ॥ पीत्वाप्रमुदिताःसर्वेनिस्तीर्णानरकार्णवात् ॥ ४ ॥
प्रस्थितास्तेनसार्धंतेसत्वरंव्योम्निहर्षिताः ॥ दिलीपशृणुतत्सर्वंतत्तीर्थंतुसितासितम् ॥ ५ ॥ सत्वरंव्योममार्गे
णकाममासाद्यदुःसहाः ॥ समागम्यतदातत्रसंहृष्टहृदयाश्वते ॥ ६ ॥ अथोचेलोमशस्तत्रसदयंगगनांगणे ॥
पश्यंतुश्रद्धयासर्वेतीर्थराजमिमंभुवि ॥ ७ ॥ विनाज्ञानंप्रयागेस्मिन्मुच्यंतेसर्वजंतवः ॥ इष्ट्वात्रैवमहायज्ञं
सृष्टुकामःप्रजापतिः ॥ ८ ॥ अवापसृष्टिसामर्थ्यंततःसृष्टिंचकारसः ॥ अत्रनारायणःसस्नौपत्नीकामःसिता
सिते ॥ ९ ॥ अतःसलब्धवाँल्लक्ष्मींभार्याममृतमंथने ॥ उषित्वाचात्रषण्मासंस्नात्वावेण्यांयथेच्छया ॥ १० ॥
त्रिपुरंघातयामासत्रिबाणेनत्रिशूलभृत् ॥ इमानित्रीणिकुंडानिदीप्तान्यजस्रवह्निभिः ॥ ११ ॥

के विनाही सबकी मुक्ति होती है यहां देखकरही ब्रह्माजीने महायज्ञ करनेकी इच्छा की थी ॥ ८ ॥ और यज्ञ करके सृष्टि रचनाकी
सामर्थ्य प्राप्त की थी लक्ष्मीकी इच्छासे इसी तीर्थमें नारायणने स्नान कियाथा ॥ ९ ॥ इसीसे अमृतमंथनके समय उनको
लक्ष्मीभार्याकी प्राप्ति हुई, यहां छःमहीने निवास कर यथेच्छासे वेणीमें स्नानकर ॥ १० ॥ तीन बाणसे शिवजीने त्रिपुरको

तत्काल प्रयागमें स्नान करनेको गया ॥ ७७ ॥ हेब्राह्मण ! माघमासमें वह वेणीमें स्नान करनेसे क्षीणपाप होकर पिशाची शरीरको त्यागता हुआ ॥ ७८ ॥ वह द्रविडपति दिव्य देह होकर दोपरहित हो भक्तिसे नारायण देवकी स्तुति करता हुआ॥७९॥ गंधर्वोंसे स्तुतिको प्राप्त होकर देवांगनाओंसे पूजित हो उत्तम विमानमें बैठ इन्द्रलोकको गया ॥ ८० ॥ हे विप्र ! यह तुमको पूर्ववृत्तान्त कहा हे द्विज श्रेष्ठ यह इतिहास शीघ्र पापका नाश करती है ॥ ८१ ॥ यह ज्ञान और मोक्ष देती तथा दुर्गति नाश

स्नात्वासितासितेसोऽपिमाघमासेद्विजोत्तम ॥ पिशाचःक्षीणपापस्तुपैशाचींविजहौतनुम् ॥७८॥ दिव्यदेहस्ततोभूत्वाद्राविडोभूपतिस्तदा ॥ स्तुवन्नारायणंदेवंभक्त्यादोपविवर्जितः ॥ ७९ ॥ गन्धर्वैःस्तूयमानस्तुनाकनारीसुपूजितः ॥ उत्तमेनविमानेनपुरंदरपुरंययौ ॥ ८० ॥ इतितेकथितंविप्रपूर्ववृत्तंसकौतुकम् ॥ इतिहासंद्विजश्रेष्ठसद्यःपातकनाशनम् ॥ ८१ ॥ ज्ञानदंमोक्षदंविप्रश्रुतंदुर्गतिनाशनम् ॥ ८२ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणेमाघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेचतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ छ ॥ इतितेकथितंसर्वंपुरावृत्तंसकौतुकम् ॥ इतिहासंद्विजश्रेष्ठश्रुतंदुर्गतिनाशनम् ॥ १ ॥ अधुनातुमयासार्धमिमाःकन्याःसुतश्चते ॥ त्वंचायातुप्रयागंवैसर्वेसद्गतिमीप्सवः ॥ २ ॥ माघस्नानंप्रकुर्मोऽत्रदेवानामपिदुर्लभम् ॥ तत्रमोक्ष्यंतिपैशाच्यंसद्यःपापसमुद्भवम् ॥ ३ ॥

करती है ॥ ८२ ॥ ॥ इति श्रीपाद्मे माघमाहात्म्ये भाषाटीकायां चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ ॥ यह सब तुमसे पुरातन वृत्तान्त कौतुक सहित कहा हे द्विजश्रेष्ठ ! यह दुर्गतिनाशक इतिहास आपने सुना ॥१॥ अब मेरे साथ यह कन्या और तुम्हारा यह पुत्र और तुम सद्गतिके निमित्त प्रयागको चलो ॥ २ ॥ वहां देवताओंकोभी दुर्लभ माघस्नान करेंगे और वहां यह पाप

हे मुने ! इन दोनों नदियोंका संगम सुखदायक और पुण्यवर्धक है, इनमें स्नान कर ज्ञानी हो फिर नरकमें नहीं पडते हैं ॥ १८ ॥ इस प्रयागमें ज्ञानके विनाही सब प्राणी मुक्त होजाते हैं हे विप्र ! औरभी पुरातन इतिहास सुनो ॥ १९ ॥ जो सुनेवालोंके सब पाप और सब रोगको दूर करती है, ऋषिके शापसे एक गन्धर्व वायस होगयाथा ॥ २० ॥ वह सितासितके जलमें स्नान करके तत्काल पापसे छूटगया, एक समय इन्द्रके शापसे उर्वशी स्वर्गसे भ्रष्ट हुई ॥ २१ ॥ वहभी स्वर्गकी

अनयोःपुण्यनद्योश्चसंगमसुखदोमुने ॥ अत्रस्नातानपच्यंतेनरकेज्ञानभाविताः ॥ १८ ॥ विनाज्ञानंप्रयागेस्मि न्मुच्यंतेसर्वजंतवः ॥ अन्यच्चश्रूयतांविप्रइतिहासंपुरातनम् ॥ १९ ॥ शृण्वतांसर्वपापघ्नंसर्वरोगविनाशनम् ॥ ऋचीकेनपुराशतोगंधर्वोवायसोभवत् ॥ २० ॥ शापंमुमोचसोत्रैवस्नातःसद्यःसितासिते ॥ वासवस्यतुशापे नस्वर्गाद्भ्रष्टाप्सरोर्वशी ॥२१॥ स्वर्गकामाचसासस्नौलेभेस्वर्गंततोचिरात् ॥ पुत्रंचशंकरंलेभेययातिर्नाहुषोमुने ॥ २२ ॥ पुत्रकामःप्रयागेहिस्नात्वापुण्येसितासिते ॥ धनकामः पुराशक्रः सुस्नातोऽत्रद्विजोत्तम ॥ २३ ॥ धनदस्यनिधीन्सर्वानहारसचमायया ॥ कश्यपोऽत्रतपस्तेपेशिवाराधनतत्परः ॥ २४ ॥ अस्मिंस्तीर्थेभरद्वा जोयोगसिद्धिमवाप्तवान् ॥ अस्मिंस्तीर्थेपुराविप्रयोगेशाःशांतमानसाः ॥ २५ ॥

कामनासे यहां स्नान कर स्वर्गको गई नहुषपुत्र ययातिने यहां स्नानकर मंगलदायक पुत्रको पाया पहले इन्द्रने धनकी कामनासे यहां स्नान कियाथा ॥ २२ ॥ २३ ॥ तब मायासे कुबरेकी ऋद्धि सब हरण करली शिवजीका आराधन पूर्वक कश्यपजीने यहां तप कियाथा ॥२४॥ इसी तीर्थमें भरद्वाजजी योगसिद्धिको प्राप्त हुएथे, हेविप्र ! इसी तीर्थमें शान्तमन योगी

वध कियाथा यह जो अग्निके कुण्ड निरन्तर दीप्त रहते हैं ॥ ११ ॥ यह तृप्तिको प्राप्त हुई अग्नि जिस किसीसे पुष्ट होती है यहीं तेतीस देवता प्रसन्न होकर तृप्त हुए आनंद करते हैं ॥ १२ ॥ यहीं कपालधारी महेश नीलकंठ प्रगट हुए हैं निरंतर सुर असुर जिनकी सेवा करते हैं वटु अंजलिके निमित्त प्राप्त होते हैं ॥ १३ ॥ मृकण्डके पुत्र मार्कण्डेयजी कल्पान्तमें जिनके मुखमें ज्वालासे व्याप्त लोकहोनेमें जिनके मुखमें प्रविष्ट हुए वही यह योगरूपी जनार्दन हैं ॥ १४ ॥

एपतृप्तिंगतोवह्निर्यःकेनापिचपुष्यति ॥ अत्रदेवास्त्रयस्त्रिंशत्तृप्तामुमुदिरेभृशम् ॥ १२ ॥ आविर्भूतोमहेशोत्रनीलकंठःकपालभृत् ॥ अनिशंससुरैःसेव्यआयातोंजलयेवटुः ॥१३ ॥ मृकंडसूनुनाकल्पेप्रविश्ययन्मुखेस्थितम् ॥ लोकेज्वालाकुलेसोयंयोगरूपीजनार्दनः ॥ १४ ॥ सेयंभागीरथीशंभोःसर्वदुःखापहारिणी ॥ सिद्ध्यर्थंसेव्यतेसिद्धैर्भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ॥ १५ ॥ अनिशंभूतिदायाचस्वर्गमार्गैह्यनुत्तमा ॥ स्वर्गहेतुश्चयादेवीसेयंभागीरथीनदी ॥ १६ ॥ यदंभःस्नानमात्रेणवैकर्तनसलोकताम् ॥ लभंतेप्राणिनःसर्वेनदीसायमुनास्वयम् ॥ १७ ॥

वही यह भागीरथी शंभुके सब दुःखकी हरनेवाली है भक्ति मुक्तिकी फलदात्री है सिद्धिके निमित्त सिद्धजन इनका सेवन करते हैं ॥ १५ ॥ यह निरंतर ऐश्वर्यकी दाता और स्वर्गका एकही उत्तम मार्ग है जो स्वर्गके कारणहै वही यह गंगा नदी है ॥१६॥ जिसके स्नानमात्रसे पाप दूर होकर मुक्ति होती है सब प्राणी मनोरथको प्राप्त होते हैं वही यह यमुना नदी है ॥१७॥

शको प्रसन्न करने लगे हे ऋषे ! आपके अनुग्रहसेही यह पापमहासागरके पार हुए ॥ ३३ ॥ हे ऋषि श्रेष्ठ ! इस समय इन बालकोंके योग्य वचन कहिये लोमशजी बोले यह कुमार वेद पढकर अपना नियम समाप्त करचुका तथा युवा है ॥ ३४ ॥ इन अनुराग करनेवाली कन्याओंका पाणिग्रहण करै, तब लोमश और अपने पिताके वचनसे ॥ ३५ ॥ विवाहकी विधिसे ब्रह्मचारी धर्मात्माने शुभद्रव्य और मंत्रोंद्वारा ऋषियोंसे मंगलको प्राप्तहो ॥ ३६ ॥ धर्मसे पांचों कन्याओंका पाणिग्रहण किया तब ये

इदानीमुचितंब्रूहिबालानामृषिसत्तम ॥ लोमशउवाच ॥ कुमारोधीतवेदोऽयंसमाप्तनियमोयुवा ॥ ३४ ॥ आसांतुसानुरागाणांग्रह्णातुकरपंकजम् ॥ ततोलोमशवाक्येनस्वपितुर्वचनात्तदा ॥ ३५ ॥ विवाहविधिनाचाशु ब्रह्मचारीसधार्मिकः ॥ शुभद्रव्यैश्चमंत्रैश्चऋषिभिः कृतमंगलः ॥ ३६ ॥ पंचानामपिकन्यानांपाणिंजग्राहधर्मतः ॥ आनंदिन्यस्तदासर्वाःकन्याः पूर्णमनोरथाः ॥ ३७ ॥ बभूवुःसकुमारश्चसंतुष्टश्चबभूवह ॥ दत्त्वानुज्ञांमुनिःसोथलोमशस्तैर्नमस्कृतः ॥ ३८ ॥ जगामस्वाश्रमंमेरुंपर्वतंसुरसेवितम् ॥ ततोवेदनिधीराजन्सुपाः पंचसुतंतथा ॥ पुरस्कृत्यमुदायुक्तोधनदस्यपुरंययौ ॥ ३९ ॥ इतिनृपवरमाघेस्नानसंजातपुण्यान्मुनिवरवचसाद्राक्तीर्थराजप्रयागे ॥ सकलकलुषमुक्ताःपंचगंधर्वकन्याअलमभिगतलाभात्प्राप्यतर्पंचजग्मुः ॥ ४० ॥

सब कन्या पूर्ण मनोरथ होकर प्रसन्न हुईं ॥ ३७ ॥ और कुमारभी प्रसन्न हुआ वह लोमश मुनि उनको आज्ञा दे और उनसे नमस्कृत हो ॥ ३८ ॥ देवताओंसे सेवित मेरुपर्वतपर अपने आश्रमको गये हे राजन् ! तब वेदनिधि अपने पुत्र और पांचों बहुओंको लेकर प्रसन्नतासे कुबरके पुरको गये ॥ ३९ ॥ हे नृपश्रेष्ठ ! इस प्रकार यह माघस्नानका फल तीर्थराज प्रयागमें एकही

श्वर॥२५॥सनकादिकोंने योगकी फलभूमि प्राप्त की थी; माघमासमें जो गंगा यमुनाके संगममें न्हावे ॥२६॥ वे सब ताराऱूप हैं उनसे वह सब जगत् व्याप्त है, कामी कामनाओंको और मुमुक्षु मुक्तिको प्राप्त होते हैं ॥२७॥ हे द्विजश्रेष्ठ ! प्रयागमें साधक सिद्धि को प्राप्त होते हैं, इस समय मुक्तिकी कामनासे यह कन्या और तुम्हारा पुत्र ॥२८॥ मेरे वचनसे यह सब और तुम भी इसी संगममें स्नान करो वेणीके जलकी सामर्थ्यसे पूर्व समयका पाप नष्ट होजायगा ॥ २९ ॥ इस शापके महाफलकी अखिल

योगस्यफलभूमिंतुलेभिरेसनकादयः ॥ अस्मिन्माघेतुयेस्नातागंगायामुनसंगमे ॥ २६ ॥ ताराऱूपाश्वतेस
र्वैतैर्व्याप्तंसकलंजगत् ॥ विंदंतिकामिनःकामान्मुक्तिंयांतिमुमुक्षवः ॥ २७ ॥ विंदंतिसाधकाःसिद्धिंप्रयागे
हिद्विजोत्तम ॥ सांप्रतंमुक्तिकामास्तुकन्याश्चापिसुतश्चते ॥ २८ ॥ मद्वाक्यादत्रमज्जंतुसर्वेत्वंचसितासिते ॥
प्राक्कालीनाघविध्वंसिवेणीजलबलेनतु ॥ २९ ॥ लभंतामखिलांलक्ष्मींप्राप्तशापामहाफलाम् ॥ एवमार्षवचः
सत्यमतींद्रियमलंघनम् ॥ ३० ॥ श्रुत्वाचोत्कंठचित्तास्तेसर्वेस्नानायचोद्यताः ॥ प्रयागंप्राप्यदुष्प्राप्यंपैशा
च्यंविजहुःक्षणात् ॥ ३१ ॥ विमुक्ताःशापदुःखेनतनुंस्वांस्वांचलेभिरे ॥ दृष्ट्वावेदनिधिःपुत्रंताःकन्यादिव्यरू
पिणीः ॥ ३२ ॥ तुष्टावलोमशंप्रीत्याप्रसन्नेनांतरात्मना ॥ त्वदनुग्रहमात्रेणोत्तीर्णपापमहार्णवः ॥ ३३ ॥

लक्ष्मीको प्राप्त होंगे इस प्रकार ऋषिके सत्य वचन जो अतीन्द्रिय और अलंघनीय हैं ॥ ३० ॥ सुनकर उत्कंठितहो वे सब स्नान करनेको उद्यत हुए दुष्प्राप्य प्रयागको प्राप्त होकर क्षण मात्रमें पिशाचत्व छोड़ते हुए ॥ ३१ ॥ शापके दुःखसे छूटकर अपने २ शरीरको प्राप्त हुए, वेदनिधि अपने पुत्र और उन दिव्य रूप वाली कन्याओंको देखकर ॥ ३२ ॥ प्रसन्नमन हो लोम

विक्रय्यपुस्तकोंकी संक्षिप्त-सूची ।

नाम.	की. रु. आ.
शिवपुराण—बडा—२४००० मूलमात्र—इसमें विद्येश्वरसंहिता २००० रुद्रसंहिता १०५३० शतरुद्रसंहिता २१५० कोटिरुद्रसंहिता २२४० उमासंहिता १८४० कैलाससंहिता, १२४० और वायवीयसंहिता ४००० है. बहुत परिश्रमसे यह अलभ्य ग्रंथ मिलाहै, और बहुत विद्वानोंकी संमतिसे शुद्धकर छापागया है ...	७—०
शिवपुराण—उपरोक्त पं० ज्वालाप्रसाद मिश्रकृत भाषाटीकासमेत	१६—०
शिवपुराणमाहात्म्य—मूल	०—२
ब्रह्मपुराण—संपूर्ण मूल संस्कृत	५—०

नाम.	की. रु. आ.
ब्रह्मांडपुराण—संपूर्ण	५—
आदिपुराणमूल—सम्पूर्णपुराणोंका सार यह आदिपुराण व्यासदेवने २९ अध्यायोंमें वर्णन कियाहै । इसमें सूत और शौनकमुनिके समागमके समय शौनकने सन्ध्याकालका तथा कलियुगके दोषोंका ऐसा विचित्र रूप दर्शायाहै कि पढते २ मन मुग्ध होजाताहै । कृष्ण भगवान्के जन्मसे लेकर उनकी अनेक लीला रामावतारकी चर्चा तथा वैष्णवोंकी उपयोगी अनेक चित्ताकर्षक कथा इसमें लिखीहुईहैं ।	०—१२

वार स्नानसे होता है सो मुनि वचनसे जाना गन्धर्वोंकी पाँचों कन्या सब पापोंसे मुक्त होगईं और अपने मनोरथोंको प्राप्त हो अपने स्थानको गईं ॥ ४० ॥ यह तीर्थमहिमासंयुक्त इतिहास परम पावन है पापनाशका हेतु है जो इसको नित्य सुनतेहैं उनके सब काम पूर्ण होते हैं और धर्मयुक्त हो दुर्लभ वैकुंठको जाते हैं ॥ ४१ ॥ इस पवित्र इतिहासको सुनकर जो वक्ताका पूजन करते

परमिममितिहासंपावनंतीर्थभूतं वृजिनविलयहेतुंयःशृणोतीहनित्यम् ॥ सभवतिखलुपूर्णःसर्वकामैरभीष्टैर्व्रजतिचसुरलोकेदुर्लभोधर्मयुक्तः ॥ ४१ ॥ इतिहासमिमंश्रुत्वापूजयेद्यस्तुपाठकम् ॥ गोभिर्हिरण्यवस्त्रैश्चब्रह्मतुल्योयतोहिसः ॥ ४२ ॥ वाचकेपूजितेयस्माद्विष्णुर्भवतिपूजितः ॥ तस्मात्प्रपूजयेन्नित्यंयदीच्छेत्सफलंभवम् ॥४३॥
इति श्रीपद्मपुराणेमाघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादे गंधर्वकन्यापरिणयोनामपंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

हैं गौ सुवर्ण वस्त्र देते हैं ॥ ४२ ॥ वाचकके पूजनसे वह विष्णुरूप होते हैं जो सफलताकी इच्छा करै वह वक्ताको नित्य पूजन करै ॥ ४३ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे माघमाहात्म्ये वशिष्ठदिलीपसंवादे पण्डित ज्वालाप्रसादमिश्रकृत भाषाटीकायां गन्धर्वकन्यापरिणयोनाम पंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

दोहा—उन्निससेचौअनसुभग, चैत्रकृष्णशशिवार ॥ बुधज्वालाप्रसादने,पूरचोग्रंथविचार ॥ १ ॥
नितप्रतिभजियेरामको, सुमिरणकीजेराम ॥ महावीरभजियेवहुरि, सिद्धहोतसवकाम ॥ २ ॥

इदं पद्मपुराणोत्तरखण्डस्थमाघमाहात्म्यं भाषाटीकान्वितं मुम्बय्यां श्रीकृष्णदासात्मजेन खेमराजेन स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् यन्त्रालयेऽङ्कित्वा प्रकाशितम् । संवत् १९६६, शके १८३१.

विक्रय्यपुस्तकोंकी संक्षिप्त-सूची ।

नाम.	की. रु. आ.
शिवपुराण—बडा—२४००० मूलमात्र—इसमें विद्येश्वरसंहिता २००० रुद्रसंहिता १०५३० शतरुद्रसंहिता २१५० कोटिरुद्रसंहिता २२४० उमासंहिता १८४० कैलाससंहिता, १२४० और वायवीयसंहिता ४००० है. बहुत परिश्रमसे यह अलभ्य ग्रंथ मिलाहै, और बहुत विद्वानोंकी संमतिसे शुद्धकर छापागया है ...	७—०
शिवपुराण—उपरोक्त पं० ज्वालाप्रसाद मिश्रकृत भाषाटीकासमेत	१६—०
शिवपुराणमाहात्म्य—मूल	०—२
ब्रह्मपुराण—संपूर्ण मूल संस्कृत	५—०
ब्रह्मांडपुराण—संपूर्ण	५—
आदिपुराणमूल—सम्पूर्णपुराणोंका सार यह आदिपुराण व्यासदेवने २९ अध्यायोंमें वर्णन कियाहै । इसमें सूत और शौनकमुनिके समागमके समय शौनकने सन्ध्याकालका तथा कलियुगके दोषोंका ऐसा विचित्र रूप दर्शायाहै कि पढते २ मन मुग्ध होजाताहै । कृष्ण भगवान्‌के जन्मसे लेकर उनकी अनेक लीला रामावतारकी चर्चा तथा वैष्णवोंकी उपयोगी अनेक चित्ताकर्षक कथा इसमें लिखीहुईहैं ।	०—१२

नाम.	की. रु. आ.
अग्निपुराण—इसमें शास्त्रकलाओंका संक्षेप वर्णन सर्वदेवताओंकी प्रतिष्ठा लक्षकोटि आदि होम शिल्पशास्त्र, राजधर्म, राजनीति, युद्धरचना, भारतसार, रामायणसार, ईश्वरावतार, सर्वतिथिवारनक्षत्रादि व्रत, पट्प्रयोग, गन्धर्ववेद, भरतशास्त्र, काव्य नाटक भेद, स्त्रीशिक्षा, रत्नादिपरीक्षा, वेदशास्त्रादि बहुतसे विषयोंका अपूर्व वर्णन है	४—०
ब्रह्मवैवर्त्तपुराण—संपूर्ण चारोंखण्ड—जिसमें कृष्णजन्मखण्ड, प्रकृतिखण्ड, गणेशखण्ड, और ब्रह्मखंड इसमें श्रीकृष्णजीके अपूर्व चारित्र कथा स्तोत्रादि और नारदादिकी उत्पत्ति गंगो पाख्यान साविञ्युपाख्यान लक्ष्मीकी उत्पत्ति मनसादेवी उपाख्यानादि वर्णितहैं ...	७—०
ब्रह्मवैवर्त्तपुराण—प्रकृतिखंड, गणेशखंड और ब्रह्मखंड	३—८
ब्रह्मवैवर्त्तपुराण—श्रीकृष्णजन्मखंड श्रीकृष्णचारित्र अपूर्व वर्णित है	३—८
मार्कंडेयपुराण—सप्तशती शान्तनवीटीकासह इसमें मार्कंडेय और जैमिनिका सत्संग और संवाद अप्सराओंपर दुर्वासामुनिका शाप .कंकके मारेजानेपर विद्युतरूप राक्षसका माराजाना । पक्षियोंके जन्म और चारित्र और देवीजीका माहात्म्य संयुक्त है	४—०

इति पद्मपुराणोक्तं

माघमासमाहात्म्यं भाषाटीकासमेतं

समाप्तम् ।